समर्पण

हिन्दी के उन 'सफल समालोचकों' के कुशल करों में
जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिये
'नवरत्न' में दस रत्न घुसेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये 'बिहारी' की,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये
कितने अन्य कवियों की
कृतियों पर
सफ़ाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिये
'दास' को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो 'केशव' की कविता में 'तुलसी' की कविता से
अधिक काव्य-गुण पाते हैं—
अभिनवजयदेव
मैथिलकोकिल
विद्यापति की पदावली
का
यह संक्षिप्त संकलन
उनके नौसिखिये संकलयिता द्वारा
सादर, सविनय और सभय समर्पित।

मैथिल-कोकिल

कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है; इसका परिचय इसीसे मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कविकुलगुरु महर्षि वाल्मीकि की वंदना के लिये जिह्वा खोलनी पड़ी तब उन्होंने यही कहा—

> कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
> आरुह्य कविता-शाखां वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम् ॥

इस एक श्लोक ही में—जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओं में हैं उनका व्यापक निरूपण है—थोड़े-से शब्दों में ही बहुत कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याखया करने के लिये उनको 'मैथिल-कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिली भाषा-राकारजनी के राकेश और कविता-कामिनी के कमनीय कान्त हैं। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल-कान्त पदावली, भावुक-हृदयविमोहिनी भावुकता और नव-नव भावोन्मेषिणी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्हीं गुणों की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है कि केवल मैथिली भाषा को ही आपका गर्व नहीं है, बंगभाषा और हिन्दी-भाषाभाषी भी आपको अपनाने में अपना गौरव समझते हैं, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते हैं। तीन-तीन प्रान्तों में समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता में है, तो आपकी ही कविता में है, अन्य किसी की

कविता को आज तक यह महत्व नहीं प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक प्रान्त में नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रहकर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली में से सरस-से-सरस सुमनों के संग्रह करने में जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने में सुगन्ध हैं। यदि आपलोगों ने इसका समुचित समादर किया तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार में उक्त कविपुंगव की अधिकांश रचनाएँ आपलोगों के कर-कमलों में अर्पित की जायेंगी। उस समय मैं एक वृहत् भूमिका-द्वारा इसी महान् कवि की रचनाओं पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पंक्तियों को लिखकर ही सन्तोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्वविद्यालय
काशी } अयोध्यासिंह उपाध्याय

द्वितीय-संस्करण

हिन्दी-भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र-सटीक संकलन के प्रथम संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का दूसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिताजी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यतः यह श्रीयुत नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों-का-त्यों रहने दिया है; क्योंकि इससे शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त-से हो गये हैं। बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर किया जाय तो कैसे? हाँ, कई स्थानों में मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे, पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्त-लिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूँगा।

टीका में मैंने जहाँ-तहाँ कुछ हेरफेर किया है। समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद-शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के काल की मैथिली

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के संकलन में मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस शारदाचरण मित्र द्वारा प्रकाशित बँगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अतः इन सज्जनों का मैं अत्यन्त अनुगृहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने में उक्त पुस्तक, 'मैथिल-कोकिल विद्यापति', 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' एवं 'मैथिली-दर्पण' से सहायता मिली है; अतः इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एवं कविता-रचना से अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे से संग्रह के लिए एक छोटी किन्तु चोखी भूमिका लिख देने के लिये प० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय का मैं चिर-ऋणी हूँ।

सुहृद्वर बाबू शिवपूजनसहाय, श्रद्धेय पं० जनार्दन झा, श्री जगदीश्वर ओझा, 'मैथिली' सम्पादक बाबू उदितनारायणलाल दास, मित्रवर श्री रामनाथ 'सुमन', प्रिय 'विकल' आदि ने इस संग्रह को उपयोगी बनाने में मेरी सहायता की है, इनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र हैं पुस्तक-भंडार के प्राण आचार्य श्री रामलोचनशरणजी जिनके उत्साह-दान से ही पुस्तक लिखी गई है और जिन्होंने इसे सुरूप और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

श्रीबेनीपुरी

विद्यापति का परिचय

Every reader of this beautiful selection of Vidyapati's poems is sure to be rewarded with delight and pleasure that are the fruit of literay pursuits

—The 'People', Lahore.

प्रस्तुत पुस्तक में विद्यापति के सबन्ध में जितनी जानने योग्य बातें हैं उन सबका बहुत अच्छी तरह विवेचन किया गया है। यह सस्करण बहुत ही अच्छा निकला। पाद टिप्पणियाँ बहुत ही उपयोगी हैं। इस सस्करण की उपयोगिता के विषय में हम केवल यही कह सकते हैं कि हमारे एक मित्र, जो हिन्दी-साहित्य से सर्वथा विरक्त थे इन पादटिप्पणियो की सहायता से 'विद्यापति' का अध्ययन करके ही 'हिन्दी-साहित्य' के उपासक बन गये।

—'माधुरी' (लखनऊ)

जन्मस्थान

विद्यापति का जन्म 'दरभंगा' जिले के 'बेनीपट्टी' थाने के अन्तर्गत 'विसपी गाँव में हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाड़ी उत्तर-पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन 'कमतौल' है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनों से यहीं वास करते थे। इस गाँव का पहला नाम 'गढ़-विसपी' था। इनको यह गाँव, इनके आश्रय-दाता राजा शिवसिंह की ओर से, उपहार स्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है।

स्वस्तिश्रीगजरथपुरात् समस्तप्रक्रियाविराजमानश्रीमद्रामेश्वरीवर-लब्धप्रसादभवानीभवभक्तिभावनापरायणरूपनारायण महाराजाधिराज-श्रीमच्छिवसिंहदेवपादस्समरविजयिनो जरैल तप्पायां 'विसपी' ग्रामवास्तव्य-सकललोकान् भूकर्षकांश्च समादिशन्ति। ज्ञातुमस्तुभवताम्। ग्रामोऽय-मस्माभिः सप्रक्रियाभिर्नवजयदेव महाराजपंडित ठक्कुर श्रीविद्यापतिभ्यः-शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकर्म्मकरिष्यथेति॥ ल० सं० २९३ श्रावण सुदि ७ गुरौ।

इनके वंशधर बहुत दिनों तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु, इधर चार पुस्त पहले वे इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के 'सौराठ' नामक गाँव में बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग, लखिराज के रूप में करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे (पैमाइश) होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरों से छीन लिया गया। उस समय इनके वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिये उपर्युक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र के सम्बन्ध में कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रिअर्सन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य बंगीय अनुसंधानकर्ताओं ने इस दान-पत्र को प्रामाणिक माना है।

'बिसपी' गाँव इनको शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के प्रसिद्ध विद्वेषी पंडित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर 'अति लुब्ध नगर-याचक' नाम से इनका उपहास किया करते थे।

बंगाली नहीं, बिहारी

इन्हें बंग-देशीय सिद्ध करने के लिये भी कोशिश हुई थी।

बात यों है कि इनकी अधिकांश रचनाएँ शृंगार रस से ओतप्रोत हैं। भारतीय शृंगारी कवियों के प्रधान उपास्य देव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और व्रज-भाषा का शृंगार-साहित्य राधाकृष्ण की केलिक्रीड़ाओं से भरा पड़ा है। इन्होंने भी अपने पदों में राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा साहित्य में अन्यत्र मिलना कठिन है।

जिस समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि-कोकिल की काकली मिथिला की गली गली को रस्प्लावित कर बंगाल के श्यामल व्योम-मंडल को गुँजा रही थी। चैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मंत्रमुग्ध हो गये। वे ढूँढ़ ढूँढ़कर इनके पद गाने लगे। इनके अलौकिक पदों को गाते गाते प्रेमावेश में, वे मूर्च्छित हो जाते थे।

चैतन्यदेव भारत के एक अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिये कितने गौरव की बात है।

चैतन्यदेव की शिष्य-परम्परा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदिन बढ़ती गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास, श्रीनिवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताएँ बनाना प्रारम्भ किया।

---

*'गोविन्ददास' मैथिल कवि थे। इनके पदों का सटिप्पणी संग्रह 'गोविन्दगीतावली' नाम से 'पुस्तक भंडार' द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

बाबू नागेन्द्रनाथ गुप्त लिखते हैं—"विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइआछिल, बोध हय कोन देशे कोन कविर तद्रूप हय नाइं। ताहाँरइ भाषा भाँगिया-चूरिया, गड़िया-गठिया, रूप-रस, छन्दोबंध, ठाम-भंगी शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा, ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनोमोहन वैष्णवकाव्यसमूह सृजित हइल।"

श्री त्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य, एम० ए०, बी० एल० ने जो लिखा था उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चण्डीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्ददास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और ब्राह्म रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सब ही उनलोगों की आभा से आलोकित हैं, और उनलोगों का अनुकरण करके कविता-रचना में व्यस्त पाये जाते हैं।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों की रग-रग में प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियों द्वारा गाये जाने के कारण इनके बंगदेशीय पदों का रूप भी ठेठ बँगला हो गया। अब तो बंगाली लोग यह सर्वथा भूल ही गये कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे।'

बंगाली भाई अपनी कुशाग्र बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हैं। उन लोगों ने इनका निवास स्थान भी बंगाल ही में ढूँढ़ निकाला! यही नहीं, 'शिवसिंह' नामक एक बंगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े, 'रानी लखिमा देवी' भी मिल गईं! यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि विद्यापति ठेठ बंगाली थे!

बंगला १२८२ साल में (स्वर्गीय) राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने पहले-पहल 'बंगदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे।' इसके प्रमाण में उन्होंने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये। फिर तो सारे बंगाल में कोलाहल मच गया। विद्यापति पर बंगाली लोग इतने फिदा थे कि उनका अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे।

उस समय एक प्रसिद्ध बंगला-लेखक ने यह अन्दाज लड़ाया था कि विद्यापति बंगाली ही थे—पहले बंगाली लोग मिथिला में विद्याध्ययन को

जाते थे—सम्भव है, विद्यापति यहाँ से विद्याध्ययन को गये हों और वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किया हो और बस गये हों।

किन्तु ये सब गपोड़शाखियाँ अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हर प्रसाद शास्त्री, जस्टिस शारदाचरण मित्र, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त, आदि सभी बंगीय विद्वानों ने यह कबूल कर लिया है कि ये मिथिला-निवासी थे और इन्होंने मैथिली भाषा में कविता की है।

हमें धन्यवाद देना चाहिये श्रीयुत ग्रिअर्सन साहब को, जिन्होंने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

जन्म-काल

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के समय भी निश्चित नहीं हैं। किंवदन्ती तथा स्फुटपदों के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति सम्भव है।

पता तो केवल इसीका लगता है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या शकाब्द १३२४ में देवसिंह मरे थे, उसी साल शिवसिंह राजगद्दी पर बैठे थे, और राजगद्दी पर बैठने के छः महीने के अन्दर उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव उपहार में दिया था।

शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय में विद्यापति का एक पद यों है—

अनल[३]रन्ध्र[९]कर[२]लक्खन नरवइ सक समुद्द[४]कर[२]अगिनि[३]ससी[१]।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ बार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिआ अद्धासन सुरराअ सरू। इत्यादि

बाबू व्रजनन्दन सहाय ने अपने 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' ग्रन्थ में लिखा है कि "बिसपी गाँव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस वर्ष की थी—इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्तिलता' नाम की पुस्तक लिखी थी"। इस प्रकार सहायजी उसे १६ की अवस्था में लिखी

हुई बताते हैं। सहायजी का यह कथन अनुमान-विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है।

सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसलमानो से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये, जहाँ से वे पुनः नहीं लौटे—सम्भवतः वे उसी युद्ध में मारे गये। इतिहास से यह[१] सिद्ध है, और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और शिवसिंह की संगति रही।

विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों? अनुमान की बात जाने दीजिये, इतिहास भी इसके विरुद्ध है।

सहायजी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता 'गणपति ठाकुर' के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते-जाते थे। नैपाल-दरबार के पुस्तकालय में विद्यापतिरचित 'कीर्तिलता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी उन्होंने करा ली थी। उस 'कीर्ति-लता' में लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अतः राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा-वे ऐसी अवस्था के जरूर रहे होंगे कि दरबार में अपने पिता के साथ जा सकें। २६२ लक्ष्मणाब्द में यदि विद्यापति केवल २० वर्ष के थे, तो २५२ लक्ष्मणाब्द में वे राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ-जा सकते थे—उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा!

---

१. 'मिथिला दर्पण' के रचियता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज करने की बात लिखी है। किन्तु 'मिथिलादर्पण' का काल-निर्णय नितांत अशुद्ध जान पड़ता है। यहाँ तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है।—लेखक

बात यों है कि सहायजी को बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री-लिखित 'मिथिला-राज्य की वंशावली' ने धोखा दिया है। खत्रीजी के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४४६ ईस्वी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है[१]। सहायजी ने स्वयं इसका खंडन किया है; क्योंकि विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। यों खत्रीजी ने सहायजी के गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है।

किन्तु एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मानकर भी दूसरी जगह सहायजी ने उसे प्रामाणिक मान लिया है! 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंहदेव का समय खत्रीजी ने १४७० ई० लिखा है। सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है!

जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म संवत् को आगे बढ़ाना सहायजी के लिये जरूरी था। किन्तु सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है, वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास-सिद्ध है।

स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ २० में लिखा है कि नरसिंह-देव के पुत्र धीरसिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत-ग्रंथ की 'सेतु दर्पण' नामक टीका लिखी गई थी, जिसके अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द

---

१. लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न-भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल (२९३ ल० स०) को १४०० ई० माना है, 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' के रचयिता ने इसे १४१२ ई० लिखा है, और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है।—लेखक

में धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये हैं। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० में पड़ता है[1]। सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था, तब उसका पिता १४७० में कैसे राजा हुआ? बस, साफ प्रकट है कि खत्रीजी ने यहाँ भी ४६ वर्ष की गलती की है।

१४२८ में ४६ घटा देने पर १४२४ ई० में नरसिंह का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार, एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है १४२५ में वे मर गये हों और १४२८ में उनके पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पणी' से भी यही पता चलता है।

इसी ४६ वर्ष के फेर में पड़कर जहाँ सहायजी ने केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम उन्हें हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिये आपने जमीन-आसमान का कुलावा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

सहायजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने पृष्ठ २३ में लिखा है कि ३४६ लक्ष्मणाब्द में इनके अपने हाथ से भागवत-पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर 'चंदा झा' के साथ स्वयं 'तरौनी' जाकर उस पुस्तक को देखा था। उस पुस्तक के अंत में लिखा है—"शुभमस्तु सर्वार्थगता ल० सं० ३०९ श्रावण शुदि १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्रीविद्यापतिर्लिपिरियमिति ।" इस ३०९ को ही सहायजी ने भ्रमवश ३४९ मान लिया है!

अब यथार्थ बात सुनिये। वह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है, और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगी।

एशियाटिक सोसाइटी में एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है, जो १३२२ शकाब्द (= २९० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी

---

१ सहायजी की गणना के अनुसार।—लेखक

शिवसिंह की राजधानी 'गजरथपुर' में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने उसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' लिखा है, और शिवसिंह का नाम 'महाराज' की उपाधि से युक्त है।

इससे दो बातों का पता चलता है। एक यह कि शिवसिंह अपने पिता के जीवनकाल ही में ही 'महाराज' कहलाते थे। [मालूम होता है, वृद्ध पिता ने अपना शासन भार पुत्र को ही सौंप दिया था और जनता शिवसिंह को ही अपना अधिपति मानती थी।] दूसरी बात यह प्रकट होती है कि शिवसिंह के सिंहासनारोहण के पहले से ही विद्यापति दरबार में रहते थे। देवसिंह के नाम से विद्यापति ने कुछ पद्य भी बनाये हैं।

हाँ, तो यह सिद्ध है कि पिता की मृत्यु के पहले से ही शिवसिंह राज्य-शासन करते थे। मिथिला में यह जनश्रुति है कि शिवसिंह पचास वर्ष की अवस्था में राजगद्दी पर बैठे और विद्यापति उनसे दो वर्ष बड़े थे। अत शिवसिंह के राज्यारोहण के समय विद्यापति की अवस्था ५२ वर्ष की थी।

यदि यह जनश्रुति तथ्यपूर्ण मान ली जाय, तो प्राय हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे, क्योंकि विद्यापति को उपर्युक्त ताम्रपत्र में, 'अभिनव जयदेव' लिखा है। उस समय तक विद्यापति की कीर्ति चारों ओर फैल गई रही होगी। इनकी कविता के माधुर्य पर मुग्ध होकर लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहने लगे थे। इनकी कविता राजा के अन्त पुर से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक में गूँज रही थी। राजसिंहासन पर बैठने के समय शिवसिंह अपने प्यारे सहचर विद्यापति को कैसे भूल सकते थे! जिसकी कविता सुधा का पान कर वे मस्त बने थे, जिसकी कविता उन्हें और उनकी सहधर्मिणी 'लखिमा' को अमर कर चुकी थी, उसे वे कैसे कुछ पुरस्कार न देते! अत राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव प्रदान किया।

'बिसपी' गाँव २९३ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति को दिया गया था। उस समय उनकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष की होगी। अतः उनका जन्म २४१ लक्ष्मणाब्द में, या संवत् १४०७ विक्रमीय (=सन् १३५० ई०) में, होना सम्भव है।

इस कथन की पुष्टि पूर्वोक्त राजा गणेश्वर सिंह के दरबार में विद्यापति के आने-जानेवाली बात से भी होती है। 'कीर्त्तिलता' के अनुसार राजा गणेश्वर २५२ लक्ष्मणाब्द में परलोकवासी हुए थे। उस समय विद्यापति १०-११ वर्ष के रहे होंगे। तभी तो इनके पिता इन्हें राज-दरबार में ले जाते थे।

वंश-विवरण

विद्यापति मैथिल ब्राह्मण थे। इनका मूल 'बिसइवार' और आस्पद 'ठाकुर' था।

मैथिलों में पंजी-प्रथा का प्रचलन है। जितने मैथिल ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ हैं, सभी के नाम, पुश्त-दर-पुश्त, एक पोथी में लिखे हुए हैं। इस पोथी को 'पंजी' कहते हैं।

पंजी से पता चलता है कि 'गढ़बिसपी' में कर्मादित्य त्रिपाठी नामक ब्राह्मण रहते थे। ये राजमंत्री थे। ये विद्यापति के वंश के आदिपुरुष 'विष्णुशर्मा ठाकुर' के पोते थे।

कर्मादित्य के बाद इनके वंश में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, सभी तत्कालीन मिथिला के राजा दरबार में उच्च पदों पर काम करते रहे—कोई राजमंत्री थे, कोई राजपंडित—किसी को 'महामहत्तक' की उपाधि प्राप्त हुई, तो किसी को 'सान्धि-विग्राहिक' की।

इनका वंश अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के कारण उस समय मिथिला में बेजोड़ था। इनके वंश में कितने ही लेखक और कवि भी हो गये हैं।

कर्मादित्य के पोते वीरेश्वर ठाकुर ने, जो नान्य-वंशी राजा शक्रसिंह

एवं उनके पुत्र 'हरिसिंहदेव[1]' के राजमंत्री भी थे, 'छान्दोग्य-दशकर्मपद्धति' की रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार बिहार में दशकर्म किये जाते हैं।

वीरेश्वर के सोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, 'महावार्तिकनैबन्धिक' नाम से प्रधान थे। वीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य चिन्तामणि', 'विवादरत्नाकर', 'राजनीति-रत्नाकर' आदि सप्तरत्नाकरों की रचना की थी। 'राजनीति रत्नाकर' एक अत्यन्त बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत-कुछ प्रकाश पड़ता है। वे उपर्युक्त हरिसिंहदेव के मंत्री एवं महामहत्तक सान्धि विग्राहिक थे।

विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। वे एक अच्छे कवि थे। उन्होंने 'गंगाभक्ति-तरङ्गिणी' नाम की एक पुस्तक की रचना की थी।

यों देखा जाता है कि विद्यापति का वंश सरस्वती का अपूर्व कृपापात्र रहा है। जिस प्रकार इनके पूर्वजों ने राजकर्म में अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती-सेवा में भी वे लोग पीछे नहीं रहे हैं। ऐसे प्रतिभावान् कुल में उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्यकुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापण्डित थे। इनकी माता का नाम था 'हाँसिनी देवी'।

वह पिता धन्य है, जिसे ऐसा पुत्ररत्न प्राप्त हुआ था। वह माता भी धन्य है, जिसने ऐसे पुत्ररत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। जिसकी

१. हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध 'सिमरौंव गढ़' के अधिपति थे। इन्होंने नेपाल को जीता था।—लेखक

गाँव का प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है, जहाँ ऐसे 'कविकोकिल' ने अपना जीवन व्यतीत किया था !

कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की अराधना करके विद्यापति-सा पुत्र-रत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में बचपन से ही आया-जाया करते थे।

गणेश्वर के बाद कीर्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति उनके दरबार में आने-जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। कीर्ति-सिंह के दरबार में, मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे; क्योंकि कीर्तिसिंह के नाम पर ही इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ 'कीर्तिलता' रचा था। यह पूरा ग्रन्थ नेपाल के राज-पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है।

'कीर्त्तिलता' कवि की तरुण वयस की रचना है। इसकी भाषा संस्कृत प्राकृत-मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ठ' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है—

देसिल बअना सब जन मिट्ठा।
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सबको मीठी लगती है, यही जानकर मैंने अवहट्ठ-भाषा में इसकी रचना की है।'

किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य-कुशलता के लिये बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। इनका प्रतिद्वन्द्वी उसी अवस्था में कोई नहीं था। ये अभिमान के साथ इस पुस्तक के प्रथम पल्लव में लिखते हैं—

बालचन्द विज्जावइ भाषा। दुहु नहिं लग्गइ दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर-सिर सोहइ। इ निच्चय नाअर-मन मोहइ॥

"बाल-चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनों पर दुष्टों की हँसी लग नहीं सकती। वह (बालचन्द्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है और यह (विद्यापति की भाषा) निश्चय-पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषा-पंडितों का—मन मोहती है।"

इस पद के एक एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है। 'जय देव' के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज था। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इनका कोई भी प्रतिद्वन्द्वी हिन्दी-साहित्य में नहीं है।

कीर्तिसिंह के बाद शिवसिंह के पिता देवसिंह राजा हुए। देवसिंह के समय में राज्यशासन का भार शिवसिंह के ही कंधों पर था। उसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिंह में घनिष्ठता हुई। तब से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्हीं के पास रहे।

संस्कृत-रचनाएँ

इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ हैं।

प्रथम रचना उपर्युक्त 'कीर्तिलता' है।

दूसरी पोथी 'भू-परिक्रमा' है। यह राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक शिक्षा से भरी कहानियाँ हैं। इसीका वृहद् रूप 'पुरुष-परीक्षा' है।

तीसरी पोथी है—'पुरुष परीक्षा'। मालूम होता है, यह उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकास हो चुका था। यह राजा शिवसिंह की आज्ञा से, उन्हीं के राजत्वकाल में लिखी गई थी। इसमें ललित कथाओं के रूप में धार्मिक एवं राजनीतिक विषयों का वर्णन है। इसमें भी कवि ने शृंगार रस के परदे में राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत मान है। १८३० ईसवी में

इसका अंगरेजी में अनुवाद हुआ था। यह अनुवाद, लार्डबिशप हर्बर के परामर्श से, राजा कालीकृष्ण बहादुर ने किया था। फोर्टविलियम-कालेज में पहले यह पाठ्यपुस्तक की तरह पढ़ाई जाती थी। उक्त कालेज के बङ्गभाषा के अध्यापक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० में इसका भाषानुवाद किया था।[१]'

चौथी पुस्तक 'कीर्त्ति-पताका' है। इसमें मैथिली भाषा में लिखी गई प्रेम-सम्बन्धी कविताएँ हैं।

पाँचवीं 'लिखनावली' है, जिसमें संस्कृत में पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। यह रजाबनौली के अधिपति 'पुरादित्य' के लिये, २९९ लक्ष्मणाब्द में, लिखी गई थी। इसी रजाबनौली में विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द में अपने हाथ से 'भागवत' लिखकर समाप्त की थी।

छठी पुस्तक 'शैव-सर्वस्व-सार' है। यह शिवसिंह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद, रानी विश्वासदेवी के समय में, लिखी गई थी। इसमें भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओं की कीर्त्ति-कथा है एवं शिव की पूजा की विधि लिखी हुई है।

सातवीं पुस्तक 'गंगा वाक्यावली' है, जो विश्वासदेवी के ही लिये लिखी गई थी।

आठवीं पुस्तक है—'दान-वाक्यावली'। यह राजा नरसिंह देव की स्त्री 'धीरमती' को समर्पित की गई है।

नवीं पुस्तक 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' दुर्गा-पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिंहदेव के कहने से हुआ था। धीरसिंह के समय में यह पूरी हुई थी। इसमें धीरसिंह के भाई भैरवसिंह और चन्द्रसिंह के भी नाम आये हैं।

---

१. 'पुरुष परीक्षा' का शुद्ध हिन्दी-अनुवाद 'पुस्तक भंडार' से एक रुपये में मिल सकता है।—प्रकाशक

इनके अतिरिक्त विभाग-सार (स्मृतिग्रंथ), वर्णकृत्य और गया पत्तलक नामक संस्कृत-पुस्तकें भी इन्हीं की हैं।

अबतक मिथिला में खोज का काम कुछ नहीं हुआ है। सम्भव है, इनकी लिखी और भी संस्कृत पुस्तकें हों, जो अभी तक छिपी पड़ी होंगी; क्योंकि ये दीर्घजीवी पुरुष थे। किन्तु केवल उपर्युक्त पुस्तकों के देखने से ही इनके प्रगाढ पांडित्य का परिचय मिलता है।

हिन्दी के लिये तो यह नितान्त गौरव की बात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी, का कवि संस्कृत-साहित्य में भी अपना खास स्थान रखता है।

उपाधियाँ

हिन्दी में आजकल प्रत्येक कवि अपना एक-एक उपनाम रखता है। किन्तु प्राचीन हिन्दी कवियों में भी उपनाम देखे जाते हैं। हाँ, आजकल के उपनाम और प्राचीन समय के उपनाम में एक गहरा भेद है। कोई राजा या प्रसिद्ध व्यक्ति, कवि की काव्य-कुशलता देखकर उसीके अनुसार, उपाधि प्रदान करता था। वही उपाधि कवि का उपनाम होती थी। प्राचीन हिन्दी-कवियों में 'बिहारी', 'भूषण' आदि जो उपनाम देखे जाते हैं, वे सब राज प्रदत्त उपाधियाँ हैं।

विद्यापति को भी कई उपाधियाँ प्राप्त हुई थी। 'अभिनव जयदेव' की उपाधि तो सर्वप्रसिद्ध है। 'विसपी' गाँव का जो ताम्रपत्र है, उसमें भी विद्यापति 'अभिनव जयदेव' कहे गये हैं। मालूम होता है, यह उपाधि स्वयं शिवसिंह ने दी थी। विद्यापति इस उपाधि के सर्वथा योग्य भी थे।

जिस प्रकार संस्कृत-साहित्य में, मधुर शृंगार वर्णन में, जयदेव का जोड़ नहीं है, उसी प्रकार इस विषय में विद्यापति भी भाषा-साहित्य में अपना जोड़ नहीं रखते। उक्त उपनाम से इन्होंने कुछ कविताएँ भी की हैं। एक पद यों है—

सुकवि नवजयदेव भनिअ रे
देवसिंह नरेन्दनन्दन।
सेतु नरवइ कुलनिकन्दन।
सिंह सम सिवसिंह राया।
सकल गुनक निधान गनिअ रे॥

इनकी दूसरी उपाधि 'कविशेखर' है। इस नाम से भी इनकी बहुत-सी रचनाएँ हैं। न मालूम, यह उपाधि किसने दी थी। 'विसपी' ग्राम के दानपत्र में यह उपाधि नहीं है।

कविकंठहार और कविरंजन—इन दो नामों से भी इनकी अधिक कविताएँ हैं।

दशावधान और पंचानन की उपाधियाँ भी इनकी कही जाती हैं।
कुछ कविताएँ चम्पति या विद्यापति चम्पई नाम से भी हैं।
'दशावधान' नाम से कुछ कविताएँ भी हैं। यह उपाधि, कहा जाता है, दिल्लीश्वर ने दी थी।

धर्म-सम्प्रदाय

इनकी कविताएँ विशेषतः राधाकृष्ण-विषयक हैं। अतः लोगों की धारणा है कि वे वैष्णव रहे होंगे। बंगाल में भी पहले यही धारणा थी। बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने समर्पणपत्र में इन्हें 'वैष्णव-कवि-चूड़ामणि' लिखा है। किन्तु जनश्रुति और प्रमाण इसके विरुद्ध हैं।

बात यों है कि ये शृंगारिक कवि थे। शृंगार के आराध्य देव श्रीकृष्णजी ठहरे। अतः शृंगारिक वर्णन में राधाकृष्ण के रास-विलास का ही सहारा लिया जाता है। सभी भारतीय शृंगारिक कवियों ने इसी युगल मूर्त्ति को लक्ष्य कर शृंगारिक रचनाएँ की हैं।

किन्तु इसीसे किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नहीं। इनके पिता शैव थे। शिव की उपासना के बाद ही उन्होंने यह पुत्ररत्न प्राप्त

किया था। ऐसी अवस्था में इनका शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, इनका एक पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त बछल प्रभु बान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा॥

"कोई चन्द्र की पूजा करते हैं। कोई विष्णु की पूजा करते हैं, किन्तु मैंने सबको छोड़ दिया। हे बाण-महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।"

ये बाण-महेश्वर कौन हैं? 'बिस्पी' से उत्तर 'भेड़वा' नामक एक गाँव में आज भी बाणेश्वर-महादेव हैं। कहते हैं कि ये इन्हीं महादेव की उपासना करते थे।

यही नहीं, इनके बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ हैं, जो मिथिला में इनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध हैं। मिथिला में इनकी पदावली तो विशेषतः स्त्रियों में प्रचलित है। अधिकतर स्त्रियाँ ही इनके पद गाती हैं। पुरुषों में तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध हैं। तीर्थस्थानों को जाती हुई झुंड-की-झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुर पद गाती झूमती जाती हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुष के झुंड बड़े प्रेम से नचारियाँ गाते हैं।

कहते हैं, स्वयं महादेव इनकी भक्ति पर मुग्ध थे।

एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया, और इनकी नौकरी करने की अनुमति माँगी। इन्होंने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई-कोई 'उदना' भी कहते हैं। 'उगना' के रूप में स्वयं महादेवजी थे।

'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी सेवा में लीन रहता। एक दिन उसके साथ ये कहीं जा रहे थे। रास्ते में इन्हें प्यास

लगी। उससे कहा। वह चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा। ये उसे पीने लगे।

किन्तु, पीने पर इन्हें मालूम हुआ कि यह पानी गंगा का है। पूछा—"उगना, यह पानी कहाँ से लाया है?"

उगना ने कहा—"निकट के ही कुँए से!"

इन्होंने कहा—"यह जल कुएँ का हो नहीं सकता, यह तो गंगाजल है।"

बहुत कहने-सुनने पर भी जब इनको सन्तोष न हुआ, तब 'उगना' ने अपना यथार्थ रूप प्रकट किया। स्वयं महादेव 'उगना' के रूप में थे! यह पानी उन्हीं की जटा का था!

उस जगह, निकट में, कोई कुआँ या तालाब न पाकर महादेव ने अपनी जटा से पानी लेकर इन्हें दिया था। महादेव ने कहा—"देखो, तुम मेरे पूर्ण भक्त हो। मैं तुमसे अलग नहीं रहना चाहता। किन्तु, प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी यह बात किसीसे न कहोगे। खबरदार, जिस दिन यह बात प्रकट करोगे, उसी दिन मैं अन्तर्द्धान हो जाऊँगा।"

'उगना' इनके पास रहने लगा। किन्तु ये अब उसे कभी कोई नीच काम करने को न कहते। एक दिन इनकी स्त्री ने उससे कुछ लाने के लिये कहा। उसके लाने में देर हुई। ब्राह्मणी बिगड़ पड़ीं। ज्योंही वह निकट आया, एक चैला लेकर टूट पड़ीं। यह देखकर वे चिल्ला उठे—"हा-हा! यह क्या कर रही हो? साक्षात् शिव पर प्रहार!!"

उसी क्षण 'उगना' अन्तर्द्धान हो गया। विद्यापति पागल होकर गाने लगे—

उगना रे मोर कतए गेलाह।
कतए गेला सिव कीदहु भेलाह॥
भाँग नहिं बटुआ रुसि बैसलाह।
जोहि हेरि आनि देल हँसि उठलाह॥

किया था। ऐसी अवस्था में इनका शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, इनका एक पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त बछल प्रभु वान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा॥

"कोई चन्द्र की पूजा करते हैं। कोई विष्णु की पूजा करते हैं, किन्तु मैंने सबको छोड़ दिया। हे बाण-महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।"

ये बाण-महेश्वर कौन हैं? 'बिसपी' से उत्तर 'भेड़वा' नामक एक गाँव में आज भी बाणेश्वर-महादेव हैं। कहते हैं कि ये इन्हीं महादेव की उपासना करते थे।

यही नहीं, इनके बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ हैं, जो मिथिला में इनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध हैं। मिथिला में इनकी पदावली तो विशेषतः स्त्रियों में प्रचलित है। अधिकतर स्त्रियाँ ही इनके पद गाती हैं। पुरुषों में तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध हैं। तीर्थस्थानों को जाती हुई झुंड-की-झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुर पद गाती झूमती जाती हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुष के झुंड बड़े प्रेम से नचारियाँ गाते हैं।

कहते हैं, स्वयं महादेव इनकी भक्ति पर मुग्ध थे।

एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया, और इनकी नौकरी करने की अनुमति माँगी। इन्होंने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई-कोई 'उदना' भी कहते हैं। 'उगना' के रूप में स्वयं महादेवजी थे।

'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी सेवा में लीन रहता। एक दिन उसके साथ ये कहीं जा रहे थे। रास्ते में इन्हें प्यास

लगी। उससे कहा। वह चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा। ये उसे पीने लगे।

किन्तु, पीने पर इन्हें मालूम हुआ कि यह पानी गंगा का है। पूछा—"उगना, यह पानी कहाँ से लाया है?"

उगना ने कहा—"निकट के ही कुँए से!"

इन्होंने कहा—"यह जल कुएँ का हो नहीं सकता, यह तो गंगाजल है।"

वहुत कहने-सुनने पर भी जब इनको सन्तोप न हुआ, तब 'उगना' ने अपना यथार्थ रूप प्रकट किया। स्वयं महादेव 'उगना' के रूप में थे! यह पानी उन्हीं की जटा का था!

उस जगह, निकट में, कोई कुआँ या तालाब न पाकर महादेव ने अपनी जटा से पानी लेकर इन्हें दिया था। महादेव ने कहा—"देखो, तुम मेरे पूर्ण भक्त हो। मैं तुमसे अलग नहीं रहना चाहता। किन्तु, प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी यह बात किसीसे न कहोगे। खबरदार, जिस दिन यह बात प्रकट करोगे, उसी दिन मैं अन्तर्द्धान हो जाऊँगा।"

'उगना' इनके पास रहने लगा। किन्तु ये अब उसे कभी कोई नीच काम करने को न कहते। एक दिन इनकी स्त्री ने उससे कुछ लाने के लिये कहा। उसके लाने में देर हुई। ब्राह्मणी बिगड़ पड़ीं। ज्योंही वह निकट आया, एक चैला लेकर टूट पड़ीं। यह देखकर वे चिल्ला उठे—"हा-हा! यह क्या कर रही हो? साक्षात् शिव पर प्रहार!!"

उसी क्षण 'उगना' अन्तर्द्धान हो गया। विद्यापति पागल होकर गाने लगे—

उगना रे मोर कतए गेलाह।
कतए गेला सिव कीदहु भेलाह॥
भाँग नहिं बटुआ रुसि बैसलाह।
जोहि हेरि आनि देल हँसि उठलाह॥

जे मोर कहता उगना उदेस ।
ताहि देबओं कर कँगना बेस ॥
नन्दन-वन में भेटल महेस ।
गौरि मन हरखित मेटल कलेस ॥
विद्यापति मन उगना सों काज ।
नहि हितकर मोर त्रिभुवन राज ॥

इस तरह के कई पद हैं ।

यद्यपि इस नास्तिकवाद के वैज्ञानिक युग में इस कथा पर लोगों का विश्वास न जमेगा । किन्तु ऐसी घटनाओं से प्राचीन भारतीय इतिहास भरा पड़ा है । इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि ये वैष्णव नहीं, शैव थे । हाँ, यह बात निस्सन्देह सत्य है कि ये आज-कल के शैवों की तरह विष्णुद्रोही नहीं थे । ये शिव और विष्णु को एक ही रूप की दो कलाएँ मानते थे । इनका यह पद्य है—

भल हरि भल हर भल तुअ कला ।
खन पित वसन खनहि बघछला ।—इत्यादि ।

साथ-ही-साथ, देवियों—खासकर 'दुर्गा'—की स्तुति जो इन्होंने की है, उससे इनके शाक्त होने के विषय में जरा भी सन्देह नहीं हो सकता । इनकी अलोचना करने पर ऐसा ही विश्वास दृढ़ होता है कि आधुनिक मैथिलों की तरह ये शिव, विष्णु तथा चण्डी—तीनों—को मानते थे; पर किसी एक विशेष सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं थे ।

यदि आप आज मैथिलों के सिर का चन्दन देखेंगे तो बात स्पष्ट हो जायगी । वे एक ही साथ भस्मत्रिपुंड् भी धारण करते हैं, श्रीखण्ड-चन्दन भी और सिंदूर-विन्दु भी । उपर्युक्त तीनों देवताओं की ये तीनों निशानियाँ हैं । वे तीनों को समान आदर की दृष्टि से देखते हैं, पर किसी एक सम्प्रदाय के नहीं हैं ।

आश्रयदाता शिवसिंह

इनके प्रधान आश्रयदाता राजा शिवसिंह थे। उन्हीं की छत्रच्छाया में रहकर इन्होंने अपने अधिकांश पदों की रचना की थी। जिस प्रकार शिवसिंह ने प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सांसारिक झंझटों से मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार बदले में इन्होंने उनका और उनकी धर्मपत्नी 'लखिमा देवी' का नाम अपने पदों में देकर उन्हें अजर-अमर बना दिया है। शिवसिंह का भौतिक दान तो थोड़े ही दिनों में विलीन हो गया, किन्तु इन्होंने जो उन्हें यश का दान दिया वह अनन्त काल तक संसार में विद्यमान रहेगा।

ये शिवसिंह कौन थे ?

मिथिला के नवीन युग के शासकों में 'सिमराँव' और 'सुगाँव' के राजघराने अधिक प्रसिद्ध हैं। राजा शिवसिंह 'सुगाँव'—राजघराने में हुए थे। 'सुगाँव'—राजघराने के पहले 'सिमराँव'—राजघराने के लोग शासन करते थे। उनकी राजधानी 'सिमराँव गढ़' में थी—जो वर्त्तमान चम्पारण जिले में है।

सिमराँव के राजा क्षत्रिय थे। इस राज्य के संस्थापक नान्यदेव थे। इसी राजकुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंहदेव हुए थे जिन्होंने नैपाल-विजय किया था। हरिसिंहदेव के मंत्री विद्यापति के पूर्वज चंडेश्वर थे और उनके राजपंडित कामेश्वर ठाकुर।

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंहदेव ने एक वृहद्-यज्ञानुष्ठान किया था। किन्तु अन्य राजाओं द्वारा यज्ञ भ्रष्ट कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल में चले गये।

इसी समय सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढ़ाई की। मिथिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का चिर मनोरथ पूरा हुआ—मिथिला का शासन-सूत्र मुसलमानों के हाथ आया।

इस अवसर पर राजपंडित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से[1] भेंट की। बादशाह उनके गुण से अत्यन्त संतुष्ट हुए—उनके अस्वीकार करने पर भी उन्हीं को मिथिला-प्रदेश का शासक नियुक्त किया। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ आया।

कामेश्वर ठाकुर 'ओयनवार' ब्राह्मण थे। इनके पूर्वपुरुष पं० ओयन ठाकुर ने किसी राजा से—सम्भवतः नान्यदेव से—'ओयनी' नामक गाँव उपहार में पाया था। 'ओयनी' (वैनी) गाँव दरभंगा जिले में पूसा-रोड स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव में बसने के कारण इस वंश को 'ओयनवार वंश' कहते हैं।

ओयनवार-वंश के सबसे प्रथम राजा यही कामेश्वर ठाकुर हुए। उनके बाद उनके पुत्र भोगेश्वर, और भोगेश्वर के बाद उनके पुत्र गणेश्वर, राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे—वीरसिंहदेव और कीर्त्तिसिंह। इन्हीं कीर्त्तिसिंह के दरबार में विद्यापति ने कीर्त्तिलता का निर्माण किया था। कीर्त्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह निःसन्तान मरे, तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।

राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। उनकी राजधानी 'गजरथपुर' नामक नगर में बागमती नदी के किनारे थी।

यह गजरथपुर कहाँ है? दरभंगे से ४-५ मील पूर्व-दक्षिण कोने पर 'सिवईसिंहपुर' नामक एक गाँव है। लोगों का कहना है, उसीका दूसरा नाम गजरथपुर था। वहाँ जाकर पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यही शिवसिंह की राजधानी थी—इधर भी उस गढ़ को खोदने से कभी-कभी सोना-चाँदी द्रव्य मिलते थे, किन्तु अब गढ़ का कहीं पता नहीं है—जहाँ पहले गढ़ था, वहाँ अब खेत लहरा रहे हैं।

---

१. उस समय तुगलक-वंशी पठान-सम्राट् गयासुद्दीन का राज्यकाल था।—लेखक

शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देखकर, मालूम होता है, वे बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ[1] पुरुष थे। विद्यापति के पदों में उनके नाम के साथ-साथ उनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी का नाम पदों में देने से लोगों ने उल्टा-सीधा बहुत कुछ अनुमान किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यों है कि विद्यापति ने जहाँ कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहाँ साथ-ही-साथ साधारणतया उसकी रानी का भी नाम दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी का नाम पदों में होने के विषय में मिथिला में यह प्रवाद है कि विद्यापति जिन पदों की रचना करते थे, वे सब राजा के अन्तःपुर में गाये जाते थे। राजा-रानी दोनों अन्तःपुर में एकत्र बैठते, उनके चारों ओर स्त्रियाँ आ बैठतीं। उस समय 'केटी' (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी राजा और रानी की भणिता से युक्त विद्यापति के पद गाने लगतीं।

'केटी' स्त्रियाँ गान-विद्या में निपुण होती थीं। वे महल में इसी काम के लिये नियुक्त की जाती थीं।

इनके पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के भी नाम आये हैं। सम्भवतः लखिमा देवी पटरानी रही हों, या उन्हीं पर राजा की सबसे अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के वे अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली 'कर' भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई। दैव-दुर्विपाक से शिवसिंह कैद

---

१ विद्यापति के ही समान अन्य कितने कवि भी शिवसिंह के दरबार में थे। कहते हैं कि उन्हीं में से एक उमापति थे, जो 'पारिजात हरण' और 'रुक्मिणी-परिणय' नामक भाषा नाटकों के रचयिता कहे जाते हैं। लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को ही मानते थे।—

करके दिल्ली ले जाये गये। देवसिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया; किन्तु पुत्रशोक से पीड़ित रहने लगे।

इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना! तब ये अपनी जान पर खेलकर शिवसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुल्तान ने हुक्म दिया—अगर शायर हो, तो कुछ करामात दिखाओ। इन्होंने कहा कि मैं अदृष्ट का दृष्टवत् वर्णन कर सकता हूँ। सुल्तान ने एक सद्य स्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। ये गाने लगे—

कामिनि करए सनाने।
हेरितहि हृदय हनए पचबाने।—आदि

सुल्तान को इससे भी सतुष्टि नहीं हुई। विद्यापति एक काठ के सदूक में बंद किये गये और वह सदूक कुँए में लटका दिया गया। ऊपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूँकती हुई खड़ी की गई। तब इनसे कहा गया कि ऊपर जो कुछ है उसका वर्णन करो। ये सदूक के अन्दर से गाने लगे—

सजनि निहुरि फुकु आगि।
तोहर कमल भमर मोर देखल
मदन ऊठल जागि।
जो तोंहे भामिनि भवन जएबह
ऐबह कोनह बेला।
जौं एहि सकट सौं जिव बाँचत
होयत लोचन मेला॥

बादशाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजा शिवसिंह छोड़ दिये गये। तब इन्होंने निम्नलिखित पद कहा—

भन विद्यापति चाहथि जे विधि
करथि से से लीला।

राजा सिवसिंह बंधन मोचन
तखन सुकवि जीता ॥

राजा शिवसिंह की दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला में प्रचलित हैं। उन्होंने अपने पिता का तुलादान कराया था। कितने ही तालाब खुदवाये थे। प्राचीन कमला नदी के किनारे 'नेहरा' नामक गाँव में 'घोड़दौड़' नामक एक तालाब खुदवाया था। कहते हैं, उन्होंने वहाँ अपना निवास-स्थान भी बनाया था। उसका भग्नावशेष अभी तक पाया जाता है। मधुबनी (दरभंगा) से दक्षिण 'पतौल' नामक गाँव में उनका खुदवाया हुआ एक तालाब है, जिसके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है—

पोखरि रजोखरि और सब पोखरा।
राजा सिवसिंह और सब छोकरा ॥

वे बहुत दिनों तक युवराज के रूप में कार्य करते रहे, किन्तु प्रजा उन्हें ही अपना राजा समझती थी। देवसिंह तो नाम-मात्र के राजा थे। युवराजावस्था में ही शिवसिंह 'महाराज' कहे जाते थे।

ल० २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई। ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढ़ाई कर दी। दिल्लीश्वर के साथ बंगाल के नवाब भी थे। शिवसिंह के लिये बड़े संकट का समय था। एक ओर पिता का श्राद्धादि-कर्म, दूसरी ओर युद्ध का आयोजन !

विद्यापति ने प्राकृत मिश्रित एक पद में शिवसिंह को इस विजय की चर्चा यों की है—

अनल रंध्र कर लक्खन नरवइ, सक समुद्द कर अगिन ससी।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ, वार वेहप्पय जाहु लसी ॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ अद्धासन सुराए सरू।
दुहु सुरतान नीदे अब सोअओ तपन हीन जग तिमिर भरू ॥
देखहु ओ पृथिवी के राजा, पौरुस माझ पुन्न वलिओ।
सत वले गंगा मिलिअ कलेवर, देवसिंह सुरपुर चलिओ ॥

एकदिस सकल जवन बल चलिओ, ओकादिस से जमराएचरू।
दूअओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंघ करू॥
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ, दुन्दुभिसुन्दर साद धरू।
बीर छत्त देखन का कारन, सुरगन सने गगन भरू॥
आरम्भिय अन्तेष्टि महामख, राजसूअ असमेध जहाँ॥
पडित घर अचार बर बानिअ, जाचक काँ घर दान कहाँ॥
बिज्जावइ कबिबर यह गावय, मानव मन आनन्द भओ।
सिंहासन सिवसिंह वइट्ठो, उच्छवै बैरस बिसरि गओ॥

शिवसिंह ने राजगद्दी पर बैठते ही उनको बिसपी गाँव उपहार में दे दिया। राज्यारोहण के तीन ही वर्ष बाद पुन यवन-सेना मिथिला पर आ चढी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावत बादशाह ने बड़ी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये। किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। उन्होंने अपनी स्त्रियों को, विद्यापति के साथ, अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास 'रजाबनौली' (नेपाल तराई) भेज दिया।

राजा पुरादित्य द्रोणवार-कुल के ब्राह्मण थे। बडे ही प्रतापशाली थे। अपने बाहुबल से सप्तरी-परगना जीतकर उसमें अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी 'लिखनावली' में लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुल तदीय वसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता।
दोर्दर्पार्जित सप्तरीजनपदे राज्यस्थिति कारिता॥
सग्रामेऽर्जुन भूपतिर्विनिहतो बन्धो नृशसायित।
तेनेय लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता॥

शिवसिंह, सेना के साथ बादशाह से जा भिड़े। वे शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उड़ाते हुए फिर बाहर निकल आये। उनकी वीरता पर

बादशाह मुग्ध हो गया। यवन-सेना उनके पीछे दौड़ी, तो बादशाह ने मना कर दिया।

शिवसिंह वहाँ से नेपाल की ओर जंगल में चले गये और पुनः अपने राज्य में न लौटे। कोई-कोई कहते हैं, वे मारे गये।

उनकी मृत्यु—अथवा पलायन—के बाद, मालूम होता है, विद्यापति बहुत दिनों तक लखिमा देवी[1] के साथ रजाबनौली में ही रहे, क्योंकि यहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में यहाँ के राजा पुरादित्य के लिये इन्होंने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०९ लक्ष्मणाब्द में इन्होंने स्वलिखित भागवत की पोथी यहीं समाप्त की।

'लिखनावली' के बाद इन्होंने शिवसिंह के भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वास-देवी के लिये दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रन्थों में समय नहीं दिये गये हैं।

पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिये इन्होंने 'विभागसार' की रचना की थी। उनकी स्त्री धीरमती के लिये 'दानवाक्यावली' लिखी थी।

इनकी अन्तिम रचना 'दुर्गा-भक्ति तरंगिणी' है। यह नरसिंहदेव के समय में प्रारम्भ की गई थी और धीरसिंह के राजत्वकाल में समाप्त हुई थी।

धीरसिंह का समय, 'सेतुदर्पिणी' के अनुसार, ३२१ लक्ष्मणाब्द है। अतएव, इस समय तक, अर्थात् संवत् १४८७ वि० या १४३०[2] ई० तक इनका जीवित रहना सब प्रकार से सिद्ध है।

---

१. लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जनश्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी-किसी ऐतिहासिक के मत से इन्होंने शिवसिंह के बाद ९ वर्ष तक राज भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने कहीं भी इसकी ओर इशारा तक नहीं किया है। अतः यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है। —लेखक

२. 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' में ३२१ लक्ष्मणाब्द को १४३९ ई० लिखा है। —लेखक

मृत्यु-काल

३२१ लक्ष्मणाब्द तक इनका जीवित रहना सिद्ध होता है। धीरसिंह के बाद के किसी राजा के नाम से[1] लिखी गई इनकी कोई पुस्तक नहीं मिलती है। इससे अनुमान होता है कि धीरसिंह के राजत्वकाल में ही या उनके थोड़े ही दिनों के बाद इनकी मृत्यु हो गई। इनका एक पद यों है—

सपन देखल हम सिवसिंघ भूप।
बतिस बरस पर सामर रूप॥
बहुत देखल गुरुजन प्राचीन।
आब भेलहुँ हम आयुविहीन॥
समटु समटु निअ लोचन नीर।
ककरहु काल न राखथि थीर॥
विद्यापति सुगतिक प्रस्ताव।
त्याग के करुना रसक सुभाव॥

इससे पता चलता है कि शिवसिंह की मृत्यु के बत्तीस वर्ष बाद विद्यापति ने उन्हें स्वप्न में देखा था। ऐसी प्राचीन धारणा है कि 'बहुत दिनों पर यदि अपना कोई मृत प्रेम-पात्र मलिन वेश में दीख पड़े, तो मृत्यु निकट समझनी चाहिये'। यही भाव बड़े ही कारुणिक शब्दों में उपर्युक्त पद में वर्णित है।

---

१ विद्यापति के एक पद में 'कंसदलन नारायण सुन्दर समु रंगिनि पए होई' ऐसी भणिता है। मैंने भ्रमवश पहले इस 'कंसदलननारायण' का 'कंस-नारायण' नामक मिथिला का राजा समझा था। एक तो नाम में ही भेद है, दूसरे राधा का वर्णन है, अतः यहाँ कृष्ण अर्थ है। 'कंस-नारायण' विद्यापति की मृत्यु के बहुत पश्चात् राजा हुए थे। —लेखक

शिवसिंह २६६ लक्ष्मणाब्द में मरे थे। अतः ३२८ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति ने उक्त स्वप्न देखा होगा, जो विक्रमीय संवत् १४६४ होता है। यदि हम इस स्वप्न के तीन वर्ष के बाद इनकी मृत्यु मान लें, तो ये नब्बे वर्ष की अवस्था में, संवत् १४६७ वि० में (या १४४० ई० में) मरे थे। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त ने इसी समय को प्रामाणिक माना है।

उस समय ये बूढ़े हो चले थे। जन्म-भर शृंगार-रचना में व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय में संसार से इन्हें विरक्ति हो गई थी। इन्हें अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता था— निराशा की काली घटा ने इनके हृदय-व्योम को आच्छादित कर लिया था। ये अत्यन्त करुण-स्वर में गाते हैं—

तातल सैकत बारि-बिंदु सम, सुत मित रमनि समाज।
तोहें बिसरि मन ताहि समरपिनु अब मझु हब कोन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहु जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसवासा॥
आध जनम हम नींद गमायनु जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुबन रमनि रभसरँग मातनु तोहे भजब कओन बेला॥

इन्होंने अपनी कविता-रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था में इस धन को देख-देखकर कहते हैं—

जतन जतेक धन पापे बटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए।
मरनक बेरि हरि केओ न पूछए करम संग चलि जाए॥
ए हरि बन्दों तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि पारक कओन उपाय।
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु जुवती मतिमय मेलि।
अमृत तजि किए हलाहल पीअनु सम्पद अपदहि भेलि॥

ये अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

वयस, कतह चल गेला।
तोहें सेवइत जनम बहल, तइओ न अपन भेला॥

वयस, तुम कहाँ चले गये। तुम्हें सेवते हुए अपना जन्म बिता दिया, किन्तु अपने न हुए!

कहा जाता है, अपना मृत्यु समय निकट आया जान ये अपने घर के लोगों से बिदा लेकर गंगा सेवन को चले। गंगा-सेवन की प्रथा मिथिला में अद्यावधि प्रचुरता से प्रचलित है। गंगा-यात्रा के अवसर पर इन्होंने अपने पुत्र को बहुत-कुछ उपदेश दिया। कहा—"बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि-सत्कार में कमी न चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के तुल्य जानना।"

पश्चात् ये अपनी कुल-देवी विश्वेश्वरी के निकट गये। देवी से जाने की अनुमति माँगी। कहा—"माँ, अब गंगा जा रहा रहा हूँ। जन्म भर शिव की आराधना की। अब बिदा दो।"

घर पर सभी को सन्तोष दे पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले। राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तब अपनी पालकी रखवा दी। एक अभिमानी भक्त की तरह कहा—"मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिये दो कोस आगे नहीं बढ़ आवेगी?"

रात बीती। दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये। गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर, पहुँच गई थी!!

आज तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है। उस स्थान का नाम 'मऊ बाजितपुर' है। यह दरभंगा जिले में है। यहीं इनकी मृत्यु हुई।

इनकी चिता पर एक शिव-मन्दिर की स्थापना की गई। यह शिव-मंदिर आजतक विद्यमान है। इनकी मृत्यु-तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है।

विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदसि जान॥

इसके अनुसार इनकी मृत्यु कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी को हुई। यह तिथि प्रामाणिक समझ पड़ती है। कार्तिक महीने में गंगा-सेवन करने का, हिन्दू शास्त्र के अनुसार, बड़ा महत्त्व है। इनकी मृत्यु गंगा-तट पर

हुई थी—जब कि ये गंगा-सेवन करने गये थे। अतः इस तिथि को अप्रामाणिक मानने का कोई कारण नहीं।

हस्ताक्षर

विद्यापति, प्राचीन हिन्दी-कवि चन्दवरदाई को छोड़कर, सभी प्रसिद्ध हिन्दी-कवियों से पहले हुए थे। इनके हाथ की लिखी हुई इनकी निजी रचना—पदावली या संस्कृत-पोथियाँ—नहीं पाई जातीं। हाँ, एक 'सटीक भागवत' की पोथी इनके हाथ की लिखी अवश्य पायी जाती है। यह पुस्तक दरभंगे से बारह कोस दूर 'तरौनी' नामक गाँव में जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभंगा-जिले की पंडितमंडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति से भी यह सिद्ध है कि यह विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह तालपत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फुट और डेढ़ इञ्च तक, चौड़ाई सवा दो इञ्च के लगभग है। पत्र की संख्या ५७६ है। पत्र के दोनों ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ में छः पंक्तियाँ हैं। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग-अलग, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपिदोप नहीं। रोशनाई प्रायः सर्वत्र स्वच्छ। अन्तिम पत्र काष्ठ के वेष्टन-घर्षण और बन्धन के कारण जीर्ण हो गया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रंथ के शेष में लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता संख्या ल० स० ३०९ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजाबनौलीग्रामे श्री विद्यापतिलिपिरियमिति।

अन्तिम दो अक्षर 'मिति' पत्रांश से छिन्न हो गया है। 'रजाबनौली' गाँव दरभंगे से प्रायः १५ कोस उत्तर है। शिवसिंह २९३ लक्ष्मणाब्द में राज्यासन पर बैठे थे। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है।

मालूम होता है, शिवसिंह की मृत्यु के बाद इनका जी सांसारिक कार्यों से उचट गया था—कम-से-कम शृंगारिक रचनाओं की ओर से।

मित्र-वियोग होने पर ऐसा होना संभव भी है। उसी शोकावस्था में अपने चित्त की शान्ति के लिये, इन्होंने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो तो आश्चर्य नहीं।

परिवार

इनके बेटे का नाम 'हरपति' था। इनके एक पद में उनका नाम आया है। इनके एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। इन्होंने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें पति-गृह-गमन के समय कन्या को उपदेश दिया गया है। उन पदों में 'दुलही' शब्द आया है। कहते हैं, ये पद इन्होंने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे।

'दुल्ही' का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम, क्या रहस्य है! मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में एक पद प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। अन्तिम काल में ये कहते हैं—

दुल्लहि, तोहर कतय छथि माए।
कहुन ओ आवथु एखन नहाए॥

'दुलही' तुम्हारी माँ कहाँ हैं? कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें।

दरभंगे के वर्त्तमान राजघराने में 'नरपति ठाकुर' नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में 'लोचन' नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का सकलन किया था। उसमें उसने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं।

'रागतरंगिणी' में एक कविता 'चन्द्रकला' नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है - "इतिश्रीविद्यापतिवधूनाम्:"। इससे मालूम होता है, 'चन्द्रकला' विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमलं कच गंडमंडित कोमलम् ।
अधर विम्ब समान सुन्दर शरदचन्द्रनिभाननम् ॥
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्ज्वलसौरभम् ।
बाहुवल्लि मृणाल पंकज हार शोभित ते शुभम् ॥

शोभय सुन्दरि मम हृदयम् ।
गद्गद हास सुदति निपुणम् ॥

उर पीन कठिन विशाल कोमल याति युग्म निरन्तरम् ।
श्रीफला कमला विचित्र विधातु निर्मल कुच वरम् ।
श्यामा सुवेषा त्रिवलि रेखा जघनभार विलम्बिते ।
मत्तगज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते ॥

सुललित मन्द गमन करई ।
जनि पति संग वरटा भमई ॥

अतिरूप यौवन प्रथम सम्भव कि वृथः कथया प्रिये ।
तेजह रूप-विमोह परिहरि शोक चिन्तित चिन्तये ॥
उपयात मदन व्याधि दुःसह दहए पावक से वनम् ।
पवन दिसे दिसे दहए पावक युग्मदारज सम्वरम् ॥

श्यामा सवन्दिते ।
अति समय गीत सुशोभिते ।

आत्म दान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये ।

सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम् ॥
अधर - सुधा मधुपानमियम् ॥

चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोहें राधिके ।
वचन मम धर कृष्णमनुसर किन्तु कामकला शुभे ॥

चन्द्रकला हे वचन करसी ।
मानिनि माधवमनुसरसी ॥

सहपाठी पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकाण्ड विद्वान् हो गये हैं। वे विद्यापति के सहपाठी थे। इन्होंने 'बिस्पी' गाँव में एक अतिथिशाला बनवा रक्खी थी। प्रतिदिन भोजन के पश्चात ये स्वयं अतिथिशाला में जाते और अतिथियों से वार्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब ये अतिथिशाला में गये तब सभी अतिथि इनकी अभ्यर्थना में खड़े हो गये। केवल कोने से एक अत्यन्त वृद्ध पुरुष बैठा ही रहा। इनके पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि उसने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता पर इनके मुँह से सहसा निकल गया।

"प्राघुणो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षित।

'घर के कोने में सूक्ष्म-कीट (घुन)-वत् अतिथि सूक्ष्मतावश नहीं दीख पड़े।'

बैठे हुए पुरुष ने तुरत उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया—

"नहि स्थूलधिय. पुस सूक्ष्मे दृष्टि प्रजायते॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नहीं दीख पड़ता।'

बोली सुनते ही ये अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हे आदर-पूर्वक अपने घर ले आये। पक्षधर मिश्र सम्भवत इनसे कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक 'विष्णुपुराण' में ३४५ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्वेषी केशव मिश्र

बड़े लोगों के प्रति उनके अड़ोस-पड़ोसवाले सदा द्वेष भाव रखते हैं, यह बात स्वयंसिद्ध है। इनके भी कुछ लोग विद्वेषी थे। ये शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, भावावेश में, निज प्रणीत नचारी गाते गाते, ये नाचने तक लगते थे। इसी कारण कुछ लोग इन्हें 'नर्तक' नाम से चिढ़ाते थे।

ऐसा प्रवाद है, इनके एक और प्रसिद्ध विद्वेषी हो गये हैं, जिनका नाम था, 'केशव मिश्र'। उनका समय ४७३ लक्ष्मणाब्द है अर्थात् इनके लगभग सौ वर्ष पश्चात्।

मिश्रजी प्रसिद्ध शाक्त थे। 'द्वैत-परिशिष्ट' नामक स्वरचित ग्रंथ में उन्होंने 'देवीभागवत्' को प्रामाणिक ग्रंथ प्रतिपादित किया है।

विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिये मिश्रजी इनसे चिढ-से गये थे। वे इनका 'अतिलुब्ध नगरयाचक' नाम से उपहास करते थे। इन्होंने 'विसपी' गाँव उपहार-रूप में ग्रहण किया था—इसीलिये ये 'नगरयाचक' थे! द्वेष का कोई ठिकाना है!

मिश्रजी शिवसिंह के कुल की दौहित्र-सन्तान थे—राजकुटुम्ब के पुरुष थे। अतएव ऐसी उद्दण्डता—ऐसी विद्वेषबुद्धि—स्वाभाविक भी है!

पदावली

यद्यपि इन्होंने लगभग एक दर्जन संस्कृत-ग्रन्थों का निर्माण किया था, तथापि इनकी प्रसिद्धि का खास कारण है इनकी 'पदावली'।

गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते हैं। इन्होंने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए हैं। इन्होंने कविता में जयदेव को आदर्श माना है—लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अतः जयदेव के ही समान, ये संगीत-पूर्ण कोमल कान्त पदावली में शृंगारिक रचना करते थे।

राजा नरपति ठाकुर के दरबारी कवि 'लोचन' ने अपनी 'राग-तरंगिणी' में लिखा है कि 'सुमति' नामक एक कलाविद् कायस्थ कथक के लड़के 'जयत' को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था, विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

सुमतिसुतोदयजन्मा जयत शिवसिंहदेवेन।
पण्डितवरकविशेखर विद्यापतये तु सन्न्यस्त॥

बिना संगीत का मर्म जाने संगीतमय पदों की रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, ये स्वयं भी गान विद्या में पारंगत थे।

इनके पदों में कहीं कहीं छन्दोभंग-सा दीख पड़ता है। किन्तु, सूरदास के पदों में भी यही बात पाई जाती है। पर संगीत के सुर-लय के अनुसार जो पद बनाये जाते हैं, उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है—अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीलिये संगीत से अपरिचित व्यक्तियों को इनके पदों में छन्दोभंग का आभास मिल जाता है।

पदावली का रूप

इन्होंने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चलता है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह प्रकाशित किया

था। बाबू ब्रजनन्दनसहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे पद हैं, जो नगेन्द्रनाथगुप्तवाले संस्करण में नहीं हैं। सहायजी के नये पदों में नचारियों की ही प्रधानता है।

किन्तु अभी तक इनके बहुत-से अनूठे पद अप्रकाशित ही हैं। मिथिला की स्त्रियाँ जिन पदों को विवाह के अवसर पर गाती हैं उनका, तथा बहुत-सी नचारियों का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणों को देखने से पता चलता है कि इन्होंने पदों की रचना विषय-विभाग के अनुसार नहीं की थी। 'बिहारी' के ही समान ये भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगों ने उनका अलग-अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो इनके अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही हैं और उन्हीं का संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बँगला के प्रचीन संग्रह-ग्रन्थों में है; किन्तु हाल में तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ मिले हैं जिनसे इनके कितने नवीन पद प्राप्त हुए हैं, एवं पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रन्थों में सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी भी विद्यापति-लिखित 'भागवत' के साथ 'तरौनी' ग्राम के उन्हीं स्वर्गीय पंडित के घर में सुरक्षित पाई गई है। कहा जाता है कि विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे लिखा था। इस पोथी की लिखावट और इसके तालपत्र को देखने से मालूम होता है कि कम-से-कम तीन सौ वर्षों का यह प्राचीन है। लापरवाही से रखने के कारण यह पोथी जीर्ण-शीर्ण हो गयी है। पहला और दूसरा पत्र गायब है। फिर नवाँ नहीं है। इसके बाद ८१ से लेकर ९९ पत्र तक एकदम नहीं है। १०३ नम्बर का पत्र भी गायब है। १३२ पत्र के बाद का कुछ भी अंश नहीं मिलता! सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नहीं चलता कि यह कब लिखी गई, किसने इसे लिखा और कुल कितने पद इसमें थे। इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं।

दूसरी पोथी नैपाली में पाई गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्रथम प्रथम इसे नैपाली दरबार के पुस्तकालय में देखा था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है, किन्तु इस पोथी की भाषा में नैपाल तराई (मोरग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। मालूम होता है, इसे किसी मोरग निवासी ने लोगो से सुनकर लिखा था, जिससे ऐसी गल्ती हुई है। इस पोथी में लगभग ३०० पद हैं।

तीसरी पोथी है पूर्वोक्त रागतरंगिणी। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत से पद रक्खे हैं। प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम और मात्राओं की संख्या भी दी है। यह ढाई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—"अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम प्रथम विद्यापति ने ही की'।

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अबतक विवाद-ग्रस्त रही है। बंगाली लोग इनका बंगला का प्रथम कवि या बंगभाषा का प्रवर्त्तक मानते हैं। इसीलिये उन लोगो ने इनको बंगाली सिद्ध करने की भी चेष्टा की थी। किन्तु अब तो यह सब प्रकार सिद्ध हो गया कि ये मैथिल थे।

मैथिलो की एक खास बोली है 'मैथिली'। विद्यापति भी मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हें अपनी बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। सचमुच यही ठीक है।

किन्तु यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंगला भाषा की या हिन्दी भाषा की? बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली को व्रजबोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है।

गुप्तजी 'प्राच्य विद्या-महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य रखता है। हमारी राय भी उनसे मिलती है।

मिथिला बंग देश से लगी हुई है। विद्यापति का जन्म दरभंगे में हुआ था; जो द्वारबंग या 'बंगाल का द्वार' है। इसलिये मैथिली पर

वंगभाषा का प्रवाह जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक वंगला की। जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी, अँगरेजी पोशाक पहनकर, अँगरेज नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली भी हिन्दी को छोड़कर वंगभाषा की नहीं हो सकती। हाँ, वंगभाषा के संसर्ग से इसमें मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज-कल की मैथिली से कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष बीते। इन पाँच सौ वर्षों में भाषा में कुछ-न-कुछ परिवर्तन होना बहुत सम्भव है।

कुछ मैथिल महाशय इन पदों की भाषा को तोड़-फोड़कर आज-कल की मैथिली बोली से मिलाने का अनुचित प्रयत्न करते हैं। किन्तु क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे कि ऐसा करके वे इनकी स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा रहे हैं ?

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खूब हुई है ! बंगालियों ने उसे ठेठ बंगला का रूप दे दिया है, मोरंगवालों ने मोरंग का रंग चढ़ाया है, बाबू ब्रजनन्दनसहाजी उसपर आधुनिक मैथिली का रोगन चढ़ा रहे हैं ! भगवान् इनकी कोमलकान्त पदावली की रक्षा करें !

पदावली की विशेषता

इनकी पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रंग-ढंग रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितनों की कविताओं में छिपाकर रखिये, वह स्वयं चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दीकोकिल की काकली हूँ। जिस प्रकार हजारों पक्षियों के कलरव को चीरती हुई कोकिल की काकली आकाश-पाताल को रसप्लावित और अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है।

बंगाल के 'यशोहर' (Jessore) जिले में वसंतराय नामक एक कवि हो गये हैं। विद्यापति के पदों का प्रचार देखकर उन्होंने भी

विद्यापति के नाम से कविता करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु वे अपनी कविताएँ इनकी कविता में न खपा सके।

इनकी भाषा इनकी खास अपनी भाषा है, इनकी वर्णनप्रणाली इनकी खास वर्णन प्रणाली है, इनके भाव स्वयं इनके ही हैं। इनकी पदावली पर 'छाप' की मुहर लगी हुई है। बंगाल के सैकड़ों कवियों ने इनके अनुकरण पर कविताएँ की, किन्तु कोई भी इनकी छाया न छू सके।

वे एक अजीब कवि हो गये हैं। राजा की गगनचुम्बी अट्टालिका से लेकर गरीबों की टूटी हुई फूस की झोपड़ी तक में इनके पदों का आदर है। भूतनाथ के मन्दिर और 'कोहबर-घर' में इनके पदों का समान रूप से सम्मान है।

कोई मिथिला में जाकर तमाशा देखे। एक शिवपुजारी, डमरू हाथ में लिये, त्रिपुंड रमाये जिस प्रकार 'कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ' गाते गाते तन्मय होकर अपने-आपको भूल जाता है, उसी प्रकार नववधू को कोहबर में ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ 'सुन्दरि चललिहुँ पहु घर न', चाइतहि लागु परम डर ना' गाकर नव वर वधू के हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द स्रोत में डुबो देती हैं। जिस प्रकार नवयुवक 'सम्न-परस खसु अम्बर रे देखलि धनि देह' पढ़ता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमांचित हो जाता है उसी प्रकार एक वृद्ध 'तातल सैकत बारिबिन्दु सम सुत मित रमनि समाज, तोहे बिसारि मन ताहि समरपिनु अब मझु हब कोन काजा। माधव, हम परिनाम निरासा।' गाता हुआ अपने नयनों से दो चार अश्रु बिन्दु गिराने लगता है।

विद्वद्वर ग्रियर्सन का यह कहना कितना सत्य है—

Even when the Sun of Hindu religion is set when belief and faith in Krishna and in that medicine of 'disease of existence' the hymns of Krishna's love, is extinct, still the love borne for songs of Vidyapati in which he tells of Krishna & Radha will never be diminished".

"हिन्दू-धर्म के सूर्य का अस्त भले हो जाय—वह समय भी आ जाय जब राधा और कृष्ण में मनुष्यों का विश्वास और श्रद्धा न रहे; और कृष्ण के प्रेम की स्तुतियों के लिये, जो इहलोक में हमारे अस्तित्व के रोग की दवा है, अनुराग जाता रहे, तो भी विद्यापति के गान के लिये, जिसमें राधा और कृष्ण का उल्लेख है—लोगों का प्रेम कभी कम न होगा।"

डाक्टर ग्रियर्सन के कथन का प्रमाण बंगाल में जाकर देखिये। सहस्र-सहस्र हिन्दू आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण-विषयक पदों का कीर्त्तन करते हुए अपने-आपको भूल जाते हैं।

एक जगह पुनः आप लिखते हैं—"The glowing stanzas of Vidyapati are read by the devout Hindu with a little of the baser of the human sensuousness as the songs of the Solmon by the Christian priests."

"जिस प्रकार खीष्ट पादरी सोलमन के गान गाते हैं, उसी प्रकार भक्त हिन्दू विद्यापति के अनूठे पदों को पढ़ते हैं।"

इनकी उपमाएँ अनूठी और अछूती हैं। इनकी उत्प्रेक्षाएँ कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं। रूपक का इन्होंने रूप खड़ा कर दिया है। स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनाएँ ओत-प्रोत हैं। श्रुत्यनुप्रास इनके पदों का स्वाभाविक आभूषण है। प्रधान काव्यगुण—प्रसाद और माधुर्य—इनके पद-पद से टपकते हैं।

प्रकृति-वर्णन में तो इन्होंने कमाल किया है—इनका वसंत और पावस का वर्णन पढ़कर मंत्र-मुग्ध हो जाना पड़ता है। इनके वसंत और पावस में मिथिला की खास छाप है। वसंत में मिथिला की शस्य-श्यामला भूमि अलंकृत और दर्शनीय हो जाती है। पावस में, हिमालय निकट होने के कारण, यहाँ बिजलियाँ जोर से कड़कती हैं—प्रायः कुलिशपात होता है। इन्होंने इसका बड़ा ही अपूर्व वर्णन किया है।

इनका मिलन और विरह का वर्णन भी देखने योग्य है। हिन्दी-कवियों के विरह-वर्णन में, 'घन आनन्द' आदि दो-चार को छोड़कर, हृदय-वेदना का सूक्ष्म विश्लेषण प्रायः नहीं देखा जाता। विद्यापति का विरह-वर्णन प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है—उसमें वेदना है, व्याकुलता है, प्रियतमा की प्रियतम के प्रति तल्लीनता है, कोरी हाय-हाय वहाँ नहीं है!

—::०::—

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

वन्दना

[१]

नन्दक नन्दन कदम्बक तरु-तर
धिरे धिरे मुरलि बजाव ।
समय सँकेत-निकेतन बइसल
बेरि बेरि बोलि पठाव ॥ २॥
सामरि, तोरा लागि
अनुखन विकल मुरारि ॥ ३ ॥
जमुनाक तिर उपवन उदवेगल
फिरि फिरि ततहि निहारि ।
गोरस बेचए अवइत जाइत
जनि जनि पुछ वनमारि ॥ ४ ॥

१—नन्दक नन्दन = नन्द के बेटे, श्रीकृष्ण । तर = तले, नीचे । २—सँकेत-निकेतन = मिलने का सांकेतिक स्थान । बइसल = बैठे हुए । बेरि-बेरि = बार-बार । संकेत-स्थान में बैठकर (मिलन का समय आया जान) बार-बार बुला रहे हैं (वंशी में पुकार रहे हैं)—"नामसमेतम् कृत-संकेतम् वादयते मृदुवेणुम्"—गीतगोविन्द । ३—सामरि = श्यामा, सुन्दरी;-"शीते सुखोष्णसर्वाङ्गी ग्रीष्मे च सुखशीतला । तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते ।" तोरा लागि = तुम्हारे लिये । अनुखन = प्रतिक्षण ।

४—५ तिर = तट । उदवेगल = उद्विग्न होकर, व्याकुल । ततहि = उसी ओर । जनि जनि = प्रत्येक स्त्री से (पुंल्लिंग-जन स्त्री०-जनि) यमुना के किनारे उपवन में (भ्रमण करते हुए) व्याकुल होकर पुनः पुनः उसी

लख-लख लछिमी चरन-तल नेओछए,
रंगिनि हेरि बिभोरि।
कर अभिलाख मनहि पद-पंकज
अहोनिसि कोर अगोरि ॥ ६ ॥

[३]

देवी-वन्दना

जय जय भैरवि असुर-भयाउनि
पसुपति-भामिनि माया।
सहज सुमति बर दिअओ गोसाउनि
अनुगति गति तुअ पाया ॥ २ ॥
बासर-रैनि सबासन सोभित
चरन, चन्द्रमनि चूड़ा।
कतओक दैत्य मारि मुँह मेलल,
कतओ उगिल कैल कूड़ा ॥ ४ ॥

ने) मथन करते हैं। (वह श्रीकृष्ण भी)जिसे देखकर (मूर्च्छित हो) पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। ५—लछिमी = लक्ष्मी। नेओछए = न्योछावर करते हैं। रंगिनि = सुन्दरी। बिभोरि = बेसुध होकर। ६—अहोनिसि = अहर्निश, दिन-रात। कोर = गोद। अगोरि (मैथिली) = पहरा देकर रखना। मन में अभिलाषा होती है कि इस पद-कमल को रात दिन गोदी में 'अगोरकर' रक्खें।

२—दिअओ = दो। गोसाउनि...गोस्वामिनी, भगवती। पाया = पैर। ३—बासर = दिन। रैनि = रात। सबासन = शवासन = मुर्दे पर आसन। चन्द्रमनि = चन्द्रकान्तमणि। चूड़ा = सिर, । ४—कतओक =

मामर बरन, नयन अनुरंजित,
जलद-जोग फुल कोका।
फट फट विकट ओठ-पुट पाँडरि
लिधुर-फेन उठ फोका॥ ६॥
घन घन घनए घुघुर कत बाजय,
हन हन कर तुअ काता।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र विसरु जनि माता॥ ८॥

कितना ही। मेलल = रक्खा। कूड़ा = मिट्टी का ढेर। अनुरंजित = रंगा हुआ, लाल। जल्द-जोग फुल कोका = बादल में कुमुदिनी फूले हों। पाँडरि = एक लाल फूल। फोका = बुदबुद। ७—काता = कत्ता, तलवार।

वय:-सन्धि

[४]

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल।
स्रवनक पथ दुहु लोचन लेल॥२॥

वचनक चातुरि लहु-लहु हास।
धरनिये चाँद करल परगास॥४॥

मुकुर लई अब करइ सिंगार।
सखि पुछइ कइसे सुरत-बिहार॥६॥

निरजन उरज हेरइ कत बेरि।
हँसइ से अपन पयोधर हेरि॥८॥

पहिल बदरि-सम पुन नवरंग।
दिन-दिन अनँग अगोरल-अंग॥१०॥

माधव पेखल अपुरुब बाला।
सैसव जौवन दुहु एक भेला॥१२॥

विद्यापति कह दुहु अगेआनि।
दुहु एक जोग इह के कह सयानि।

१—सैसव = शिशुता, बचपन। जौवन = जवानी। २—दोनों आँखों ने कानों की राह पकड़ी = कटाक्ष करना प्रारम्भ किया। ३—लहु = लघु, मंद। हास = हँसी। ४—परगास = प्रकाश। ५—मुकुर = आईना। ६—सुरत-बिहार = काम-क्रीड़ा। ७—निरजन = एकान्त में। उरज = पयोधर = स्तन। हेरइ = देखती है। "स्मितं किंचिद्वक्त्रं सरलतरलो दृष्टिविभवः। परिस्पन्दो वाचामपि नवविलासोक्तिसरसः। गतीनामारम्भः किसलयितलीलापरिकरः। स्पृशन्त्यास्तारुण्यं किमिह न हि रम्यं मृगदृशः॥" ९—बदरि—बेर का फल। नवरंग—नारंगी, नीबू।

[५]

सैसव जौवन दरसन भेल।
दुहु दल-बले दन्द परि गेल ॥२॥

कबहुँ बाँधय कच कबहुँ बिथारि।
कबहुँ झाँपय अंग कबहुँ उघारि ॥४॥

थिर नयन अथिर किछु भेल।
उरज उदय-थल लालिम देल ॥६॥

चंचल चरन, चित चंचल भान।
जागल मनसिज मुदित नयान ॥८॥

विद्यापति कह सुनु वर कान।
धैरज धरह मिलायब आन ॥१०॥

कुच पहले बेर के समान छोटे थे, पुनः नारंगी-से हुए। १०—अनंग = कामदेव। अगोरल = पहरा देने लगा, डेरा डाल दिया। ११—पेखल = देखा। अपुरुब = अपूर्व। १२—भेला = भया, हुआ। १४—के कह = कौन कहता है?

२—दन्द = द्वन्द्व = युद्ध। परिगेल = पड़ गया, शुरू हो गया, ठन गया। दोनों [शैशव और यौवन] के सैन्यबल में द्वन्द्व युद्ध छिड़ गया। ३—कच = केश। बिथारि = खोल देना। ४—अंग = देह, [यहाँ छाती]। ५—अथिर = चंचल। ६—उरज = कुच। उदयथल—उगने का स्थान। देल = दिया। कुचों के उत्पन्न होने के स्थान में लालिमा छा गई। ७—भान = मालूम होना। पैर चचल थे हो, अब चित्त भी चंचल मालूम होता है। ८—मुदित = बंद। नयान—आँखें। कामदेव जग तो गया पर उसकी आँखें बन्द ही हैं, अभी पूरी नहीं खुलीं। ९—कान = कान्ह, कृष्ण। १०—आन = लाकर।

[६]

सैसव जौवन दरसन भेल !
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ॥२॥

मदन क भाव पहिल परचार ।
भिन जन देल भिन्न अधिकार ॥४॥

कटि क गौरव पाओल नितम्ब ।
एक क खीन अओक अवलम्ब ॥६॥

प्रगट हास अव गोपत भेल ।
उरज प्रगट अव तन्हिक लेल ॥१०॥

चरन चपल गति लोचन पाव ।
लोचन क धैरज पदतल जाव ॥१२॥

नव कविसेखर कि कहइत पार ।
भिन भिन राज भिन्न वेवहार ॥१२॥

२—मनसिज = काम । दोनों को राह में देखते हुए कामदेव ने [बाला के शरीर में] गमन किया । ३—पहिल परचार = प्रथम प्रचारित हुआ । ५— कटि क = कमर का । गौरव = गुरुता । नितम्ब = चूतड़ । ६—खीन = क्षीण, पतला । अओक = अन्य का = दूसरे का । ७, ८—गोपत = गुप्त । तन्हिक = उसका । प्रकट हँसी अव गुप्त हुई और उसकी प्रकटता अव कुचों ने ले ली । १०—धैरज = धीरता । 'काव्यप्रकाश' में कहा है—श्रोणीबन्धस्त्यजति तनुतां सेवते मध्यभागः । पद्भ्यां मुक्तास्तरलगतयः संश्रिता लोचनाभ्याम् ॥ वक्षःप्राप्तं कुचसचिवतामद्वितं यन्तु वक्त्रम् । तद्गात्राणां गुणविनिमयः कल्पिता यौवनेन । ११—नवकविसेखर = विद्यापति का उपनाम ।

[७]

किछु-किछु उतपति अंकुर भेल।
चरन-चपल-गति लोचन लेल ॥२॥

अब सब खन रहु आँचर हात।
लाजे सखिगन न पुछए बात ॥४॥

कि कहब माधव वयस क संधि।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ॥६॥

तइअओ काम हृदय अनुपाम।
रोपल घट ऊँचल कए ठाम ॥८॥

सुनइत रस-कथा थापए चीत।
जइसे कुरंगिनि सुनए संगीत ॥१०॥

सैसव जौबन उपजल बाद।
केओ न मानए जय अवसाद ॥१२॥

विद्यापति कौतुक बलिहारि।
सैसव से तनु छोड़नहि पारि ॥१४॥

१—अङ्कुर = कुचों के अङ्कुर। खन = क्षण। हात = हाथ। ५-६ माधव! वयःसन्धि (की बातें) क्या कहूँ—देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया। ७-८ तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उसके अनुपम हृदय पर घट स्थापित कर उस स्थान को ऊँचा कर दिया। ९—थापए = स्थापित करती है। १०—कुरंगिनि = हरिणी। ११—उपजल बाद = होड़ मचा, झगड़ा आरम्भ हुआ। १२—केओ = कोई। अवसाद = पराजय। १४—शैशव को उनका शरीर छोड़ना ही पड़ेगा।

[८]

पहिल वदरि कुच पुन नवरंग ।
दिन-दिन वादए पिड़ए अनंग ॥२॥

से पुन भए गेल वीजकपोर ।
अब कुच वाढ़ल सिरिफल जोर ॥४॥

माधव पेखल रमनि संधान ।
घाटहि भेटल करति सिनान ॥६॥

तनसुक सुवसन हिरदय लागि ।
जे पुरुष देखब तेकर भागि ॥८॥

उर हिल्लोलित चाँचर केस ।
चामर झाँपल कनक महेस ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनह मुरारि ।
सुपुरुख विलसए से वर नारि ॥१२॥

१—वदरि = वैर = (फल) । नवरंग = नारंगी । २—पिड़ए = पीड़ा देता है । ३–वीजकपोर = बीजपूर, वड़ा (टाभ) नीवू; जैसे वीज क्रमशः वढ़ते-वढ़ते पोर (वृक्ष की मुटाई और गाँठ) वनता है उसी तरह कुच भी दृढ़ और मोटे हो चले । ४–सिरिफल = श्रीफल, वेल । १-४, एक संस्कृत श्लोक है—उद्भेदं प्रतिपद्मपक्कवदरीभावं समेता क्रमात् । पुन्नागाकृतिमाप्य पूगपदवीमारुह्य विल्वश्रियम् ॥ लब्ध्वा तालफलोपमां च ललितामासाद्य भूयोधुना । चंचत् कांचनकुम्भजम्भनमिमावस्याः स्तनौ विभ्रतः ॥ ५—पेखल = देखा । सिनान = स्नान । तनसुक = एक प्रकार का महीन कपड़ा । हिल्लोलित = झूलता हुआ । चाँचर = छितराया हुआ, झाँझर । ९–१०–हृदय पर झाँझरी से वने हुए वाल डोल रहे हैं, मानों सोने के महादेव को चँवर से ढक दिया हो । १२—विलसए = विलास करें ।

[६]

खने खन नयन कोन अनुसरई।
खने खन वसन धूलि तनु भरई ॥२॥

खने खन दसन छटा छुट हास।
खने खन अधर आगे गहु बास ॥४॥

चउँकि चलए खने खन चलु मन्द।
मनमथ-पाठ पहिल अनुबन्ध ॥६॥

हिरदय-मुकुल हेरि हेरि थोर।
खने आँचर दए खने होए भोर ॥८॥

बाला सैसव तारुन भेंट।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ ॥१०॥

विद्यापति कह सुन बर कान।
तरुनिम सैसव चिन्हइ न जान ॥१२॥

—:o:—

१—खने खन = क्षण-क्षण। क्षण-क्षण में आँखें कोण का अनुसरण करती हैं—कटाक्ष करती हैं। २—क्षण-क्षण में अस्तव्यस्त वस्त्र (अंचल धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भरते हैं। ३—दसन = दाँत। हास = हँसी। ४—अधर = होंठ। बास = वस्त्र। ६—अनुबन्ध = भूमिका। ७—हिरदय-मुकुल = हृदय की कली, कुच। ८—भोर = भूल जाना। ६-१०—तारुन = तरुणाई, जवानी। कनेठ = कनिष्ठ = छोटा। बाला के शरीर में बचपन और जवानी की भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है। इन दोनों में कौन बड़ा और कौन छोटा (कौन निर्बल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता। ११—कान = कान्ह, कृष्ण। १२—तरुनिम = जवानी।

नखशिख

[१०]

पीन पयोघर दूवरि गता।
मेरु उपजल कनक लता ॥२॥

ए कान्हु ए कान्हु तोरि दुहाई।
अति अपूरुब देखलि साई ॥४॥

मुख मनोहर अघर रंगे।
फूललि मधुरी कमल संगे ॥६॥

लोचन जुगल भृङ्ग अकारे।
मधुक मातल उड़ए न पारे ॥८॥

भउँहक कथा पूछह जनू।
मदन जोड़ल काजर-धनू ॥१०॥

भन विद्यापति दूतिबचने।
एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१-२, पीन = पुष्ट। पयोघर = कुच। गता = गात, शरीर। मेरु = सुमेरु पर्वत। दुवली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है, मानों सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो। ४—अपूरुब = अपूर्व। साई = उसे। ५-६, अघर = ओष्ठ। रंगे—रंगे हुए, लाल। मधुरी = एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष होता है। सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानों कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो। ७-८, भृंग = भौंरा। मधुक मातल = मधु पीकर मस्त बना हुआ। (उस मुख-कमल में) दोनों लोचन भौंरे के समान हैं (जो मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होने से उड़ नहीं सकते।

[११]

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा।
जत देखल तत कहए न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा ॥२॥
हरिन इन्दु अरविन्द करिनि हेम
पिक बूझल अनुमानी।
नयन बदन परिमल गति तन रुचि
अओ अति सुललित बानी ॥४॥
कुच जुग परसि चिकुर फुजि पसरल।
ता अरुझायल हारा।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल
चाँद बिहिनु सब तारा ॥६॥

१–२—अहा, कैसी सुन्दर नई जवानी है ! जैसा देखा, वैसा कह नहीं सकता, छ अनुपम (पदार्थ) एक ही स्थान पर हैं। ३—इन्दु = चन्द्र । अरविन्द—कमल । करिनि = हथिनी । हेम = सोना । पिक = कोयल । ४—परिमल = सुगन्धि । तनु रुचि = शरीर की कान्ति । हरिन, चन्द्र, कमल, हथिनी, सोना, कोयल—ये छ क्रमश आँख, मुख, शरीर की सुगन्धि, मस्तानी चाल, शरीर की कान्ति और मीठी बोली के उपमान हैं। ५—६, चिकुर = केश । फुजि = खुलकर । बिहिनु = विहीन । दोनों कुचों से स्पर्श करते हुए केश खुलकर छिटके हुए हैं जिनसे (मुक्ता की) माला उलझी हुई है, मानों, सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा को छोड़कर (क्योंकि केश रूपी अन्धकार भी है !) सब तारे मिलकर उगे हों। ७—लोल = चचल । कपोल = गाल । अधर = ओठ ।

लोल कपोल ललित मनि-कुंडल
अधर बिम्ब अध जाई।
भौंह भ्रमर, नासापुट सुन्दर
से देखि कीर लजाई ॥८॥
भनइ विद्यापति से वर नागरि
आन न पावए कोई।
कंसदलन नारायन सुन्दर
तसु रंगिनि पए होई।

बिम्ब—बिम्बफल (लाल होता है)। अध—अधः; नीचे। अधरबिम्ब अध जाई—ओष्ठ की लालिमा देख बिम्बफल नीचे जाता है, हीन मालूम होता है। ८—भ्रमर—भौंरा। भौंह भ्रमर—भौंहें, भ्रमर के समान, काली हैं। नासापुट—नाक। कीर—सुग्गा। १०—कंसदलन नारायण—(१) मिथिला के राजा (२) श्रीकृष्ण। तसु—उसकी। रंगिनि—स्त्री।

—:०:—

"इश्क को दिल में दे जगह 'अकबर'
इल्म से शायरी नहीं आती।"

[१२]

माधव की कहब सुन्दरि रूपे।
कतेक जतन विहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे॥ २॥

पल्लव-राज चरन-युग सोभित
गति गजराजक भाने।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने॥ ४॥

मेरु उपर दुइ कमल फुलायल
नाल बिना रुचि पाई।
मनि-मय हार धार बहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई॥ ६॥*

---

*नोट—"अद्‌भुत एक अनूपम बाग" शीर्षक सूरदास का एक प्रसिद्ध-पद्य है। साहित्य-संसार में उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। सूरदास से डेढ़ सौ वर्ष पहले रची गई, यह कविता पढ़कर पाठक विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें!

१—की—क्या। २—विहि—विधि, ब्रह्मा। सरूपे—सत्य, प्रत्यक्ष। ३—पल्लवराज—कमल। ४—कनक-कदलि = सोने के केले का थम्भ (जाँघ की उपमा)। सिंह—(कटि की उपमा)। मेरु—पहाड़ (उभड़ी हुई छाती)। ५—दुइ कमल—दो कमल (दोनों कुच)। नाल—डंटी। रुचि—शोभा। ६—(कुचों पर) मणि माला रूपी गंगा की धारा बह रही है। इसीसे—उसके स्रोत में—(बिना नाल के भी दोनों कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते।

अधर बिम्ब सन, दशन दाड़िम-बिजु
रवि ससि उगथिक पासे।
राहु दूर बसि नियरो न आबथि
तँ नहि करथि गरासे ॥८॥

सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने।
सारँग उपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधु पाने ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
एहन जगत नाहि आने।
राजा सिवसिंघ रूपनारायण—
लखिमा देइ पति भाने ॥१२॥

७—अधर—ओष्ठ, बिम्बफल। सन—ऐसा। दशन—दाँत। दाड़िम अनार। बिजु—बीज, दाना। रवि-ससि उगथिक पासे—सूर्य-चन्द्र एक साथ उगे हैं (चन्द्रमा ऐसे मुख में बाल सूर्य-सा लाल सिंदूर है)। ८—राहु (केश की उपमा)। नियरो—निकट। ९—सारँग (१) हरिण। सारँग (२) कोयल। सारँग (३) कामदेव। सारँग तसु समधाने—उसके संधान में, कटाक्ष में—काम बसता है। १०—सारँग (४) कमल (ललाट)। दस (यहाँ बहुवाची)। सारँग (५) भौंरा (केशों के लटके हुए गुच्छे)। मधुपाने—रस पीकर। (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) हैं, जो मधुपान कर केलि कर रहे हैं। एहन—ऐसा। आने—दूसरा।

[१३]

जुगल सैल सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ॥१॥
फुललि मधुरि फुल सिंदुर लोटाएल
पाँति बइसलि गज-मोति रे।
आज देखल जति के पतिआएत
अपुरुब विहि निरमान रे ॥ ३ ॥
बिपरित कनक-कदलि-तर सोभित
थल-पकज के रूप रे।
तथहु मनोहर बाजन बजाए
जनि जागे मनसिज भूप रे ॥४॥
भनइ विद्यापति पूरब पुन तह
ऐसनि भजए रसमन्त रे।
बुझल सकल रस नृप सिवसिंघ
लखिमा देइ कर कन्त रे ॥७॥

१—जुगल सैल—दो पहाड़ (कुचों की उपमा)। सिम—सीमा में, निकट। हिमकर—चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल (मुख की उपमा)। दुइ जोति—दो ज्योतियाँ (दो आँखें)। २—मधुरि फूल—एक तरह का लाल फूल। फूली हुई मधुरी (फूल) सिंदूर पर लोटती है और, दाँत क्या है, गजमुक्ताओं की पंक्ति बैठी है। ४—विपरित—उलटा। कनक कदली (जाँघ की उपमा)। थल पकज—स्थल कमल (पैरों की उपमा)। ५—तथहु—वहाँ भी। मनसिज—कामदेव। ६—पुन—पुण्य। ऐसनि—ऐसा। रसमत—रसज्ञ, सुरसिक।

चांद-सार लए मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे
अमियि घोय आँचर धनि पोछलि
दह दिसि भेल उँजोरे ॥ २ ॥

कामिनि कोने गढ़ली ।
रूप सरूप मोयँ कहइत असंभव
लोचन लागि रहली ॥ ४ ॥

गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझ-खानि खीनि निमाई ।
भागि जाइत मानसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुझाई ॥ ६ ॥

भनइ विद्यापति अदभुत कौतुक
ई सब वचन सरूपे ।
रूपनारायन ई रस जानथि
सिवसिंघ मिथिला भूपे ॥ ८ ॥

१-२—चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की, (जिसे देखते ही) चकोर की आँखें चकित हुईं। बाला ने (अपने मुख-चन्द्र को) अंचल से पोंछकर जो अमृत धो बहाया, वही (चाँदनी के रूप में) दशो दिशाओं में प्रकाशित हुआ। ३—कोने = किसने। गढ़ली = गढ़ा, रचना की। ४—भरे = भार से। माझ खानि = मध्य भाग में (कटि)। खीनि = क्षीण, पतली। निमाई = निर्माण की। ६—त्रिवलिलता = त्रिवली = पेट में पड़ी तीन रेखाएँ।

[१५]

सुधामुखि के बिहि निरमिल बाला।
अपरुब रूप मनोभवमगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥ २ ॥

सुन्दर बदन चारु अरु लोचन
काजर रजित भेला।
कनक-कमल माझ काल भुजगिनि
स्रीयुत खजन खेला ॥ ४ ॥

नाभि विवर सयँ लोम लतावलि
भुजगि निसास पियासा
नासा खगपति चचु भरम भय
कुच गिरि संधि निवासा ॥ ६ ॥

१—के बिहि = किस विधाता ने। निरमिल = निर्माण किया। २—मनोभव-मगल = कामदेव का शुभ स्वरूप—'मनोभव मगलकलम सहोदरे" —गीतगोविन्द। त्रिभुवन विजयी माला = तीनों भुवनों को पराजित करने वाली माला के समान। ३ ४—बदन = मुखड़ा। भेला = हुआ। माझ = मध्य में। स्रीयुत = सुन्दर। सुन्दर मुख में सुन्दर काजल लगी आँखें हैं, मानों सोने के कमल (मुख) में काल सर्पिणी (अजन) क्रीड़ा कर रही हो, अथवा मानों काल भुजगिनि रूपी आँखें कनक कमलरूपी मुख के बीच सुन्दर (स्रीयुत) खजन की तरह खेल रही हो। ५ ६—विवर = बिल छेद। सयँ = से। लोम-लतावली = बाल-रूपी लताएँ, पक्तिबद्ध बाल। भुजगि = सर्पिणी। निसास = साँस। खगपति = गरुड़। चचु = चोंच। नाभि रूपी बिल से पक्तिबद्ध बाल-रूपी सर्पिणी (नायिका की सुगन्धित)

तिन वान मदन तेजल तिन भुवने
अवधि रहल दुओ वाने।
विधि वड़ दारुन वधए रसिकजन
सोंपल तोहर नयाने॥ ८॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
इस रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने॥ १०॥

दाँतों की प्यास में (आगे बढ़ी), किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझ कर डर से कुच रूपी (दो) पर्वतों के बीच के (संकीर्ण) मिलन-स्थान में आ वसी। ७-८—तिन = तीन। तेजल = छोड़ा। अवधि = अवशिष्ट, वाकी। रहल = रहा। दओ = दो। वधए = वधने को, हत्या करने को। तोहर = तुम्हारे। नयाने = आँखें। कामदेव को पंचवाण कहते हैं, सो मदन ने अपने (पाँच वाणों में से) तीन वाण तो तीनों लोकों में छोड़े, शेष उसके दो वाण रह गये। ब्रह्मा बड़ा ही निष्ठुर है, (उन वचे हुए दो वाणों को) रसिकों की हत्या करने के लिये तुम्हारे नयनों को सौंप दिया। ९—इह रस केओ पए जाने = यह रस कोई कोई ही जानता है। १०—देइ = देवी। रमाने = रमण, पति

"हृदय-सिन्धु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना॥
जो वरसै वर वारि-विचारू। होहिं 'कवित'-चिन्तामनि चारू॥"

[१६]

आइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे
विहि, निरमाओल आनि॥२॥
हस्ति-गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज-कुमारि।
जिनकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओन पदारथ चारि॥४॥
नील बसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल चिकुर सँभारि।
तापर भमरा पिबए रस सजनी गे
बइसल पाँखि पसारि॥६॥
केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि।
बिद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि॥८॥

१—नागरि = नगर निवासिनी, सुचतुरा। आगरि = अग्रगण्या। २—सनि = समान। निरमाओल आनि = लाकर बनाया।—३—जकाँ = ऐसा। ४—जिनकर = जिसके। एहनि = ऐसी। ५—चिकुर = केश। ६—तापर = उसपर। भमरा = भौंरा। ७—केहरि = सिंह। अछि = (अस्ति) है। अम्बुज = कमल। धारि = धारण करो, समझो। अवधारि = निश्चय।

[१७]

चिकुर-निकर तम-सम
पुनु आनन पुनिम ससी।
नयन-पंकज के पतिआओत
एक ठाम रहु वसी ॥ २ ॥
आज मोयँ देखलि वारा।
लुवुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥ ४ ॥
सहज सुन्दर गोर कलेवर
पीन पयोधर सिरी।
कनक-लता अति विपरित
फरल जुगल गिरी ॥ ६ ॥
भन विद्यापति विहिक घटन
के न अद्भुत जान।
राय सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥ ८ ॥

१–२—चिकुर-निकर = केश समूह। पुनिम = पूर्णिमा का। ठाम = स्थान। केश समूह अन्धकार के समान है, फिर, मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर-विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मोयँ = मैंने। वारा = वाला। ४—लुवुध = लुब्ध, अनुरक्त। चालव = चालन करने-वाला। मयन = काम। की परकारा = किस प्रकार। ५—सिरी = श्री, शोभायुक्त। ६—फरल = फला। ७—घटन = सृष्टि।

[१८]

सजनी, अपरुप पेखल रामा।
कनक-लता अवलम्बन ऊअल
हरिन - हीन हिमधामा ॥ २ ॥
नयन-नलिन दओ अंजन रंजइ
भौंह विभग - बिलासा।
चकित चकोर-जोर विधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥ ४ ॥
गिरिवर-गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज - मोतिक हारा।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारत सुरसरि-धारा ॥ ६ ॥
पएसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पाबए बहुभागी।
विद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥ ८ ॥

१—अपरुप = अपूर्व। पेखल = देखा। रामा = सुन्दरी। २—कनक-लता = सोने की लता (देह)। ऊअल = उदित हुआ। हरिन हीन हिम धामा = निष्कलंक चन्द्र (मुख)। ३—नलिनी = कमलिनी। दओ = दो। भौंह बिभग-बिलासा = कुटिल कटीली भौंहों—भवों में भाव भंगी। ४—जोर = जोड़ा। बाँधल = बाँधा है। पासा = पास में, रस्सी में। ५ ६ गिरिवर गरुअ = पहाड़ के ऐसे भारी। पयोधर = कुच। गिम = ग्रीवा, कण्ठ। गजमोतिक = गजमुक्ता को। कम्बु = शंख। कनक = सोना। पहाड़

[१६]

कनक-लता अरविन्दा।
दमना माझ उगल जनि चन्दा॥ २॥
केहु कहै सैवल छपला।
केहु बोले नहि नहि मेघ झपला॥ ४॥
केहु कहे भमए भमरा।
केहु बोले नहि नहि चरए चकोरा॥ ६॥
संसय परल सब देखी।
केहु बोलए ताहि जुगुति विसेखी॥ ८॥
भनई विद्यापति गावे।
बड़ पुन गुनमति पुनमत पावे॥१०॥

ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानों, कामदेव शंख (कण्ठ) में भरकर, सोने के महादेव (कुचों) पर गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो। ७—पएसि=पैठकर, जाकर। पयाग= प्रयाग में। जाग=यज्ञ। सत=शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१—२, दमना=द्रोणलता। माँझ=में। उगल=उदित हुआ। जनि=मानों। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण-लता पर चन्द्रमा उगा है। २—३—केहु=कोई। कहै=कहता है। सैवल, सेवार। छपला=छिपा हुआ। ४—५—झपला=ढँका हुआ। ५—भमए, भमरा=भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए=चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परल=पड़ गया। १०—पुन=पुण्य से। पुनमत= पुण्यवंत।

[१८]

सजनी, अपरुप पेखल रामा ।
कनक-लता अवलम्बन ऊअल
हरिन-हीन हिमधामा ॥ २ ॥
नयन-नलिन दओ अंजन रंजइ
भौंह विभंग-विलासा ।
चकित चकोर-जोर विधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥ ४ ॥
गिरिवर-गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज-मोतिक हारा ।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारत सुरसरि-धारा ॥ ६ ॥
पएसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पावए बहुभागी ।
विद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥ ८ ॥

१—अपरुप = अपूर्व । पेखल = देखा । रामा = सुन्दरी । २—कनक-लता = सोने की लता (देह) । ऊअल = उदित हुआ । हरिन-हीन हिमधामा = निष्कलंक चन्द्र (मुख) । ३—नलिनी = कमलिनी । दओ = दो । भौंह विभंग-विलासा = कुटिल कटीली भौंहों—भवों में भाव भरी । ४—जोर = जोड़ा । बाँधल = बाँधा है । पासा = पास में, रस्सी में । ५-६ गिरिवर गरुअ = पहाड़ के ऐसे भारी । पयोधर = कुच । गिम = ग्रीवा, कण्ठ । गजमोतिक = गजमुक्ता की । कम्बु = शंख । कनक = सोना । पहाड़

[१६]

कनक-लता . अरविन्दा ।
दमना माझ उगल जनि चन्दा ॥ २ ॥
केहु कहै सैवल छपला ।
केहु बोले नहि नहि मेघ झपला ॥ ४ ॥
केहु कहे भमए भमरा ।
केहु बोले नहि नहि चरए चकोरा ॥ ६ ॥
संसय परल सब देखी ।
केहु बोलए ताहि जुगुति विसेखी ॥ ८ ॥
भनई विद्यापति गावे ।
बड़ पुन गुनमति पुनमत पावे ॥१०॥

ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानों, कामदेव शंख (कण्ठ) में भरकर, सोने के महादेव (कुचों) पर गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो। ७—पएसि = पैठकर, जाकर। पयाग = प्रयाग में। जाग = यज्ञ। सत = शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१—२, दमना = द्रोणलता। माँझ = में। उगल = उदित हुआ। जनि = मानों। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण-लता पर चन्द्रमा उगा है। ३ – ३—केहु = कोई। कहै = कहता है। सैवल, सेंवार। छपला = छिपा हुआ। ४—५—झपला = ढँका हुआ। ५—भमए, भमरा = भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए = चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परल = पड़ गया। १०—पुन = पुण्य से। पुनमत = पुण्यवंत।

[२०]

कबरी-भय चामरि गिरि-कन्दर
मुख-भय चाँद अकासे।
हरिन नयन-भय, सर-भय कोकिल
गति-भय गज बनवासे ॥ २ ॥
सुन्दरि, किए मोहि सँभासि न जासि।
तुअ डर इइ सब दूरहि पलायल
तुहुँ पुन काहि डरासि ॥ ४ ॥
कुच-भय कमल-कोरक जल मुदि रहु
घट परवेस हुतासे।
दाडिम सिरिफल गगन बास करु
सम्भु गरल करु ग्रासे ॥ ६ ॥
भुज भय पंक मृनाल नुकाएल
कर-भय किसलय काँपे।
कवि-सेखर भन कर कत ऐसन
कहय मदन परतापे ॥ ७ ॥

१—कबरी = केश। चामरि = चँवरवाली गौ। २—सर = स्वर, बोली। ३—किए = क्यों। सँभासि = बातचीत करके। जासि = जाती है। सुन्दरी, क्यों मुझसे बातें नहीं कर जाती! ४—पलायल = भाग गया। ५—कमल-कोरक = कमल की कली। घट परवेस हुतासे = घड़ा अग्नि में प्रवेश करता है। ६—दाडिम = अनार। सिरिफल—बेल। गगन = आकाश। सम्भु = शिव। गरल = विष। मृनाल = कमल-नाल। नुकाएल = छिप गया। कर = हाथ। किसलय = नवीन पत्ता।

[२१]

रामा, अधिक चंगिम भेल ।
कतने जतन कत अदवुद, विहि विहि तोहि देल ॥२॥

सुन्दर वदन सिंदुर-बिन्दु सामर चिकुर भार ।
जनि रवि-ससि संगहिं ऊगल पाछ कय अंधकार ॥ ४ ॥

चंचल लोचन बाँक निहारए अंजन शोभा पाय ।
जनि इन्दीवर पवन-पेलल अलि भरे उलटाय ॥ ६ ॥

उनत उरोज चिर झपावए पुनु पुनु दरसाय ।
जइयो जतने गोअए चाहए हिमगिरि न नुकाय ॥ ८ ॥

एहनि सुन्दरि गुनक आगरि पुनें पुनमत पाव ।
ई रस विन्दक रूपनरायन कवि विद्यापति गाव ॥ १० ॥

१—रामा = सुन्दरि । चंगिम = शोभामयी । भेल = हुई । २—कतने = कितना । कत = कितना । अदवुद = अद्भुत । विहि = विधि, ब्रह्मा । विहि = विधि, प्रकार, ढंग । अथवा विहि-विहि = चुन-चुनकर । देल = दिया । ३—वदन = मुख । सामर = काला । चिकुर = केश । ४. ऊगल = उदित हुआ । पाछ = पीछे । कए = करके । ५—बाँक = तिरछा । निहारए = देखती है । ६—इन्दीवर = कमल । पवन-पेलल = पवन द्वारा आन्दोलित । अलि भरे = भौंरे के भार से । उलटाय = उलट रहा हो । ७—उनत = उन्नत, उभड़े हुए । उरोज = कुच । चिर = चीर से, साड़ी से । ८—जइओ = यद्यपि । जतने = यत्न से । गोअए = गोपन करना, छिपाना । हिम = वर्फ, साड़ी । गिरि = पहाड़ (कुच) । अथवा हिमगिरि = हिमालय पहाड़ (कुच) । नुकाय = छिपना । ९—एहनि = ऐसी । पुनें = पुण्य से ही । पुनमत = पुण्यवन्त । १०—विन्दक = ज्ञाता ।

[२]

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचक तरल तरङ्ग ।
अकास पताल बस सेओ कइसे मेल अस
चाँद सरोरुह संग ॥ २ ॥
विहि निरमलि रामा दोसर लछि समा
भल तुलाएल निरमान ॥ ३ ॥
कुच-मंडल सिरि हेरि कनक-गिरि
लाजे दिगन्तर गेल ।
केओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ॥ ५ ॥
माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाय जनु
विधि अनुसए भल साजि ।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जनि
जतन सिरिजु रोमराजि ॥ ७ ॥
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त ।
सिरि सिवसिंघ राउपुरुख सुकृत पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ॥ ६ ॥

३—लछि = लक्ष्मी । तुलाएल = तुल्य हुआ, समान हुआ । ४—सिरि = श्री, शोभा । ६ माझ खीनि = बीच में पतली (कटि) । भरे = बोझ से । भाँगि जाय = टूट जाय । अनुसए = आशंका । ७—पटोर = रेशम । सिरिजु = बनाया । रोमराजि = केश-समूह ।

सद्य: स्नाता

[२३]

कामिनि करए सनाने।
हेरितहि हृदय हनए पँचवाने ॥२॥

चिकुर गरए जलधारा।
जनि मुख-ससि डर रोअए अँधारा ॥४॥

कुच-जुग चारु चकेवा।
निअ कुल मिलिअ आनि कोन देवा ॥६॥

ते संका भुज-पासे—
बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे ॥८॥

तितल वसन तनु लागू।
मुनिहुक मानस मनमथ जागू ॥१०॥

भनइ विद्यापति गावे।
गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

२—हेरितहि = देखते ही। हनए = मारती हैं। पँचवाने = कामदेव के वाण। ३, ४—चिकुर = केश। गरए = गिरती है। जनि = मानों। रोअए = रोता है। अँधारा = अंधकार। केशों से जल की धारा गिर रही है, मानों (मुखरूपी) चन्द्रमा के डर से (केश रूपी) अंधकार रो रहा हो। ६—निअ = निज। मिलिअ = मिलने को। आनि कोन देवा = कोन आनि देवा = किसने ला दिया है। ७, ८—कहीं ये कुच-रूपी चकेवा आकाश में न उड़ जायँ, इसी शंका से अपनी भुजाओं से उन्हें बाँध रक्खा है। ९—तितल = भींगा हुआ। १०—मानस = मन। मनमथ = कामदेव। धनि = रमणी। १२—जन = पुरुष।

[२४]

आजु मझु सुभ दिन भेला।
कामिनि पेखल सनानक बेला ॥२॥

चिकुर गरए जलधारा।
मेह बरिस जनु मोतिम हारा ॥४॥

बदन पोंछल परचूरे।
माजि धएल जनि कनक-मुकूरे ॥६॥

तेंइ उदसल कुच-जोरा।
पलटि बैसाओल कनक-कटोरा ॥८॥

निबि - बंध करल उदेस।
विद्यापति कह मनोरथ सेस ॥१०॥

१—मझु = मेरा। भेला = हुआ। पेखल = देखा। बेला = समय। ३, ४—चिकुर = केश। गरए = गिरती है।—(काले) केशों से (उज्ज्वल) जल की धारा गिर रही है, मानो बादल (केश) मोती की माला (जलधारा) की वर्षा कर रहे हों। ५—वदन=मुख। पोंछल = पोंछा, परिमार्जित किया। परचूरे = प्रचुर रूप से, अच्छी तरह। ६—माजि धएल = माँज कर रख दिया, साफ कर रख दिया। कनक मुकूरे = सोने का दर्पण। ७—तेंइ = उससे—(मुख धोते समय)। उदसल = उकस गया, प्रकट हुआ। जोरा = जोड़ा, युगल। ८—पलटि = उलटकर। बैसाओल = बिठला दिया, रख दिया। ९—निबि = कोंचा, फुफनी। करल = किया। उदेस = शिथिल। १०—सेस = समाप्त।

[२५]

जाइत पेखल नहाएलि गोरी।
कति सयँ रूप धनि आनलि चोरी ॥२॥
केस निंगारइत वह जल-धारा।
चमर गरए जनि मोतिम-हारा ॥४॥
अलकहि तीतल तैं अति शोभा।
अलिकुल कमल वेढ़ल मधुलोभा ॥६॥
नीर निरंजन लोचन राता।
सिंदुर मँडित जनि पंकज-पाता ॥८॥
सजल चीर रह पयोधर-सीमा।
कनक-बेल जनि पड़ि गेल हीमा ॥१०॥
ओ नुकि करतहि चाहि किए देहा।
अवहि छोड़व मोहि तेजव नेहा ॥१२॥
ऐसन रस नहि पाओव आरा।
इथे लागि रोइ गरए जल धारा ॥१४॥
विद्यापति कह सुनह मुरारि।
वसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२—कति सयँ = कहाँ से। आनलि चोरी = चुरा लाई। ३—निंगारइत = गारते समय; पानी निचोड़ते समय। ४—चमर = चँवर से। ५—अलक = केश। तीतल = भींगा हुआ। तैं = इससे। ६—अलिकुल = भ्रमर-गण। वेढ़ल = घेर लिया। ७—पानी में स्नान करने के कारण आँखें अंजन-हीन और लाल हो गई हैं। ८—पंकज-पाता = कमल का पत्ता। ९—पयोधर-सीमा = कुचों पर। १०—कनक-बेल = सोने की लता या

[२६]

नहाए उठल तीर राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरब बयान ॥२॥
सखि हे, अपरुब चातुरि गोरि।
सब जन तेजि कए अगुसरि संचरि
आड़ बदन तँह फेरि ॥४॥
तहि पुन मोति हार तोरि फेंकल
कहइत हार टुटि गेल।
सब जन एक-एक चुनि संचरु
श्याम-दरस धनि लेल ॥६॥
नयन-चकोर कान्हु-मुख ससि-वर
कएल अमिय-रस-पान।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारब
कवि विद्यापति भान ॥८॥

बिल्व फल। पड़ि गेल = पड़ गया। हीमा = बर्फ। ११—ओ = वह (वस्त्र)। नुकि करतहि चाहि = छिपाना चाहता है। किए = क्यों। १३—ऐसन = ऐसा। आरा = अन्यत्र। १४ = इये = इसलिये।

१—राइ = राधा। हेरल = देखा। कान = कृष्ण। २—नत = नीचे। बयान = बदन, मुख। ४—अगुसरि = अग्रसर, आगे। संचरि = जाकर। आड़ = ओट। ५—तोरि फेंकल = तोड़कर फेंक दिया। टुटि गेल = टूट गया। ६—लेल = लिया। ७—कएल = किया। अमिय = अमृत।

प्रेम-प्रसंग

श्रीकृष्ण का प्रेम

[२७]

पथ-गति नयन मिलल राधा कान।
दुहु मन मनसिज पूरल संधान ॥ २ ॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।
समय न बूझय अचतुर चोर ॥४॥
बिदगधि संगिनी सब रस जान।
कुटिल नयन कएलन्हि समधान ॥६॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई।
कह कवि-सेखर दुहु चतुराई ॥८॥

१—२, पथगति = राह में जाते हुए। कान = कृष्ण। मनसिज = कामदेव। पूरल = पूरा किया। संधान = बाण का संचालन। पथ में जाते हुए राधाकृष्ण दोनों आँखों से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनों के मन में कामदेव ने अपने बाण का संचालन किया—दोनों के हृदय में काम का संचार हुआ। ३—हेरइत = देखते ही। भेल भोर = बेसुध हुए। ४—समय न बूझए = अवसर नहीं समझता। ५—बिदगधि = विदग्ध, सुरसिका। ६—कुटिल नयन = टेढ़ी चितवन से—इशारे से। कएलन्हि-कर दिया। समधान = सावधान। ७—उरझाई = उलझकर।

—o—

"चरन धरत चिंता करत, चहत न नेकहु सोर।
ढूँढ़त हैं सुबरन सदा, कबि व्यभिचारी चोर ॥"

[२८]

सजनी, भल कए पेखल न भेल।
मेघ-माल सयँ तड़ित-लता जनि
हिरदय सेल दई गेल ॥२॥
आध आँचर खसि आध वदन हसि
आधहि नयन तरङ्ग।
आध उरज हेरि आध आँचर भरि
तबधरि दगधे अनङ्ग ॥४॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतनु कोंचला उपाम।
हार हारल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥६॥
दसन मुकुता पाँति अधर मिलायल
मृदु मृदु कहतहि भासा।
विद्यापति कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पुरल आसा ॥८॥

१—भल कए = अच्छी तरह। पेखल न भेल = देख न सका। २—सय = संग में, साथ में। तड़ित-लता = बिजली। जन = मानों। ३—नयन तरङ्ग = कटाक्ष। ४—उरज = कुच। तबधरि = तब से। दगधे = जलाता है। अनग = काम। ५—कनक कटोरा = सोने का कटोरा (कुच) अतनु = कामदेव। एक तो शरीर गौरवर्ण है और उसपर से (कुच) मानो मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कोंच (बलपूर्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है। ६—जनि बूझि एसन = ऐसा समझ पड़ता है। माना ······। ७—दसन = दाँत। अधर = ओठ। भासा = भाषा, बचन। ८—अतए = इतना ही तो।

[२६]

ससन-परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह।
नव जलधर - तर संचर रे
जनि बिजुरी - रेह ॥२॥

आज देखल धनि जाइत रे
मोहि उपजल रङ्ग।
कनक - लता जनि संचर रे
महि निर अवलम्ब ॥४॥

ता पुन अपरुब देखल रे
कुच-जुग अरबिन्द।
बिगसित नहि किछु कारन रे
सोझा मुख - चन्द ॥६॥

विद्यापति कवि गाओल रे
रस बूझ रसमन्त।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त ॥८॥

१—ससन = श्वसन, पवन। परस = स्पर्श से। खसु = गिर पड़ा। अम्बर = कपड़ा, अंचल। देख = देखा। धनि = बाला। २—जलधर = बादल। तर = तले, नीचे। जनि = मानों। रेह = रेखा। ३—जाइत = जाती हुई। रंग = प्रेम। ४—संचर = आ रही है। निर अवलम्ब = बिना अवलम्ब का। ५—ता = उसपर भी। पुन = पुनः। जुग = दो। अरविन्द = कमल। ६—विगसित = खिला हुआ। सोझा = सम्मुख।

[३०]

अलखित हम हेरि बिहुसलि थोर।
जनि रयनि मेल चाँद इँजोर ॥२॥
कुटिल कटाख लाट पड़िगेल।
मधुकर - डम्बर अम्बर लेल ॥४॥
काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥६॥
लीला कमल भमर धरु बारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥
तेँ भेल बेकत पयोधर सोभ।
कनक कमल हेरि काहि न लोभ ॥१०॥
आघ नुकाएल आध उदास।
कुच कुम्भे कहि गेल अप्पन आस ॥१२॥
से अब अमिल निधि दए गेल संदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥१४॥
भनइ बिद्यापति दुहु मन जागु।
बिसम कुसुम सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित = अलक्ष्य रूप से = बिना दूसरे के देखे। हेरि = देख कर। बिहुसलि = मुस्कुराई। २—रयनि = रजनी, रात। इँजोर = उजला ५—काहिक = किसको। के = कौन। ७—धरु बारि = निवारण कर— कौतुक से भ्रमर को कमल से निवारण कर। ९-तेँ = इससे। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ११, १२, नुकाएल = छिपा हुआ। उदास = प्रकट। कुम्भ = घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रगट कुच-कुम्भ (दिखाकर) वह अपनी आशा कह गई (कि मिलूँगी)। १३—अमिल = अप्राप्य। निधि = खजाना।

[३१]

अम्बर विघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा।
कनक-सम्भु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस-चन्दा ॥ २ ॥
कत रूप कहब बुझाई।
मन मोर चंचल लोचन विकल भेल
ओ नहि अनइत जाई ॥ ४ ॥
आड़ वदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई।
अओंधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग वहि जाई ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
पुहवी नव पँचवाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ ८ ॥

१५—परिसेस = परिशेष, बाकी। १६—विसम = विषम, कठोर। कुसुम-सर = कामदेव का शर।

१—अम्बर = वस्त्र, अंचल। विघटु = हट गया। अकामिक = अकस्मात्। कर = हाथ। झाँपु = ढक लिया। सुछन्द = सुन्दर। अकस्मात् अंचल हट गया, (तब) कामिनी ने अपने दोनों हाथों से सुन्दर कुचों को ढक लिया। २—कनक-सम्भु = सोने के महादेव (कुच)। दुइ पंकज =

[३२]

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
बिहसि पलटि निहारि ।
इन्द्रजालक कुसुम-सायक
कुहकि भेल बर नारि ॥ २ ॥
जोरि भुज जुग मोरि बेढ़ल
ततहि बदन सुछन्द ।
दाम-चम्पक काम पूजल
जइसे सरदा चन्द ॥ ४ ॥

दो कमल (दोनों हाथ)। दस चंदा = दस चन्द्रमा (दस अंगुलियाँ)। ३—कत = कितना । ४—अनइत = अन्यत्र, दूसरी जगह । ५—आड = ओट । ६—अओंधा = उलटकर रक्खा हुआ । जुग बहि जाई = युग बीत जाते हैं । ७—पुहबी = पृथ्वी । नव = नवीन । पँचबाने = कामदेव । ८—रमाने = रमण, पति ।

१—गेलि = गई । गजहु गामिनि = हाथी के समान मस्तानी चाल वाली । बिहसि = मुस्कुराकर । निहारि = देखकर । २—इन्द्रजालक = ऐन्द्रजालिक, जादू भरा । कुसुम-सायक = कामदेव । कुहकि = मायाविनी नटी । भेल = हुई । मानों वह श्रेष्ठनारी काम ऐन्द्रजालिक की मायाविनी नटी हो । अर्थात् उसकी हँसी ने अद्‌भुत चमत्कार का अनुभव कराया । ३-४—मोरि = मोड़कर । बेढ़ल = घेरा । ततहि = वहीं । बदन = मुख । दाम = रस्सी (माला)। चम्पक = चम्पे की । जइसे = जैसे । सुछन्द = सुन्दर । दोनों हाथों को जोड़कर उनसे अपना सुन्दर मुख लपेट लिया, मानों कामदेव ने चम्पे की माला (हाथ) से शरद-चन्द्र (मुख) की पूजा की हो ।

उरहि अंचल झाँपि चंचल
आध पयोधर हेरु ।
पौन पराभव सरद-घन जनि
वेकत कएल सुमेरु ॥ ६ ॥
पुनहि दरसन जीव जुड़ाएव
टुटत विरहक ओर ।
चरन जावक हृदय पावक
दहइ सब अँग मोर ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होय ।
से जे रमनि परम गुनमनि
पुनु कए मिलव तोय ॥ १० ॥

४, ५—उरहि = वक्षःस्थल को। झाँपि = ढँककर । पयोधर = स्तन, कुच। हेरु = देखत है। पौन = पवन, वायु। पराभव = हारकर। जनि = मानों। वेकट = व्यक्त, प्रकट। कएल = किया। सुमेरु = पर्वत। वक्षःस्थल को चंचल अंचल से ढाँककर आधे कुच को देखती हैं, मानों पवन से हारकर शरद के मेघ (अंचल) ने सुमेरु को (कुच) प्रकट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके से मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पड़ता है उसी प्रकार...। ७—जीव = प्राण। जुड़ाएव = शीतल होंगे। ओर = सीमा ८—जावक = महावर। पावक = आग। दहइ = जलती है। उसके पैर के महावर (मेरे) हृदय में आग (लगा रहा) है जिससे मेरे सब अंग जल रहे हैं। १०—से = वह पुनु = पुण्य, पुनः। मिलव = मिलेगी। तोय = तुम्हें।

[३३]

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पंकज मधु-पिबि मधुकर रे
उड़ए पसारल पाँखि ॥ १ ॥

ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि वर नारि ।
आसा—लुबुधल न तेजए रे
कृपनक पाछु भिखारि ॥ ४ ॥

इंगित नयन तरंगित रे
वाम भँओह भेल भंग ।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥ ६ ॥

१—आनन = मुख । भौंह सुरेखलि = भौंहों द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई । २—पंकज = कमल (मुख)। मधु = पुष्परस । पिबि = पीकर । मधुकर = भौंरा (नयन)। उड़ए = उड़ने को। पसारल = पसार दिया, फैला दिया । पाँखि = पंख, पर, (भौंह)। ततहि = वहाँ । धाओल = दौड़ गया । जतहि = जहाँ । गेलि = गई । ३—आसा-लुबुधल = आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ । आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता । ४—इंगित = इशारे से युक्त । तरंगित = चंचल । वाम = बाईं । भँओह भेल भंग = भौंह भंग हुई-भवें टेढ़ी कीं । ६—तखन = उस समय । तेसर = तीसरा व्यक्ति । मनोभव = काम-

चन्दन चरचु पयोधर रे
गिम गज मुकुताहार ।
भसम भरल जनि संकर रे
सिर सुरसरि जलधार ॥ ९ ॥

बाम चरण अगुसारल रे
दाहिन तेजइत लाज ।
तखन मदन सर पूरल रे
गति गंजए गजराज ॥ १० ॥

आज जाइत पथ देखलि रे
रूप रहल मन लागि ।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
धैरज गेल भागि ॥ ११ ॥

देव । ७—चरचु = चर्चित किया । पयोधर = कुच, स्तन । गिम = गले में । भरल = भरा हुआ । सुरसरि = गंगा । कुच चन्दन से चर्चित हैं, जिन पर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है, मानों भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो । ९—अगुसारल = अग्रसर किया, आगे किया । दाहिन तेजइत लाज = दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है । १०—तखन = उस समय । मदन = कामदेव । गति = चाल । गंजए = पराजित करती है । गजराज = हाथी । ११—रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया । खन = क्षण । सयँ = से । गेल—गये ।

रूप लागि मन धाओल रे
कुच-कचन-गिरि साँधि।
ते अपराधें मनोभव रे
ततहि धएल जनि बाँधि॥ १४॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बुझ रसमंत।
रूपनरायन नागर रे
लखिमा देइ कत॥ १६॥

१३, १४—लागि = लिये। कुच कचन गिरि साँधि = स्तन रूपी दो सोने के पहाड़ो के सन्धि-स्थान में—बीच में। तें = उस। बाँध धएल = बाँध रक्खा। रूप के लिये—सौन्दर्य के लोभ में मेरा मन उनके कुच रूपी दो पहाड़ों के बीच में आ दौड़ा, मानों, इसी अपराध में कामदेव ने उसे वहीं बाँध रक्खा। १५—बुझ = बूझो, समझो। रसमन्त = रसिक।

"हे सज्जना श्रणुत मद्वचना समस्ता,
स्वर्गे सुधाऽस्ति सुलभा न तु सा भवद्भिः।
कुर्मस्तद भवतामुपकारकारी
काव्यामृत पिबत तत् परमादरेण॥"

[३४]

पथ-गति पेखल मो राधा ।
तखनुक भाव परान पए पीड़लि
रहल कुमुद-निधि साधा ॥ २ ॥
ननुअ नयन नलिनि जनि अनुपम
वंक निहारइ थोरा ।
जनि सृंखल में खगवर बाँधल
दीठि नुकायल मोरा ॥ ४ ॥
आध वदन ससि विहसि देखाओलि
आध पीहिल निअ वाहू ।
किछु एक भाग वलाहक झाँपल
किछुक गरासल राहू ॥ ६ ॥

१, २—पथ गति = पथ में जाती हुई । पेखल = देखा । मो = मैं । तखनुक = उस समय का । परान पए = प्राण भी । पीड़लि = पीड़ित किया । रहल = रह गया । कुमुद-निधि = कुमुद का सर्वस्व (चन्द्र) । साधा = साध, इच्छा । मैंने राह में जाती हुई राधा को देखा । उस समय की उसकी भावभंगी ने प्राणों तक को पीड़ित किया, उस चन्द्र (मुख) को देखने की साध बनी ही रह गई । ३—ननुअ = सुन्दर । नलिनि = कमलिनी । जनि = समान । वंक = टेढ़ा निहारइ = देखती है । ४—सृंखल = श्रृंखला, जंजीर । खगवर = पक्षिश्रेष्ठ, खंजन । बाँधल = बाँधा । नुकाएल = छिप गया । ५—वदन-ससि = मुखरूपी चन्द्रमा । देखाओलि = दिखलाई । पीहिल = ढाँप दिया । निअ = निज । वाहू = बाँह से, भुजा से । ६—झाँपल = ढाँप दिया । बलाहक = मेघ ।

कर-जुग , पिहित पयोधर-अंचल
चंचल देखि चित भेला।
हेम कमल जनि अरुनित चंचल
मिहिर-तरे निन्द गेला ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनइ मधुरपति
इह रस केह पए बाधा।
हास दरस रस सबहु बुझाएल
नाल कमल दुइ आधा ॥ १० ॥

गरास्ल = ग्रस लिया । ७, ८—पिहित—आवृत, ढँका । पयोधर = स्तन । अचल = विभाग, तट । हेम = सोना । जनि = मानो । अरुनित = लालिमा-युक्त । तरे = नीचे । मिहिर = सूर्य । निन्द गेला = सो रहा । दोनों हाथों से ढँके हुए स्तनों के तट-भाग देखकर चित्त चंचल हो गया, मानों, सोने के कमल (दोनों कुच) लालिमा-युक्त चंचल सूर्य (लाल हथेली) के नीचे सो रहे हों । ९, १०—सुनइ = सुनो । मधुरपति = मथुरा-पति । इह = यह । केह = कौन । हास = हँसी । दरस = दर्शन । बुझाएल = बूझ पड़ा, मालूम हुआ । नाल = (कमल की) डंटी। हे मथुरापति श्रीकृष्ण; (तुम्हारे) इस रस में कौन बाधा देगा ? तुम्हारी पारस्परिक हँसी और दर्शन के रस से ही सबको मालूम हो गया कि मृणाल और कमल (तुम्हारे हाथ रूपी मृणाल और उसके कुच रूपी कमल) ये दोनों (एक ही पदार्थ) के दो भाग हैं—अर्थात उसके कुच के लिये तुम्हारे हाथ ही उपयुक्त हैं ।

—:०:—

[३५]

जहाँ-जहाँ पग-जुग धरई। तहिं-तहिं सरोरुह झरई ॥ २ ॥
जहाँ-जहाँ झलकत अंग। तहिं-तहिं विजुरि-तरंग ॥ ४ ॥
कि हेरल अपरुब गोरि। पइठल हिय मधि मोरि ॥ ६ ॥
जहाँ-जहाँ नयन विकास। तहिं-तहिं कमल प्रकाश ॥ ८ ॥
जहाँ लहु हास सँचार। तहिं-तहिं अमिय-विकार ॥ १० ॥
जहाँ-जहाँ कुटिल कटाख। ततहिं मदन-सर लाख ॥ १२ ॥
हेरइत से धनि थोर। अब तिन भुवन अगोर ॥ १४ ॥
पुनु किए दरसन पाव। अब मोहे इत दुख जाव ॥ १६ ॥
विद्यापति कह जानि। तुअ गुन देहब आनि ॥ १८ ॥

१, २—पग जुग = दोनों पैर। धरई = धरती है, रखती है। तहिं = वहाँ। सरोरुह = कमल। झरई = झड़ते हैं,। ३, ४—झलकत = झलकते हैं,। चमकते हैं। अंग = शरीर। बिजुरि-तरंग = बिजली का चंचल प्रकाश। ५, ६—कि = क्या। हेरल = देखा। गोरि = गौर वदना, सुन्दरी। पइठल = पैठगई, घुस गई। हिय-मधि = हृदय में। मोरि = मेरे। ९, १०—लहु = लघु, मंद। हास = हँसी। अमिय = अमृत। ११, १२—कुटिल = टेढ़े। कटाख = कटाक्ष। ततहिं = वहाँ ही। मदन = कामदेव। सर = बाण। १३, १४—हेरइत = देखते ही। से = वह। धनि = बाला, सुन्दरी। अगोर = प्रतीक्षा करना। १५, १६-पुनु = पुन। किए = क्या। १६—अब मैं इसी दुःख से मरूँगा। १८—तुअ = तुम्हारे। देहब आनि = ला दूँगा।

—००—

राधा का प्रेम

[३६]

ए सखि पेखलि एक अपरूप।
सुनइत मानबि सपन - सरूप ॥ २ ॥
कमल जुगल पर चाँदक माला।
तापर उपजल तरुन तमाला ॥ ४ ॥
तापर बेढ़लि बिजुरि - लता।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥ ६ ॥
साखा - सिखर सुधाकर पाँति।
ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति ॥ ८ ॥
बिमल बिम्बफल जुगल बिकास।
तापर कीर थीर करु बास ॥ १० ॥
तापर चचल खञ्जन - जोर।
तापर साँपिनि झाँपल मोर ॥ १२ ॥
ए सखि रगिनि कहल निसान।
हेरइत पुनि मोर हरल गिआन ॥ १४ ॥
कवि बिद्यापति एह रस मान।
सुपुरुख मरम तुहु भल जान ॥ १६ ॥

३—कमल जुगल = दो पैर। चाँदक माला = नखो की पंक्ति। ४—तरुन तमाला = काला शरीर। ५—बेढ़लि = लिपटी हुई। बिजुरी-लता = पीताम्बर। ७—साखा सिखर = तमालरूपी शरीर की शाखा-रूपी बाहुओ के अग्र भाग में। सुधाकर पाँति = नखों की पंक्ति। ८—नव पल्लव = हथेली। अरुनक भाँति = लाल।

[३७]

की लागि कौतुक देखलौं सखि
निमिष लोचन आध।
मोर मन-मृग मरम वेधल
विषम बान वेआध ॥ २ ॥
गोरस बिरस बासी बिसेखल
छिकहु छाड़ब गेह।
मुरलि धुनि सुनि मो मन मोहल
बिकहु भेल सन्देह ॥ ४ ॥
तीर तरंगिनि कदम्ब-कानन
निकट जमुना घाट।
उलटि हेरइत उलटि परलऔं
चरन चीरग काँट ॥ ६ ॥
सुकृती सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गुपाल सुन्दर
मिलल नन्द कुमार ॥ ८ ॥

९—बिम्बफल = ओष्ठ । १०—कीर = नाक । ११—खंजन जोर = आँखों का जोड़ा । साँपिनि = केश । मोर = मोर मुकुट ।

१—की लागि = किसलिये । निमिष = एक क्षण । लोचन आध = आधी आँखों से, कनखियाँ से । २—मरम = हृदय का भीतरी भाग। विषम = कठोर । ३—विरस = रसहीन । बासी बिसेखल = विशेषतः बासी । छिकहु = छींकने पर भी । ५—तरंगिनि = नदी ।

[३८]

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ
वारल लोचन-चोर
पिया मुख रुचि पिबए धाओल
जनि से चाँद चकोर ॥ २ ॥
ततह्नु सयँ हठ हटि मो आनल
धएल चरन राखि।
मधुप मातल उडए न पारए
तइअओ पसारए पाँखि ॥ ४ ॥

१,२ अवनत = नीचे। आनन = मुख। वारल = निवारण किया, रोक रक्खा। मुख-रुचि = मुख की शोभा। पिबए = पीने के लिये। धाओल = दौड़ पड़ा। जनि = मानों। से = वह। मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन रूपी चोरों को (उनकी ओर जाने से) रोक दिया किन्तु प्रीतम के मुख की शोभा का पान करने के लिये वे दौड़ पड़े, जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौड़ते हैं। ३, ४—ततहु = वहाँ। सयँ = से। हटि = हटाकर। मो = मैं। आनल = लाया। धएल राखि = धर रक्खा। मधुप = भौंरा। मातल = मत्त बना, पागल। उड़ए न पारए = नहीं उड़ सकता। तइअओ = तो भी। पसारए = पसारता है। वहाँ से—मुख की ओर से—मैं (आँखों को) हठ पूर्वक रोककर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रक्खा—नीचे की ओर देखने लगी। (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा नहीं उड़

माधव बोलल मधुर बानी
से सुनि मुँदु मोयँ कान।
ताहि अवसर ठाम बाम भेल
धरि धनु पँचबान ॥६॥
तनु पसेव पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चूनि भए काँचुअ फाटलि
बाहु बलआ भाँगु ॥८॥
भन विद्यापति कम्पित कर हो
बोलल बोल न जाय।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
साम सुन्दर काय ॥१०॥

सकता तो भी पंख पसारता है उसी तरह मेरी आँखें बराबर उसी ओर जाने लगीं।) ५—मुँद = मूँद लिया। ठाम = जगह। बाम भेल = विरुद्ध हुआ, वैरी हुआ। पँचबान = कामदेव। ६—उसी समय उसी जगह कामदेव धनुष धारण कर मेरा वैरी हुआ—मुझपर बाणों की बौछार करने लगा। ७—पसेव = पसीना। पसाहनि = प्रसाधनी, ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि = दह गया, धो गया। पुलक = रोमांच। तइसन = उसी प्रकार। ८—चूनि चूनि भए = खंड-खंड होकर, चिथड़े-चिथड़े होकर। काँचुअ = कंचुकी, चोली। बलआ = चूड़ी। भाँगु = फूट गई। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा, जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गईं] ९—कम्पित कर हो = हाथ काँप रहे हैं। बोलल बोल न जाय = बात कही नहीं जाती।

[३६]

सामर सुन्दर ए बाट आएल
तें मोरि लागलि आँखि ।
आरति आँचर साजि न भेले
सब सखीजन साखि ॥२॥

कहहि मो सखि कहहि मो
कत तकर अधिबास ।
दूरहु दूगुन पड़ि मै आवओं
पुनू दरसन आस ॥४॥

कि मोरा जीवन कि मोरा जौवन
कि मोरा चतुरपने ।

१—ए बाट=इस रास्ते । तें=इसी कारण । २—आरति=आर्त्तावस्था से, व्याकुलता से । साखि=साक्षी, गवाह । व्याकुलता से—प्रेमावेश से—मैं आँचल को सँभाल भी न सकी—अपने कुचों को भली-भाँति ढक भी न सकी, इस बात की गवाह सभी सखियाँ हैं । ३, ४—मो=मुझसे । कत=कहाँ । तकर=उसका । अधिबास=निवास-स्थान । दूरहु दूगुन=दुगुनी दूरी । पड़ि=अतिक्रमण कर । आवओं=आती हूँ । पुनू=पुन । कहो, ऐ मेरी सखी, कहो, उसका निवास-स्थान कहाँ है ? दुगुनी दूरी (होने पर भी उसे) अतिक्रम कर मैं पुन दर्शन पाने की आशा में यहाँ आती हूँ । ५, ६—मुरुछलि=मूर्च्छित । अछओं=हूँ । मेरी जिन्दगी क्या, जवानी क्या और चतुराई क्या—ये सब मिथ्या हैं, काम के बाणों से मैं मूर्च्छित हूँ और

मदन-बान मुरुछलि अछओं
सहओं जीव अपने ॥६॥
आध पद धरइत मोए देखल
नगर-जन समाज
कठिन हिरदय भेदि न भेले
जाओ रसातल लाज ॥८॥
सुरपति-पाए लोचन माँगओं
गरुड़ माँगओं पाँखि
नन्दक नन्दन हौं देखि आबओं
मन मनोरथ राखि ॥१०॥

(उसकी मार्मिक पीड़ा) अपने प्राणों में सह रही हूँ। ७, ८—नागर-जन = चतुर लोग। भेदि = छेदना, विदीर्ण होना। कृष्ण की ओर आधा पग रखते—प्रेमावेश में उनकी ओर एक पैर बढ़ाते ही—मुझे समाज के चतुर लोगों ने देख लिया। पर मेरा कठिन हृदय फट नहीं गया, लज्जा पाताल में धँस गई। ९—सुरपति = इन्द्र। पाए = चरण में। पाँखि = पंख। इन्द्र के चरणों में मैं उनसे सहस्र लोचन माँगती हूँ, गरुड़ से पंख माँगती हूँ। १०—देखि आबओं = देख आऊँ।

—०—

Poetry is that, which lifts the veil from the hidden beauty of the world. —Shelly.

[४०]

कानु हेरब छल मन बड़ साध।
कानु हेरइत भेल अत परमाद ॥२॥
तबधरि अबुधि मुगुधि हम नारि।
कि कहि कि सुनि किछु बुझिए न पारि ॥४॥
साओन-घन सम झर दु नयान।
अबिरत धस धस करए परान ॥६॥
की लागि सजनी दरसन भेल।
रभसे अपन जिउ परहथ देल ॥८॥
ना जानू किए करु मोहन-चोर।
हेरइत प्रान हरि लेइ गेल मोर ॥१०
अत सब आदर गेल दरसाइ।
जत बिसरिए तत बिसर न जाइ ॥१२॥
विद्यापति कह सुन धर नारि।
धैरज धरु चित मिलब मुरारि ॥१४॥

१—कानु = कृष्ण। हेरब = देखना। छल = था। साध = इच्छा। २—अत = इतना। परमाद = प्रमाद, आपत्ति। ३—तबधरि = तबमें। मुगुधि = मुग्धा। ४—कि = क्या। बुझिए न पारि = नहीं समझ सकती। ५—साओन घन = श्रावण का मेघ। नयान = नयन, आँख। ६—अबिरत = हरदम। धस-धस करए = धक-धक करता। ८—रभसे = कौतुक में ही। परहथ = दूसरे के हाथ में। ९—किए = क्या। १०—गेल दरसाइ = दिखला गया, बतला गया। ११—जत = जितना। बिसरिए = भूलिये। बिसर न जाइ = नहीं भूलता।

[४१]

कि कहब हे सखि इह दुख ओर।
बाँसि-निसास-गरल तनु भोर ॥२॥
हठ सयँ पइसए स्रवनक माझ।
ताहि खन भिगलित तन मन लाज ॥४॥
विपुल पुलक परिपूरए देह।
नयन न हेरि हेरए जनु केह ॥६॥
गुरु-जन समुखहि भाव तरंग।
जतनहि वसन झाँपि सब अंग ॥८॥
लहु-लहु चरण चलिए गृह माझ।
आजु दइब विहि राखल लाज ॥१०॥
तनु मन विवस खसए निवि-बंध।
कि कहब बिद्यापति रहु धन्द ॥१२॥

१—कि = क्या २—बाँसि निसास-गरल = वंशी के निःश्वास के विष से—वंशी की आवाज की मादकता से। तनु भोर = शरीर बेसुध है। ३—हठ सयँ = हठपूर्वक। पइसए = पैठता है। स्रवनक = कानों के। माझ = मध्य, में। ४—ताहि खन = उसी समय। विग-लित = दूर हुई, जाती रही। ४—विपुल = अधिक, असंख्य। पुलक = रोमांच। ६—आँखों से उस ओर—कृष्ण की ओर—नहीं देखती हूँ कि कहीं कोई ऐसा करते देख न ले। ७—गुरुजन = अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति। भाव तरंग = भावना की लहर। ९—लहु-लहु = धीरे-धीरे। दइब विहि = दैव ब्रह्मा। ११—खसए = गिर पड़ता है। १२—धन्द = फ़िक्र।

[४२]

कत न वेदन मोहि देसि मदना।
हर नहि बला मोहि जुवति जना ॥२॥

विभुति-भूषन नहि चानतक रेनू।
बघछाल नहि मोरा नेतक बसनू ॥४॥

नहि मोरा जटाभार चिकुरक बेनी।
सुरसरि नहि मोरा कुसुमक स्रेनी ॥६॥

चाँद क बिन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा।
ललाट पावक नहि सिन्दुरक फोटा ॥८॥

नहि मोरा कालकूट मृगमद चारु।
फनपति तहि मोरा मुकुता-हारु ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन देव कामा।
एक पए दूखन नाम मोरा बामा ॥१२॥

अरे कामदेव! मुझे इतनी वेदना मत दो, मैं महादेव नहीं, वरन् युवती हूँ। (शरीर में लगे) ये विभूति के भूषण (लेप) नहीं, वरन् चन्दन के रेणु हैं, यह बाघछाला नहीं, वरन् मेरी चुनरी (नेतक बसनू) है। (सिर पर) यह जटा का भार नहीं, वरन् केशों की गुँथी हुई वेणी है। गंगा नहीं, वरन् वेणी में गूँथे गये (उजले) फूलों की कतार है। (कपाल पर) चन्दन की बेंदी अथवा माँगटीका है, द्वितीया का चन्द्रमा (इन्दु) छोटा नहीं। ललाट में (तृतीय नेत्र की) अग्नि नहीं, सिंदूर का टीका है। यह विष नहीं, चिबुक पर सुन्दर (काला) मृगमद है। (गले में) अजगर नहीं, किन्तु मेरी मुक्ताओं की माला है। विद्यापति कहते हैं,

[४३]

मनमथ तोहे की कहब अनेक।
दिठि अपराध परान पए पीड़सि
ते तुअ कौन विवेक ॥ २ ॥

दाहिनि नयन पिसुन गन वारल-
परिजन बामहि आध।
आध नयन-कोने जब हरि पेखलि
तैं भेल अत परमाद ॥ ४ ॥

पुर-बाहिर पथ करत गतागत
के नहि हेरत कान।
तोहर कुसुम-सर कतहु न संचर
हमर हृदय पँचबान ॥ ६ ॥

हे कामदेव, सुनो, मुझमें दोष है तो केवल एक यही, कि मेरा नाम 'वामा' (रमणी) है [जो महादेव के 'वामदेव' नाम से मिलता है] ।

१, २. मनमथ = कामदेव । दिठि = दृष्टि, नजर । पीड़सि = पीड़ा देते हो । ३, ४—पिसुन = दुष्ट । वारल = मना किया । परिजन = घर के लोग । परमाद = प्रमाद, झंझट । दहिने नेत्र को दुष्टों के कारण मना करना पड़ा—दहिने नेत्र से दुष्टों के डर से नहीं देखती—परिवारवालों के कारण बायें नेत्र के आधे को निवारण किया । रह गया बायें नेत्र का आधा भाग—सो आधे नेत्र से ही—बायें नेत्र के कटाक्ष से ही—जब कृष्ण को देखा तो इतना पागलपन मुझमें आ गया । ५—पथ = राह । करत गतागत = आते-जाते । कान = कृष्ण । ६—कुसुम-सर = फूलों के बाण । पँचबान = कामदेव के पाँच शर ।

[४४]

एक दिन हेरि हेरि हँसि हँसि जाय।
अरु दिन नाम धए मुरलि बजाय ।।२।।
आजु अति नियरे करल परिहास।
न जानिए गोकुल ककर बिलास ।।४।।
साजनि ओ नागर-सामराज।
मूल बिनु परधन माँग बेआज ।।६।।
परिचय नहि देखि आनक काज।
न करए संभ्रम न करए लाज ।।८।।
अपन निहारि निहारि तनु मोर।
देइ आलिंगन भए विभोर ।।१०।।
खन खन वैदगधि कला अनुपाम।
अधिक उदार देखिअ परिनाम ।।१२।।
विद्यापति कह आरति ओर।
बुझिओ न बूझए इए रस मोर ।।१४।।

२—अरु = और, अन्य। ३—नियरे = निकट। परिहास = हँसी, मजाक। ककर = किसका। ५, ६—नागर-सामराज = चतुरों का सम्राट्। मूल = मूलधन। सखि, वह चतुरों का बादशाह है, देखो तो, दूसरे की सम्पत्ति पर बिना मूल-धन के सूद माँगता है (एक तो धन दूसरे का; उसमें भी मूल-धन गायब, फिर सूद कैसा!) ७—दूसरे का काम देखकर भी नहीं परिचय करता—नहीं समझता। ८—संभ्रम = डर। ११—प्रति क्षण अनुपम विदग्धतापूर्ण कला (दिखाता है)। १४—यह रस में बेसुध (कृष्ण) समझकर भी नहीं समझता।

दूती

कृष्ण की दूती

[४५]

धनि-धनि रमनि जनम धनि तोर
सब जन कान्हु कान्हु करि झूरए
से तुअ भाव विभोर ॥ २ ॥

चातक चाहि तियासल अम्बुद।
चकोर चाहि रहु चन्दा।
तरु लतिका अवलम्बन करिए
मझु मन लागल धन्दा ॥ ४ ॥

केस पसारि कबे तहुँ राखलि
उर पर अम्बर आधा।

१—धनि = धन्य। रमनि—रमणी, स्त्री। तोर = तुम्हारा। २—जन = आदमी। कान्हु = कृष्ण। झूरए = जलते, व्याकुल होते। से = वह। तुअ = तुम्हारे। विभोर = बेसुध। ३, ४—चातक = पपीहा। चाहि = देखना। तिआसल = तृषित, प्यासा। अम्बुद = बादल। तरु = वृक्ष। लतिका = लता। करिए = कर रहा है। मझु = मेरे। लागल = लगा। धन्दा = सन्देह। (कैसी विचित्रता है!) तृषित मेघ आज पपीहे की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है; (इन विरोधी बातों को देख) मेरे मन में संशय हो रहा है। [कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिये थी, वह श्रीकृष्ण में है।] ५—पसारि = पसार कर, खोलकर। राखलि = रक्खा।

से सब सुमिरि कान्हु भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ॥ ६ ॥

हँसइत कब तुहु दसन देखाएलि
करे कर जोरहि मोर।
अलखित दिठि कब हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि कर कोर ॥ ८ ॥

एतहु निदेस कहल तोहे सुन्दरि
जानि तोहे करह बिधान।
हृदय-पुतलि तुहु से सून कलेवर
कवि विद्यापति भान ॥ १० ॥

उर = छाती, वक्षःस्थल। अम्बर = वस्त्र, अंचल। ६—से = वह। भेल = हुआ। इथे = इसका। धनि = बाले। समाधा = निवारण। ७, ८— दसन = दाँत। करे कर जोरहि = हाथ से हाथ जोड़कर। अलखिते = अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुनु = पुन। हेर = देखकर। कर कोर = कोर कर = कोड़ में करना-रखना, आलिंगन करना। (हाथ से हाथ जोड़कर अँगड़ाइयाँ लेती हुई) कब तुमने पीछे की ओर मुड़कर, हँसती हुई, अपने दाँतों की छटा दिखाई, एवम् अलक्ष्य दृष्टि से कब उनके हृदय को प्रसारित कर पुन उनकी ओर देखकर, सखी का आलिंगन किया। ६—एतहु = इतना। निदेश = इशारा। कहल = (मैंने) कहा। तोहे = तुम्हें। जानि = जानकर। करह = करो। बिधान = उपचार। १०—हृदय-पुतलि = हृदय की पुतली, प्राण। से = वह (कृष्ण)। सून = शून्य। कलेबर = शरीर। भान = कहता है।

[४३]

सुन सुन ए सखि कहए न होए।
राहि राहि कए तन मन खोए॥ २॥

कहइत नाम पेम भए भोर।
पुलक कम्प तनु घामहि नोर॥ ४॥

गद-गद भाखि कहए वर-कान।
राहि दरस विनु निकस परान॥ ६॥

जब नहि हेरब तकर से मुख।
तब जिउ-भार धरब कोन सुख॥ ८॥

तुहु बिनु आन इथे नहि कोइ।
विसरए चाह विसरि नहि होइ॥ १०॥

भनइ विद्यापति नाहि विवाद।
पूरब तोहर सब मन साध॥ १२॥

१—कहए न होए=कहा नहीं जाता। २—राहि=राधा। कर=करके, कहकर। खोए=खोना, भुला देना। ३—पेम=प्रेम। भोर=बेसुध। ४—पुलक=रोमांच। घामहि=पसीना भी। नोर=आँसू। शरीर रोमांच होकर काँपने लगता है, पसीना होता है और आँसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५—गदगद=रुँधे हुए कंठ से। भाखि=कहना। कान=कृष्ण। ६—निकसे=निकलता है। ७—तकर=उसका। से=वह। ८—धरब=धरूँगा। ९—आन=दूसरा। इथे=यहाँ, तुम्हारे सिवा यहाँ दूसरा कोई नहीं—तुम्हें छोड़कर कृष्ण अन्य किसीको प्यार नहीं करते। १०—विसरए=विस्मरण होना, भूल जाना। ११—विवाद=कलह। १२—पूरब=पूरी होगी। मन साध=मनःकामना।

[४७]

कटक माझ कुसुम परगास ।
भमर विकल नहिं पावए पास ॥ २ ॥

भमरा भेल घुरए सबे ठाम ।
तोहे बिनु मालति नहिं बिसराम ॥ ४ ॥

रसमति मालति पुन पुन देखि ।
पिबए चाह मधु जीब उपेखि ॥ ६ ॥

ओ मधुजीवी तोञे मधुरासि ।
साँचि धरसि मधु मने न लजासि ॥ ८ ॥

अपनेहु मने गुनि बुझ अबगाहि ।
तसु दूषन बध लागत काहि ॥ १० ॥

भनहि विद्यापति तौं पय जीव ।
अधर सुधारस जौं पय पीब ॥ १२ ॥

१—परगास=प्रकाश । २—पावए=पाता है, जा सकता है। ३—भमरा (माधव) । ४—मालति (राधा) । ६—जीब उपेखि=जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीवेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके । ८—साँचि धरसि—संचित करके रक्खा है । ६—अबगाहि=डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भलीभाँति सोचो, समझो । ११—तौं पय जीब=तब जी सकता है । १२—जौं पय पीब=यदि वह पी सके ।

[४८]

आजु हम पेखल कालिन्दी कूले।
तुअ विनु माधव विलुठए धूले ॥१॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने।
किए विप दाह समय जल दाने ॥४॥
मदन-भुजंगम दंसल कान।
विनहि अमिय-रस कि करब आन ॥६॥
कुलवति धरम काँच समतूल।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥८॥
आनल वेचि नीलमनि हार।
से तुहु पहिरवि करि अभिसार ॥१०॥
नील निचोल झाँपवि निज देह ।
जनि घन भीतर दमिनि-रेह ॥१०॥
चौदिक चतुर सखी चलु संग।
आजु निकुंज करह रस-रंग ॥१४॥

१—पेखल = देखा। कालिन्दी = यमुना। कूले = किनारे में। २—विलुठए = लोट रहे हैं। ३—कत = कितने। सत = सौ। आने = लाता है। ४—विप की ज्वाला के समय जल के दान से क्या—विष की ज्वाला कहीं पानी से शान्त होती है? ५—भुजंगम = सर्प। दंसल = काटा। कान = कृष्ण। ६—अमिय = अमृत। कि करब = क्या करेगा। आन = अन्य। ८—समतूल = समान। १०—से = वह। अभिसार = गुप्त मिलन, प्रियतम के पास गमन। ११—निचोल = चोली। १२—घन = मेघ। दामिनि = विजली। रेह = रेखा। चौदिक = चारों ओर।

[४६]

आज पेखल नन्द-किशोर।
केलि-बिलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहत बिमोर ॥२॥
जब धरि चकित बिलोकि विपिन-तट
पलटि आओलि मुख मोरि।
तवधरि मदनमोहन तरु कानन
लुटइ धीरज पुनि छोरि ॥४॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरबि
आओब चेतन नाह
भुजगिनि दंसि पुनहि जदि दंसए
तबहि समय बिष आह ॥६॥
अब सुम खन घनि मनिमय भूषन
भूषित तनु अनुपाम।
अभिसरु बल्लभ हृदय विराजहु
जनि मनि काचन-दाम ॥८॥

२—अहनिसि = दिन रात। बिमोर = बेसुध। ३—जब धरि = जबसे। ४—तब धरि = तबसे। लुटइ = लोटते हैं। ४—आओब चेतन = चेतना पायेंगे, सुध में आयेंगे। नाह = नाथ (कृष्ण)। ६—भुजगिनि = साँपिनि। दंसि = काटकर। तबहि समय = उसी समय—उसी हालत में। आह = जाना है। ८—अभिसरु = अभिसार करो—गुप्त मिलन-स्थान में जा मिलो। बल्लभ = प्यारा, विद्यापति का उपनाम। जनि मनि काचन-दाम = जैसे सोने के धागे में मणियो की माला पिरोई गई हो।

[५०]

प्रथम सिरिफल गरब गमओलह

जौं गुन-गाहक आवे ।

गेल जौवन पुनु पलटि न आवए

केवल रह पछतावे ॥२॥

सुन्दरि, वचन करह समधाने ।

तोहि सनि नारि दिवस दस अछलिहुँ

ऐसन उपजु मोहि भाने ॥४॥

जौवन रूप तावे घरि छाजत

जावे मदन अधिकारी ।

दिन दस गेले सखि सेहओ पराएत

सकल जगत परचारी ॥६॥

विद्यापति कह जुवति लाख लह

पहल पयोधर तूले ।

दिन-दिन आवे सखि ऐसनि होएवह

घोसिनि घोरक मूले ॥८॥

१—सिरिफल = श्रीफल, बेल (कुच)। गमओलह = गँवा दिया, खो दिया। २—जौं = जबतक। आवे = आता है। ३—करह समधाने = समधान करो, विचार करो। ४—सनि = समान। अछलिहु = मैं भी थी। भाने = अनुमान। ५—छाजत = शोभता है। ६—गेले = जाने पर। सेहओ = वह भी। पराएत = भागेगा। ८—पयोधर-तूले = कुच तराजू पर है। ८—आवे सखि = अरी सखि। होएवह = हो जाओगी। घोसिनि = ग्वालिन! घोरक = मट्ठा के। मूले = मूल्य की।

[५१]

ए धनि कमलिनि सुन हितवानी।
प्रेम करवि अव सुपुरुष जानि ॥२॥

सुजन क प्रेम हेम समतूल।
दहइत कनक दिगुन होय मूल ॥४॥

टुटइत नहि टुट प्रेम अद्भुत।
जइसन बढ़ए मृनाल क सूत ॥६॥

सबहु मतंगज मोति नहिं मानि।
सकल कठ नहिं कोइल-बानि ॥८॥

सकल समय नहिं रीतु वसन्त।
सकल पुरुष-नारि नहिं गुनवन्त ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
प्रेम क रीत अब बुझह बिचारि ॥१२॥

१—धनि = बाला। कमलिनी = पद्मिनी जाति की स्त्री। बानि = वाणी, बात। २—जब प्रेम करो तो सुपात्र ही जानकर। ३—सुजन क = सज्जन का। हेम = सोना। समतूल = समान। ४—दहइत = जलने पर। कनक = सोना। दिगुन = द्विगुण, दो गुणा। मूल = मूल्य। ६—जइसन = जिस प्रकार। बढ़त = बढ़ता है। मृनालक = मृणाल का, कमल की डंटी का। सूत = सूत्र, धागा, भीतर का रेशा। ८—मतगज = हाथी। मोती = मुक्ता। ८—कोइल बानि = कोयल की काकली। १०—सभी स्त्रियाँ और पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते।

[५२]

राधा की दूती

सुनु मनमोहन कि कहव तोय।
मुगुधिनि रमनी तुअ लागि रोय ॥२॥

निसि-दिन जागि जपय तुअ नाम।
थर-थर काँपि पड़ए सोइ ठाम ॥४॥

जामिनि आध अधिक जव होइ।
विगलित लाज उठए तव रोइ ॥६॥

सखिगन जत परवोधय जाय।
तापिनि ताप ततहिं तत ताय ॥८॥

कह कविसेखर ताक उपाय।
रचइत तवहि रयनि वहि जाय ॥१०॥

१—कि = क्या। कहव = कहूँ। तोय = तुझे। २—मुगुधिनि = मुग्धा, प्रेमासक्ता। रमनि = रमणी, स्त्री। तुअलागि = तेरे लिये। रोय = रोती है। ४—पड़ए = (गिर) पड़ती है। ठाम = जगह। ५—जब रात आधी से अधिक बीत जाती है। ६—बिगलित लाज = लाज से रहित होकर। उठए तव रोइ = तब रो उठती है। ७—जत = जितनी। परवोधए = प्रवोध करती है, समझाती है। ८—तापिनि = ज्वाला से जली हुई। ताप = ज्वाला से। ततहिं तत = उतना-ही-उतना। ताय = जलती है। (वह विरह-ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है। ९—ताक = उसका। १०—बहिजाय = वह जाती है, वीत जाती है।

[५३]

माधव ! कि कहब से विपरीत।
तनु भेल जरजर भामिनि अन्तर
चित बाढ़ल तसु प्रीत ॥२॥
निरस कमल-मुख कर अवलम्बइ
सखि माझ बइसइ गोइ।
नयन क नीर थीर नहि बाँधइ
पंक कयल महि रोइ ॥४॥
मरम क बोल, वचन नहि बोलय
तनु भेल-कुहु-ससि खीना।
अवनि उपर धनि उठए न पारइ
धरलि भुजा धरि दीना ॥६॥
तपत कलक जनि काजर भेल तनु
अति भेल विरह - हुतासे।
भनि विद्यापति मन अभिलासत
कान्ह चलह वसु पासे ॥८॥

२—जरजर = जर्जर, अत्यन्त क्षीण। भामिनि = स्त्री। अन्तर = भीतर। बाढ़ल = बढ़ गया। तसु = उसी प्रकार। ३—निरस = रसहीन, उदास। कर = हाथ। अवलम्बइ = अवलम्बन करके। माझ = मध्य। बइसइ = बैठी है। गोइ = छिपाकर। ४—नयन क नीर = आँसू। थीर = स्थिर। ५—मरम क बोल = मर्म वचन, हृदय के वचन। कुहु ससि = अमावास्या का चन्द्र। ६—उठए न पारइ = उठ नहीं सकती। धरती पर वह अपना शरीर उठा नहीं सकती, (अतः) उस दीना को भुजा पकड़कर (सखी ने) उठाई

[५४]

लोटइ धरनि, धरनि धरि सोई।
खने खन साँस खने खन रोई ॥२॥

खने खन मूरछइ कंठ परान।
इथि पर की गति दैव से जान ॥४॥

हे हरि पेखलौं से वर नारि।
न जीवइ बिनु कर-परस तोहारि ॥६॥

केओ केओ जपय वेद दिठि जानि।
केओ नव ग्रह पुज जोतिअ आनि ॥८॥

केओ केओ कर धरि धातु बिचारि।
विरह-विखिन कोइ लखए न पारि ॥१०॥

है। ७—तपत = तप्त, तपे हुए। कनक = सोना। जनिस = मान। हुतासे = अग्नि। ८—तसु = उसके।

१—लोटइ = लोटती है। धरनि = पृथ्वी। सोई = वह। २—खने-खन = क्षण-क्षण में। साँस = उसाँसें लेती है। रोइ रोती है। ३—क्षण-क्षण में वह मूर्च्छित हो जाती है और प्राण कंठतक चले आते हैं। (मृत-प्राय हो जाती है)। ४—इथि = इसके। पर = बाद। की = क्या। से = वह। ५—पेखलौं = (मैंने) देखा। ६—जीवइ = जीयेगी। करपरस = हाथ का स्पर्श ७—केओ = कोई। दिठि = नजर लगना। ८—पुज = पूजता है। जोतिअ = ज्योतिषी। आनि = ले आकर, बुलाकर। ६—धातु = नाड़ी। १०—विरह-विखिन = विरह-विक्षीण, विरह से क्षीण हुई। लखए न पारि = लख नहीं सकता।

[५५]

अविरल नयन गरए जल-धार ।
नव-जल बिंदु सहए के पार ॥२॥
कि कहब सजनी तकर कहिनी ।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥४॥
कुच-जुग ऊपर आनन हेरु ।
चाँद राहु डर चढ़ल सुमेरु ॥६॥
अनिल अनल बम मलयज बीख ।
जेहु छल सीतल सेहु भेल तीख ॥८॥
चाँद सतावए सविताहु जीनि ।
नहि जीवन एकमत भेल तीनि ॥१०॥
किछु उपचार मान नहि आन ।
ताहि बेआधि भेषज पँचबान ॥१२॥
तुअ दरसन बिनु तिलओ न जीव ।
जइओ कलामति पीउख पीव ॥१४॥

१—अविरल = लगातार । गरए = गिरता है । २—नव-जल बिन्दु = नवीन जल के कण, आँसू । ३—तकर = उसका । कहिनी = कहानी । ४—जहिनी = जैसी । ५—आनन = मुख । ७—अनिल = वायु । अनल = आग । बम = वमन करता है, उगलता है । मलयज = चन्दन । बीख = विष । ८—छल = था । तीख = तीक्ष्ण । ९—सविताहु = सूर्य से भी । जीनि = जैसे, जीतकर, बढ़कर । १०—एकमत भेल तीनि = (वायु, चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए । ११—उपचार = औषधादि । १२—भेषज = दवा । पँचबान = कामदेव । १३—तिलओ = तिलमात्र भी, एक क्षण भी ।

[५६]

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुवति कत न लेख।
सब फूल मधु मधुर नहि
फूलहु फूल विसेख ॥२॥

जे फूल भमर निन्दहु सुमर
वासि न बिसरए पार।
जाहि मधुकर उड़ि उड़ि पड़
सेहे संसार क सार ॥४॥

सुन्दरि, अबहु वचन सून।
सबे परिहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पून ॥५॥

जीव = जीयेगी। १४—पीयूख = पीयुष अमृत।

१,२—तरुअर = तरुवर, वृक्षश्रेष्ठ। कत = कितना। न लेख = संख्या नहीं, असंख्य। मधु = पुष्परस। मधुर = मीठा। लाखों पेड़ हैं, करोड़ों लताएँ हैं, (यों ही) कितनी युवतियाँ हैं (जिनकी) गिनती नहीं। किन्त सभी फूलों का रस मीठा नहीं होता—फूलों में भी कोई विशेष फूल होते हैं। ३—जे = जिस। भमर = भौंरा। निन्दहु = नीन्द में भी। सुमर = स्मरण करता है। वासि = गंध। विसरए न पार = नहीं विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता। ४—मधुकर = भौंरा। पर = पड़ना, बैठना। सेहे = वही। जिसपर भौंरा उड़-उड़कर बैठे वही (फूल) संसार का सार है—संसार में उसीका खिलना सार्थक है।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहु हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव ॥८॥
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि बिनु सुन कोर।
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर ॥१०॥
राहि राहि बाहि मुँह सुनि
ततहि अप्पए कान।
सिरि सिवसिंघ इहो रस जानए
कवि विद्यापति भान ॥१२॥

५—सुन=सुनो। ६—सबे=सबको। परिहरि=छोड़कर। इछ=इच्छा करता है। आपु=अपनी। सराहहि=सराहना करो। पुन=पुण्य। ७—तोहरे=तुम्हारा। सेजहु=शय्या पर भी। चाव=चाहना। ८—सपनहु=सपने में भी। पुन पुन कर=बारम्बार। लए उठए=ले उठते हैं। नाव=नाम। दए=देते हैं। पछु=पीछे। निहारए=देखते हैं। सुन=शून्य, खाली। कोर=गोद। १०—अकथ=न कहने योग्य। आपु=अपनी। अवथा—अवस्था। नोर=आँसू। ११—राहि=राधा। अप्पए=अर्पण करते हैं। १२—भान=कहते हैं।

—:०:—

"A poet is a painter of soul"

[५७]

आसायँ मन्दिर निसि गमावए
सुख न सूत सँयान।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि भान ॥२॥
मालति ! सफल जीवन तोर।
तोर विरहे भुअन भम्मए
भेल मधुकर भोर ॥४॥
जातकि केतकि कत न आछए
सबहि रस समान।
सपनहु नहिं ताहि निहारए
मधु कि करत पान ॥६॥
वन उपवन कुंज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप।

१—आसायँ = आशा में। गमावय = बिताता है। सूत = सो[ता]
है। सँयान = शयन पर, बिछावन। २—जखन = जब। जतए = जह[ाँ]
जाहि = जिसे। निहारए = देखता है। जब जहाँ जिसे देखता है, उसे-[उसे]
ही तुम्हें भान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है। ४—भुअन =
भुवन, संसार। भम्मए = भ्रमण करता है। मधुकर = भौंरा। भोर = विभो[र]
व्याकुल या प्रातःकाल। ५—जातकि = पारिजात। कत = कितना। अछए =
है। ६—स्वप्न में भी उन्हें देखता तक नहीं, फिर उनका मधु क्यों पा[न]

तोहि बिनु पुनु पुनु मुरुछए
अइसन प्रेम सरूप ॥८॥

साहर नवह सउरभ न सह
गुञ्जरि गीत न गाब।

चेतन पापु चिन्ताए आकुल
हरख सबे सोहाव ॥१०॥

जकर हिरदय जतहि रतल
से घसि ततहि जाए।

जइओ जतने बाँघि निरोधिअ
निमन नीर थिराए ॥१२॥

ई रस राय सिवसिंघ जानए
कवि विद्यापति भान।

रानि लखिमा देइ वल्लभ
सकल गुननिधान ॥१४॥

८—पुनु पुनु = पुन पुन, बारबार। मुरुछए = मूर्च्छित होता है। अइसन = इस प्रकार का। ९—साहर = सहकार—आम। नवह = नया, नव-कुसुमित फूल। सउरभ = सौरभ, सुगंध। गुञ्जरि = गुंजार करके। गाब = गाता है। १०—चेतन = चैतन्य, जीव। पापु = पापी। चिन्ताएँ = चिन्ता से। हरख सबे सोहाव = आनन्द में ही सब कुछ सुहाता है। ११—जकर = जिसका। जतहि = जहाँ। रतल = अनुरक्त हुआ। से = वह। घसि = घुसकर। ततहि = वहाँ ही। १२—जइओ = यद्यपि। निरोधिअ = रोक रखिये। निमन = नीची जगह। नीर = पानी। थिराए = स्थिर होता है।

नो

तोहि विनु पुनु पुनु मुरुछए
अइसन प्रेम सरूप ॥८॥

साहर नवइ सउरम न सह
गुजरि गीत न गाव।

चेतन पापु चिन्ताए आकुल
हरख सबे सोहाव ॥१०॥

जकर हिरदय जतहि रतल
से घसि ततहि जाए।

जइओ जतने बाँधि निरोधिअ
निमन नीर थिराए ॥१२॥

ई रस राय सिवसिंघ जानए
कवि विद्यापति भान।

रानि लखिमा देइ वल्लभ
सकल गुननिधान ॥१४॥

८—पुनु पुनु = पुन पुन, बारबार। मुरछए = मूर्च्छित होता है। अइसन = इस प्रकार का। ९—साहर = सहकार—आम। नवइ = नया, नव कुसुमित फूल। सउरम = सौरभ, सुगंध। गुजरि = गुंजार करके। गाव = गाता है। १०—चेतन = चैतन्य, जीव। पापु = पापी। चिन्ताएँ = चिन्ता से। हरख सबे सोहाव = आनन्द में ही सब कुछ सुहाता है। ११—जकर = जिसका। जतहि = जहाँ। रतल = अनुरक्त हुआ। से = वह। घसि = घुसकर। ततहि = वहीं ही। १२—जइओ = यद्यपि। निरोधिअ = रोक दिये। निमन = नीची जगह। नीर = पानी। थिराए = स्थिर होता है।

[५८]

कर धरु करु मोहे पारे
देव मैं अपरुब हारे, कन्हैया ॥ २ ॥
सखि सब तेजि चलि गेली।
न जानू कौन पथ भेली, कन्हैया ॥ ४ ॥

हम न जाएब तुअ पासे।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥ ६ ॥
विद्यापति एहो भाने।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥ ८ ॥

१—कर = हाथ। धरु = धरकर। करु = करो। पारे = उस पार। २—देव = दूँगी। मैं = मैं। हारे = माला। ३—तेजि = छोड़कर। चलि गेली = चली गई। ४—न जानू = न मालूम। कौन पथ भेली = किस रास्ते गई! ५—जाएब = जाऊँगी। तुअ = तेरे। पासे = निकट। ६—औघट घाटे = जिस घाट से कोई आता जाता न हो। ७—एहो = यह माने = कहते हैं। ८—गूजरि = बाला, गोपी।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। जहाँ एक ओर कहती है—'हम न जाएब तुअ पासे, तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है—'जाएब औघट घाटे' यानी जा रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही, अर्थात् चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें। यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान हैं। रसिक पाठक गौर करें।

—:oo:—

Poetry has some thing divine in it—Bacon

[५८]

कर धरु करु मोहे पारे
देव मैं अपरुब हारे, कन्हैया ॥ २ ॥
सखि सब तेजि चलि गेली।
न जानू कौन पथ भेली, कन्हैया ॥ ४ ॥

हम न जाएब तुअ पासे।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥ ६ ॥
विद्यापति एहो माने।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥ ८ ॥

१—कर = हाथ। धरु = धरकर। करु = करो। पारे = उस पार। २—देव = दूँगी। मैं = मैं। हारे = माला। ३—तेजि = छोड़कर। चलि गेली = चली गई। ४—न जानू = न मालूम। कौन पथ भेली = किस रास्ते गई? ५—जाएब = जाऊँगी। तुअ = तेरे। पासे = निकट। ६—औघट घाटे = जिस घाट से कोई आता जाता न हो। ७—एहो = यह माने = कहते हैं। ८—गूजरि = बाला, गोपी।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। जहाँ एक ओर कहती है—'हम न जाएब तुअ पासे, तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है—'जाएब औघट घाटे' यानी जा रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही, क्योंकि चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें। यों ही इनके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान हैं। रसिक पाठक गौर करें।

—:००:—

Poetry has some thing divine in it—Bacon

[५९]

कुंज-भवन सएँ निकसलि रे
रोकल गिरिधारी।
एकहि नगर बसु माधव हे
जनि कर बटमारी॥ २॥
छाड़ु कन्हैया मोर आँचर रे
फाटत नव-सारी।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी॥ ४॥
संग क सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी।
दामिनि आए तुलाएल हे
एक राति अँधारी॥ ६॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी।
हरि क संग किछु डर नहि हे
तोंहे परम गमारी॥ ८॥

१—सयँ = से। निकसलि = निकली। रोकल = रोक लिया। २—बसु = रहते हो। जनि = मत। बटमारी = डकैती, राहजनी। ३—नव सारी = नवीन साड़ी। उघारी = नग्न। ५—संग क = साथ की। अगुआइलि = आगे गई। एकसरि = अकेली। ६—दामिनि आए तुलाएल = बिजली भी चमकने लगी—मेघ छा गये। अँधारी = अंधेरी, कृष्णपक्ष की। ८—हरि क = श्रीकृष्ण के। गमारी = गँवारी, बेवकूफ।

(६०)

तुअ गुन गौरव सील-सोभाव ।
सुनि कए चढ़लिहुँ तोहरि नाव ॥ २ ॥
हठ न करिअ कान्हु कर मोहि पार ।
सव तहँ वड़ थिक पर-उपकार ॥ ४ ॥
आइलि सखि सव साथ हमार ।
ते सव भेलि निकहि विधि पार ॥ ६ ॥
हमरा भेल कान्हु तोहरो आस ।
जे अगिरिअ ता न होइअ उदास ॥ ८ ॥
भल मन्द जानि करिअ परिनाम ।
जस अपजस दुइ रहत ए ठाम ॥ १०॥
हम अवला कत कहव अनेक ।
आइति पड़ले वुझिअ विवेक ॥ १२ ॥
तोहँ पर नागर हम पर नारि ।
काँप हृदय तुअ प्रकृति विचारि ॥ १४ ॥
भनइ विद्यापति गावे ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन ई रस सकल से पावे ॥ १६ ॥

२—सुनिकए=मुनकर । ४—सव तहँ=सवसे । थिक=है । ६—भेलि=हुई । निकहि विधि=अच्छी तरह से । ८—जे=जो कुछ । अगरिअ=अंगीकार करना । ता=उससे । होइअ उदास=उदासीन होना, मुकरना । ११—कत=कितना । १२—आइति पड़ले=आर्ति पड़ने पर ही, विपत्ति का अवसर आने पर ही । वुझिअ विवेक=विवेक की परख होती है ।

[६१]

नाय डोलाय अहीरे
जिवइत न पाओय तीरे
खर नीरे लो।
खेवा न लेअए मोले
हँसि हँसि की दहु बोले
जिव डोले लो॥ २॥
किए बिके ऐलिहु आपे
बेढ़लिहु मोहि बड़ सापे
मोरे पापे लो।
करितहुँ पर-उपहासे
परिटिहुँ बन्हि विधि-फाँसे
नहिं आसे लो॥ ४॥
न बूझसि अबुझ गोआरी
भजि रहु देव मुरारी
तहि गारी लो।
कवि विद्यापति भाने
नृप सिवसिंघ रस जाने
नव का॰हे लो॥ ६।

१—जिवइत=जीती हुई। खर नीरे=तीक्ष्ण धारा। २—मोले=मूल्य में, रुपये-पैसे में। की दहु=न जाने क्या। ४—किए=क्या। ऐलिहु मैं आई। बेढ़लिहु=आ घेरा। ४—तन्हि=उसी से। ५—गोआरी=ग्वालिन। गारी=गाली। ६—नवीन, युवक।

सखी शिक्षा

राधा को शिक्षा

[६२]

प्रथमहि अलक तिलक लेव साजि
चंचल लोचन काजर आँजि ॥२॥
जाएव बसन आँग लेव गोए।
दूरहि रहव तें अरथित होए ॥४॥
मोरि वोलव सखि रहव लजाए।
कुटिल नयन देव मदन जगाए ॥६॥
झाँपव कुच दरसाओव आध।
खन खन सुदढ़ करव निवि-वाँध ॥८॥
मान कइए किछु दरसव भाव।
रस राखव तें पुनु पुनु आव ॥१०॥
हम कि सिखाओवि अओ रस-रंग।
अपनहि गुरु भए कहत अनंग ॥१२।
भनइ विद्यापति ई रस गाव।
नागरि कामिनि भाव बुझाव ॥१४॥

१—अलक = केश। तिलक = टीका; बेंदी। लेव = लेना। २—आँजि = लगा देना। ३—बसन = कपड़ा। आँग = अंग। लेव गोए = छिपा लेना। ४—तें = इससे। अरथित = अर्थित, चाहक। ५—मुख मोड़कर बातें करना और बार-बार लज्जित होना। ५—कुटिल = टेढ़े। झाँपव = ढँकना निवि-बाँध = नीवी का बन्धन। ६—मान करने के कुछ भाव प्रकट करना। ११—आओ = और। १२—अनंग = कामदेव। १४—नागरि-कामिनि = सुचतुरा स्त्री।

(६३)

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख
ञिव जोखि नागर दे दस लाख ॥२॥

केओ दे हास सुधा सम नीक।
जइसन परहोंक तइसन बीक ॥४॥

सुनु सुन्दरि नव मदन—पसार।
जनि गोपइ आओर बनिजार ॥६॥

रोस दरस रस राखब गोए।
घएने रतन अधिक मून होए ॥८॥

भलहि न हृदय बुझाओब नाह।
आरति गाहक महँग बेसाह ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनहु सयानि ।
सुहित बचन राखब हिय आनि ॥१२॥

१, २—जोखि=तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाक्ष करना जिससे (मूल-रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—केओ=कोई। हास=हँसी। नीक=अच्छा। ४—परहोंक=बोहनी। बीक—बिक्री होती है। ५—मदन-पसार=कामदेव की दूकान। ६—गोपइ=छिपाओ। बनिजार=व्यापारी। ७, ८—रोष प्रकटकर प्रेम छिपाये रखना, क्योंकि सँजोये हुए रत्न की कीमत अधिक होती है। ९—भलहि=अच्छी तरह। १०-आरति=आर्त्त, आग्रहपूर्ण। महग= महँगा। बेसाह=खरीद करता है। १२—सुहित बचन=भलाई की बातें। हिय=हृदय।

[६४]

सुनु सुनु ए सखि वचन विसेस ।
आजु हम देव तोहे उपदेस ॥२॥

पहिलहि बैठवि सयनक—सीम ।
हेरइत पिया मुख मोड़वि गीम ॥४॥

परसइत दुहु कर वारवि पानि ।
मौन रहवि पहु करइत बानि ॥६॥

जब हम सौंपब करे कर आपि ।
साधस धरवि उलटि मोहे काँपि ॥८॥

विद्यापति कह इह रस ठाठ ।
भए गुरु काम सिखाओव पाठ ॥१०॥

३—सयनक-सीम = शय्या की एक ओर। ४—ग्रीम = ग्रीवा, गरदन। जब प्रीतम मुख देखने लगे तब अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना। ५—परसइत = स्पर्श करते। कर = हाथ। वारवि = वारण करना, मना करना। पानि = हाथ। जब वे अंग-स्पर्श करने लगें तब दोनों हाथों से उनके हाथ को रोकना। ६—पहु = प्रभु, प्रीतम। करइत बानि = बात-चीत करते समय। ७-८—करे = हाथ में। कर = हाथ। आपि = अर्पण कर। साधस = भय। जब मैं उनके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौपूँगी, तो तुम संभ्रम से उलटकर काँपते हुए मुझे पकड़ना। ९—रस-ठाठ = रस की रीति। १०—भए = होकर।

—:०:—

"रसात्मकं वाक्यं काव्यम्"—साहित्यदर्पणः

[६५]

परिहर, ए सखि, तोहे परनाम,
हम नहि जाएब से पिआ ठाम ॥२॥
वचन - चातुरि हम किछु नहि जान।
इंगित न बूझिए न जानिए मान ॥४॥
सहचरि मिली बनावए भेस।
बाँधए न जानिए अप्पन केस ॥६॥
कमु नहि सुनिए सुरतक बात।
कइसे मिलब हम माधव साथ ॥८॥
से वर नागर रसिक सुजान।
हम अबला अति अलप गेआन ॥१०॥
विद्यापति कह कि बोलब तोए।
आजुक मीलल समुचित होए ॥१२॥

१—ए सखि, (इन बातों को) छोड़ो, मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ। २—ठाम = स्थान। ४-इंगित = इशारा। न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ। ५—सहचरि = सखियाँ। बनावए भेस = भेष बनाती हैं—मेरा शृंगार कर देती हैं। ६—अप्पन = अपना। ७—सुरत क बात = काम क्रीड़ा की बातें। ८—कइसे = किस प्रकार। ९—नागर = चतुर। १०—अलप = अल्प, थोड़ा। ११—तोए = तुम्हें। १२—आजुक = आज का। मीलल = मिलना।

—·—

शेर दर अस्ल है वही 'हसरत'
सुनते ही दिल में जो उतर जाये।

[६६]

काहे डरसि सखि चलु हम संग।
माधव नहिं परसब तुअ अंग ॥२॥

इह रजनी फुल-कानन माझ।
के एक फिरत साजि बहु साज ॥४॥

कुसुमक घोर धनुष धरि पानि।
मारत सर वाला जन-जानि ।.६॥

अतए चलह सखि भीतर कुंज।
जहाँ रह हरी महावल पुंज ॥८॥

एत कहि आनल धनि हरि पास।
पूरल वल्लभ सुख-अभिलास ॥१०॥

१—काहे = किसलिये। डरसि = डरती है। २—परसब = स्पर्श करेंगे। ५,६—रजनी — रात। फुल-कानन = पुष्प-वन। माझ = में। के = कौन। एक = अकेले। कुसुमक = फूलों का। धनुप = धनुप। पानि = हाथ। इस रात. में, पुष्प वन में, यों नाना प्रकार शृङ्गार करके कौन अकेली घूमती है? (अरी, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि) फूलों का कठोर धनुप हाथ में धरकर (कामदेव रूपी तीरन्दाज) वाला स्त्रियों को खोज-खोजकर वाण मारता है। ७—अतए = अतएव, इसलिये। ८—हरी = श्रीकृष्ण। महावल पुंज = बड़े बलशाली। 'महावलपुंज' कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के वाण की चोट से बचायेंगे। ९—एत = इतना। अनल = लाई। धनि = वाला। पास = निकट। १०—पूरल = पुरा हुआ। वल्लभ = विद्यापति का उपनाम।

[६७]

परिहर मन किछु न कर तरास।
साघस नहिं कर चल पिय पास ॥२॥

दुर कर दुरमति कहलम तोए।
बिनु दुख सुख कबहु नहि होए ॥४॥

तिल आध दूख जनम भरि सूख।
इथे लागि धनि किए होइ बिमूख। ६॥

तिला यक मूनि रहु दु नयान।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥८॥

चल चल सुन्दरि करह सिंगार।
विद्यापति कह एहि से बिचार ॥१०॥

१—परिहर = छोड़ो। तरास = त्रास, डर। २—साघस = भय। ३—दुर कर = दूर करो। दुरमति = दुर्बुद्धि। कहलम = मैं कहती हूँ। तोए = तुझे। तिल आध = (मैथिली मुहावरा) एक क्षण के लिये। ६—इथे = इसलिये। किए = क्यों। होइ = होती हो। बिमूख = विमुख, विपक्ष। ७—मूनि रहु = मूँद रक्खो। दु = दो। नयान = आँखें। ८—जइसे = जिस प्रकार। पान = पीता है। करह = करो। १०—एहि से = यह ही।

A poet is not only a dreamer of dreams, his heart is the mirror of the world's emotions, his songs of gladness are the echoes of the world's laughter, his songs of sorrow reflect the tears of humanity.

—Sarojini

श्री कृष्ण को शिक्षा

[६८]

हमे दरसइत कतहुँ बेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप ।
भुरते सिंगारि आज धनि आओलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥
सुनु हे कान्हु कहिये अवधारि ।
सकल काज हम बुझल बुझाएल
न बुझल अन्तर नारि ॥४॥
अभिनव काम नाम पुनु सुनइत
रोखत गुन दरसाइ ।
अरि सम गंजए मन पुनु रंजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥
अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन तरासे ।
कह कवि-सेखर सहज विषय-रत
विदगधि केलि विलासे ॥८॥

१—दरसइत = दिखा करके । कतहुँ = कितना ही । बेस करु = शृंगार करना । हेरइत = देखते । झाँप = ढाँप लेना । २—भुरते = काम क्रीड़ा । ३—अवधारि = निश्चय करके । ४—बुझल-बुझाएल = समझ लिया है, समझा दिया है । अन्तर = हृदय ५—अभिनव = नवीन । रोखत = रोष प्रकट करती है । गुन दरसाइ = गुण दिखाकर, कला प्रकट

[६६]

सुन सुन सुन्दर कन्हाई। तोहे सोंपल घनि राई ॥२॥
कमलिनि कोमल कलेवर। तुहु से भूखल मधुकर ॥४॥

सहज करवि मधु पान। भूलह जनि पँचवान ॥६॥
परवोधि पयोघर परसिह। कुञ्जर जनि सरोरुह ॥८॥

गनइत मोतिम हारा। छले परसब कुच भारा ॥१०॥
न बुझए रति-रस रंग। खन अनुमति खन भंग ॥१२॥

सिरिस कुसुम जिनि तनु। थोरि सहब फुल-धनु ॥१४॥
विद्यापति कवि गाव। दूतिक मिनति तुअ पाव ॥१६॥

करके, चूँकि बिल्कुल ही नवोना है अत, काम का नाम सुनते ही कला प्रकट करती हुई क्रोधित हो उठती है। ६—गजय = गजना करती है। रजय = प्रसन्न करती है। साह = वह। ८—हृदय से तो (तुम्हें) प्राणों से अधिक चाहती है किन्तु बाहर डर से प्रकट नहीं करती।

२—धनि = बाला। राइ = राधा। ३—कलेवर = शरीर। ४—भूखल = भूखा हुआ। मधुकर = भौंरा। ५—सहज = स्वाभाविक ढंग से, धीरे धीरे। करव = करना। जनि = नहीं। पँचवान = कामदेव। ७—परबोध = प्रबोधकर, समझा-बुझाकर। पयोधर = कुच, स्तन। परसिह = स्पर्श करना। ८—कुंजर = हाथी। सरोरुह = कमल। जिस प्रकार हाथी कमल को रौंदता है उस प्रकार नहीं। ९—गनइत = गिनते हुए। १०—छल = छल से। १२—अनुमति = राजी होना। १३—सिरिस कुसुम = एक कोमल फूल। जिनि = ऐसा। १४—फुलधनु = काम का धनुष। १६—मिनती = विनती। पाव = पैर।

[७०]

प्रथम समागम भुखल अनङ्ग।
धनि वल जानि करब रतिरङ्ग ॥२॥
हठ न करब अति आरति पाए।
वड़हु भुखल नहि दुहु कर खाए ॥४॥

चेतन कान्हु तोंहहि अति आथि।
के नहि जान महत नव हाथि ॥६॥
तुअ गुन गन कहि कत अनुबोधि।
पहिलहि सबहि हललि परबोधि ॥८॥

हठ नहि करब रती परिपाटि।
कोमल कामिनि विघटति साटि ॥१०॥
जावे रभस सह तावे विलास।
विमति बुझिअ जयँ न जाएब पास ॥१२॥

धसि परिहरि नहि धरविए वाहु।
उगिलल चाँद गिलए जनि राहु ॥१४॥
भनइ विद्यापति कोमल काँति।
कौसल सिरिस-सुमन अलि भाँति ॥१६॥

१—अनङ्ग = कामदेव। ३—आरति पाए = व्याकुलता में पाकर। ४—कर = हाथ से। ५—चेतन = चतुर। आथि = अस्ति, हो। ६—महत = महावत। नव = नवता है, नम्र होता है। ७—अनुबोधि = समझा-बुझाकर। हललि = लाई। ९–रती-परिपाटि = रति क्रीड़ा की परिपाटी। १०—विघटति साटि = सट्टी-घट्टी में विघटन होगा, मेल में अन्तर पड़ेगा। ११—रभस = काम-क्रीड़ा। सह = सहन करे। १२—विमति = राजी नहीं। जयँ = यदि।

[७१]

बुझर छयलपन आज।
राहि मनि रतने आनलि अति जतने
बचि सब रमनि-समाज ॥२॥

सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमारि धनि
आलिगब दृढ़ अनुरागे।
निर्भय करब केलि केह नहि बूझे गेलि
भौर भरे मँजरि न भांगे ॥४॥

पिरीतिक बोल बोलि नियरे बइसाओब
नख हनि आनव कोल।
नहि नहि कर धनि कपट मुलब जनु
यदि कह कातर बोल ॥६॥

१३—एक वार छोड़कर पुन. थँमकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह मत पकड़ना। १४—गिरब = निगल जाना। १६—जिस प्रकार भौंरा बड़े कौशल से सिरिस के फूल का रस चूसता है, उसी प्रकार।

१—छयलपन = रसिकता। २—राहि = राधा। मनि रतने = रत्नों में मणि। आनलि = लाई। बचि = छल करके। ३—जनि = ऐसा। आलिगब = आलिंगन करना, छाती लगाना। ४—निर्भय होकर केलि करना, यह किसे नहीं मालूम है कि भौंरे के शरीर के भार से कोमल मंजरी नहीं टूटती। ५—नियरे = निकट। नख हनि आनव कोल = नख से हनन कर, नख से कुचों को क्षत विक्षत कर—उसे गोदी में बैठा लेना। ६—नहि नहि कर धनि—वह बाला यदि नहीं नहीं करे। कातर बोल = दीन वचन।

मिलन

[७२]

सुन्दरि चललिहु पहु-घर ना।
चहुदिस सखि सब कर धर ना ॥२॥
जइतहु लागु परम डर ना।
जइसे ससि काँप राहु डर ना ॥४॥
जाइतहि हार टुटिए गेल ना।
भूखन वसन मलिन भेल ना ॥६॥
रोए रोए काजर दहाए देल ना।
अदँकहि सिंदुर मेटाए देल ना ॥८॥
भनइ विद्यापति गाओल ना।
दुख सहि सहि सुख पाओल ना ॥१०॥

१—चललिहु = चली। पहु = स्वामी। २—चहुदिस = चारों ओर। कर = हाथ। ३—जइतहु = जाने में। ४—ससि = चन्द्रमा। —रोए = रोकर। दहाए देल = दहा दिया। अदँकहि = आतङ्क से ही, डर से।

स कविः कथ्यते स्रष्टा रमते यत्र भारती।
रसभावजुषैर्भूतैरलङ्कारैर्गुणोदयैः ॥

—वेंकटाचार्य।

[७३]

कौतुक चललि, भवन कए सजनि गे
सँग दस चौदिस नारि।
विच विच सोभित सुन्दरि सजनि गे
जेहि घर मिलत मुरारि ॥२॥

लए अभरन कए षोड्स सजनि गे
पहिर उतिम रँग चीर
देखि सकल मन उपजल सजनि गे
मुनिहुक चित नहि थीर ॥४॥

नील वसन तन घेरलि सजनि गे
सिर लेल घोघट सारि।
लग लग पहु के चलइत सजनि गे
सकुचल अंकम नारि ॥६॥

१—कौतुक=कुतूहलयुक्त होकर। चौदिस=चारो ओर। १—विच विच=मध्य भाग में। २—अभरन=आभरण, गहने। कए षोडस=सोलह श्रृंगार करके। उतिम रँग=अच्छे रंग की। चीर=साड़ी। ४—उपजल=(काम) उत्पन्न हुआ। मुनिहुक=ऋषियों का भी। थीर=स्थिर। ५—नील वसन=नील रंग कपड़ा। तन घेरलि=शरीर को लपेटे हुई। घोघट=घूँघट। सारि लेल=सँभार लिया। ६—लग=निकट। पहु=प्रीतम। सकुचल=सकुचा गया। अंकम=गोदी। प्रीतम के निकट जाने में कन्या का हृदय सकुच गया। अपने को अपने ही अंक (गोदी) में भर लिया।

सखि सब देल भवन कए सजनि गे
घुरि आइलि सभ नारि।

कर धए लेल पहु लग कए सजनि गे
हेरए वसन उघारि ॥ ८ ॥

भए वर सनमुख वोलइ सजनि गे
करे लागल सविलास।

नव रस रीति पिरिति भेल सजनि गे
दुहु मन परम हुलास ॥ १० ॥

विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
ई थिक नव रस रीति।

वयस जुगल समुचित थिक सजनि गे
दुहु मन परम पिरीति ॥ १२ ॥

७—देल भवन कए = भवन कए देल = घर में ला रक्खा। घुरि आइलि = लौट आईं। ८—कर धए = हाथ धरकर। पहु लग कए लेल = प्रीतम निकट ले आये। हेरए = देखता है। वसन = वस्त्र (अंचल)। उघारि = उघारकर (अंचल) हटाकर। ९—भए = होकर। वर = प्रीतम। करे लागल = करने लगा। सविलास = काम-क्रीड़ा। १०—नव = नवीन। हुलास = आनन्द। ११—ई = यह। थिक = है। १२—वयस = अवस्था। जुगल = दोनों को। समुचित = योग्य।

Poetry is the spontaneous over-flow of powerful feelings.

[५४]

अहे सखि अहे सखि लए जनि जाह।
हम अति बालिक आकुल नाह ॥ २ ॥
गोट-गोट सखि सब गेलि बहराय।
बजर केवाड़ पहु देलन्हि लगाय ॥ ४ ॥
तेहि अवसर पहु जागल कन्त।
चीर सँभारति जिउ भेल अन्त ॥ ६ ॥
नहि नहि करए नयन ढर नोर।
काँच कमल भमरा झिकझोर ॥ ८ ॥
जइसे डगमग नलिनिक नीर।
तइसे डगमग धनिक सरीर ॥ १० ॥
भन विद्यापति सुनु कविराज।
आगि जारि पुनि आगिक काज ॥ १२ ॥

१—लए जाह = ले जाओ। जनि = मत, नहीं। २—बालिक = बालिका। आकुल = अधीर। नाह = नाथ, प्रीतम। ३—गोट गोट = एक-एक कर (मैथिली मुहावरा)। गेलि = गई। बहराय = बाहर हो गई। ४—बजर = वज्रतुल्य। पहु = प्रभु, प्रीतम। देलन्हि = दिया। ५—पहु = प्रीतम (यहाँ कामदेव से तात्पर्य है)। ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये। ७—नोर = आँसू। ८—काँच कमल = अधखिला कमल। भमरा = भौंरा। ९—डगमग = हिलता डुलता। नलिनिक नीर = कमल (के पत्ते पर) का पानी। १०—धनिक = धनि के, बाला के। १२—आग जला देती है तो भी फिर आग की आवश्यकता होती ही है।

[७५]

कत अनुनय अनुगत अनुवोधि।
पति-गृह सखिन्हि सुताओलि वोधि ॥२॥
विमुखि सुतलि धनि समुखि न होए।
भागल दल वहुलावए कोए ॥ ४ ॥
वालमु वेसनि विलासनि छोटि।
मेल न मिलए देलहु हिम कोटि ॥ ६ ॥
वसन झपाए वदन धर गोए।
वादर तर ससि वेकत न होए ॥ ८ ॥
भुज-जुग चाँप जीव जौं साँच।
कुच कञ्चन कोरी फल काँच ॥ १० ॥
लग नहि-सरए, करए कसि कोर।
करे कर वारि करहि कर जोर ॥ १२ ॥
एत दिन सैसव लाओल साठ।
अव भए मदन पढ़ाओव पाठ ॥ १४॥
गुरुजन परिजन दुअओ नेआर।
मोहर मुदल अछि मदन-भंडार ॥ १६ ॥
भनइ विद्यापति इहो रस भान।
राए सिवसिंघ लखिमा विरमान ॥ १८ ॥

१—कत = कितना। अनुनय = विनती। अनुगत = खुशामद। अनुवोधि = बुझाना। २—सुताओलि = सुलाई। ३—विमुखि = दूसरी तरफ मुँह करके। ४—वहुलावए = फेरना। कोए = कौन। ५—वेसनि = व्यसनी, सफल नायक। विलासिनि = विलास करनेवाली (वाला),

[५६]

सखि परबोधि सयन-तल आनि ।
पिय हिय हरषि घएल निज पानि ॥२ ॥
छुवइत बालि मलिन भइ गेलि ।
बिधु-कर मलिन कमलिनी भेलि ॥ ४ ॥
नहि नहि कइइ नयन झर नोर ।
सूति रहलि राहि सयनक ओर ॥ ६ ॥
आलिंगए नीवि बँध बिनु खोरि ।
कर कुच परस सेह मैन थोरि ॥ ८ ॥
आचर लेइ बदन पर झाँप ।
थिर नहि होइअ थर थर काँप ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति धीरज सार ।
दिन दिन मदनक होए अधिकार ॥ १२ ॥

६—हिम = हेम = हेम सोना । ७—गोए = छिपाकर । ८—बेकत = व्यक्त, प्रगट । ९–१०—चाँप = दबाकर ।

सॉच = संचय करना । कोर = कोरा, अछूता । सोने के समान कुचों को कच्चे और अछूते फल समझकर दोनों हाथों से दबाकर प्राणों के समान जुगाती है । ११—लग = निकट । सरए = आती है । कोर = कोड, गोदी । २२—करे कर बारि = अपने हाथ से (नायक) के हाथ निवारण करती है । करइ करजोर = हाथ जोड़ती है, प्रार्थना करती है । सैसव = बचपन । साठ लाओल = संगत निभाई । नेबार = निवारण किया हुआ । मोहर = मुहर देकरे ।

१—आनि = लाई । २—घएल = पकड़ा । पानि = हाथ । ३—बालि = बाला । ४—बिधुकर = चन्द्रमा की किरणों से । ५—नीर = आँसू ।

[७७]

प्रथमहि गेलि धनि प्रीतम पास।
हृदय अधिक भेल लाज तरास ॥२॥

ठाढ़ि भेलन्हि धनि अंगो न डोले।
हेम-मूरति सनि मुखहु न बोले ॥४॥

कर दुहु धए पहु पास बइसाए।
रूसलि छलि धनि बदन सुखाए ॥६॥

मुख हेरि ताकए भमर झाँपि लेल।
अंकम भरिकँ कमलमुखि लेल ॥८॥

भनइ विद्यापति दह इ सुमति मति।
रस बूझ हिन्दूपति हिन्दूपति ॥१०॥

६—सूति रहल = सो रही। राहि = राधा। ओर = छोर पर (एक ओर)। खोरि = खोलना। ८—सेह = वही।

१—धनि = नायिका। ३—भेलन्हि = हुई। ५—हेम = सोना। सनि = समान। ६—पहु = प्रभु, प्रीतम। वइसाए = बैठाता है। ६—रूसलि छलि = रूठी हुई थी। ७, ८—हेरि ताकए = भलीभाँति (निरीक्षण करके) देखना। भमर = भौंरा [कृष्ण]। अंकम = गोद। भरिकँ = भरकर, भौंरा (कृष्ण) उसका मुख भलीभाँति—आँखें गड़ाकर—देखता था; अतः नायिका ने उसे ढाँप लिया। किन्तु ज्यों ही उसने अपना मुँह ढाँपा कि मौका पाकर, नायक ने उसे गोद में ले लिया। ६—दह = दो। विद्यापति कहते हैं कि हे सुमति, अब यह (मति) अनुमति दो—कृष्ण की प्रार्थना स्वीकार करो। हिन्दूपति = राजा शिवसिंह।

[७८]

जतने आएलि धनि सयनक सीम।
पॉगुर लिखि खिति नत रहु गीम ॥ २ ॥
सखि हे, पिया पास बैठलि राहि।
कुटिल भौंह करि हेरइछि काहि ॥ ४ ॥
नवि बर नारि पहिल पिया मेलि।
अनुनय करइत रात आध गेलि ॥ ६ ॥
कर धरि बालमु बइसाओल कोर।
एक पद कह धनि नहि नहि बोल ॥ ८ ॥
कोर करइत मोडइ सब अंग।
प्रबोध न मानु, जनि बाल भुजंग ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति नागरि रामा।
अन्तर दाहिन बाहर बामा ॥ १२ ॥

१—सयनक सीम—शय्या की सीमा में, शय्या के निकट। २—पॉगुर = पदांगुलि, पैर की अगुली। खिति = पृथ्वी। नत = नीचे किये। गीम = ग्रीवा, गरदन। ३—राहि = राधा। ४—हेरइछि = देखती है। ५—नवि = नवीना। नवीना सुन्दरी नायिका की प्रथम प्रथम प्रीतम से भेंट हुई।—६—अनुनयविनय। ७—कर धरि = हाथ धरकर। बइसाओल कोर = गोदी में बिठलाया। ८—नहि नहि बोल = वम 'नहीं नहीं' का वचन कहती है—सदा नहीं नहीं बोलती है। ९—गोदी में बिठलाते ही अपने अंगों को ऐंठती है—भावभंगी दिखलाती है। १०—जनि = मानो। बालभुजंग = बच्चा साँप। १२—अन्तर = हृदय से। दाहिन = अनुकूल, बाहर = बाहर से, ऊपर से। बामा = प्रतिकूल।

[७६]

अधर मगइते अओंघ कर माथ।
सहए न पार पयोधर हाथ ॥ २ ॥

विघटल नीवी कर घर जौंति।
अकुरल मदन, घरए कत भाँति ॥ ४ ॥

कोमल कामिनि नागर नाह।
कओन परि होएत केलि निरवाह ॥ ६ ॥

कुच-कोरक तब कर गहि लेल।
काँच बदरि अरुनिम रुच भेल ॥ ८ ॥

लावए चाहिअ नखर विसेख।
भौंहनि आवए चाँदक रेख ॥ १० ॥

तसु मुख सौं लोभे रहु हेरि।
चाँद झपाव वसन कत बेरि ॥ १२ ॥

१—अओंघ कर = नीचे करता है। २—सहए न पार = सह नहीं सकती। पयोधर = कुच। ३—विघटल = खुली हुई। नीवी = कोंचा, फुफनी। कर घर जाँति = हाथ से दबाकर रखती है। अँकुरल = अंकुरित हुआ, पैदा हुआ। भाँति = रूप, आकार। ४—नागर = चतुर। नाह = नाथ, प्रीतम। ६—कओने परि = किस प्रकार। ७—कुच कोरक = कुच की सीमा। ८—बदरि = बैर (छोटे-छोटे कुचों की उपमा)। अरुनिम रुचि = लाल रंग की छटा। ९, १०—नखर = नख की रेखा। विसेख = उत्तम, सुन्दर। (जब प्रीतम) कुच पर नख-रेखा देना चाहता है, तब ११—तसु = उसका। १२—चाँद = चन्द्रमा (मुख)। वसन = कपड़ा (अंचल)।

[८०]

जखन लेल हरि कँचुअ अछोड़ि ।
कत परजुगति कएल अँग मोरि ॥ २ ॥

तखनुक कहिनी कहल न जाय ।
लाजे सुमुखि धनि रहलि लजाय ॥ ४ ॥

कर न मिझाए दूर जर दीप ।
लाजे न मरए नारि कठजीव ॥ ६ ॥

अक्रम कठिन सहए के पार ।
कोमल हृदय उखडि गेल हार ॥ ८ ॥

भनइ विद्यापति तखनुक भान ।
कओन कहल सखि होएत विहान ॥ १० ॥

१—जखन = जिस समय कँचुअ = कंचुकी, चोली । अछोड़ि लेल = उतार लिया । २—कत = कितना । परजुगति = प्रयुक्ति, उपाय । ३—कहिनी = कहानी, कथा । ४—लाजे = लाज से । ५—कर = हाथ । मिझाए = बुझता है । जर – जलता है । दीप = दीपक । दीपक [शय्या से] दूर पर जल रहा है, अतः वह नायिका के हाथ से नहीं बुझता । कवि कुल-गुरु कालिदास के मेघदूत में एक ऐसा ही पद्य है, जिसका अनुवाद यों है—"नीवी ग्रंथी शिथिल करके वस्त्र प्रेमी छुटावे । मुग्धा प्यारी अरुण अधरा काम क्रीड़ा दिखावे ॥ भोली लज्जाविवश तब हो चूर्ण मुट्ठी चलावे । प होती है विफल मणि का दीप कैसे बुझावे ।" ६—लाजे = लाज से । कठजीव (मैथिली मुहावरा) = कठोर प्राण । ७—अक्रम = आलिंगन । सहए के पार = कौन सह सकता है ? उखडि गेल = उखड़ गया, निशान पड़ गया ।

[८१]

ए हरि बले यदि परसवि मोय।
तिरि-बध-पातक लागत तोय ॥ २ ॥

तुहु रस आगर नागर ढीठ
हम न बूझिए रस तीत कि मीठ ॥४॥

रस परसंग उठओ मझु काँप।
बान हरिनि जनि कएलन्हि झाँप ॥६॥

असमय आस न पूरए काम।
भल जन न कर बिरस परिनाम ॥८॥

विद्यापति कह बुझलहुँ साँच।
फलहु न मीठ होअए काँच ॥१०॥

तखनुक = उस समय का । १०— बिहान = प्रातःकाल ।

१—बल = बलपूर्वक । परसवि = स्पर्श करना । मोय = मुझे । २—तिरि बध-पातक = स्त्री के बध का पाप । तोय = तुझे । २—आगर = अग्रणी, श्रेष्ठ । नागर = चतुर ४— तीत = तिक्त, कड़वा । कि = या । परसंग = चर्चा । ५—मझु = मैं । ६—मानों बाण से वेधी जाकर हरिणी उछल उठती हो । ७—कुसमय में करने से न कोई आशा पूरी होती है, और न कोई काम पूरा होता है । ८—भलजन = भला आदमी । न कर = नहीं करते । विरस = रसहीन, बुरा । परिनाम = अंतिम फल । अच्छे आदमी [ऐसा काम] नहीं करते जिसका परिणाम बुरा हो । बुझलहुँ = मैं समझी । १०—कच्चा फल भी मीठा नहीं होता ।

—:०:—

(८२)

रति-सुबिसारद तुहु राख मान ।
बाढ़िले जौवन तोहे देब दान ॥२॥
अबे से अलप रस न पूरब आस ।
थोर सलिल तुअ न जाब पियास ॥४॥
अलप अलप रति यहि चाह नीति ।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ॥६॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि ।
न दिह नख रेख हरि रस जानि ॥८॥
भनइ विद्यापति कइसन रीति ।
काँच दाड़िम प्रति ऐसन प्रीत ॥१०॥

१—रति सुबिसारद = कामक्रीडा में परम चतुर । तुहु = तुम । मान = मर्यादा । २—अबे = इस समय । से = वह । अलप = थोड़ा । पूरब = पूरेगा । सलिल = पानी । तुअ = तेरी । न जाब—नहीं जायगी । ५-६—जिस प्रकार प्रतिपदा से चन्द्रमा थोड़ा-थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी थोड़ी करके बढ़नी चाहिये, यही नीति है । ७—थोरि = छोटा । पयोधर = कुच । पानि = हाथ । अभी कुछ छोटे हैं, उनसे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे । ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत बकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो । ९—कइसन = किस प्रकार की । १०—दाड़िम = अनार [कुच की उपमा] । ऐसन = इस प्रकार ।

— ० —

"जहाँ न जाय रवि, तहाँ जाय कवि ।"

(८३)

निवि-बंधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥२॥
हेरने कओन सुख न बुझ बिचारि।
बड़ तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥४॥
हमर सपथ जों हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥६॥
बिहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥८॥
कहुँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए विलास दीप लए जार ॥१०॥
परिजन सुनि सुनि तेजब निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥१२॥
भनइ विद्यापति एहो रस जान।
नृप सिवसिंह लखिमा-विरमान ॥१४॥

१—निवि बंधन=कोंचे का बंधन। किए=क्यों। २—एहो =इससे भी। ३—हेरने=देखने से। ४—बुझल=मैं समझ गई। —हेरह=देखो। ६—लहु लहु=धीरे-धीरे। पारब गारि=गाली ो! ७—एकान्त में (चुपचाप) विहार करो (बिहर से रहसि) ा देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार=एसा ढंग। १०— म-क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन=पड़ोसी। तेजब ास=निःस्वास लेना। पड़ोसी निन्दा करेंगे। १२—रमह=संभोग ो। पास=निकट। १४—बिरमान=पति।

(८४)

सुन-सुन नागर निवि-बंध छोर ।
गाँठिने नाहि सुरत धन मोर ।।२।।

सुरतक नाम सुनल हम आज ।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ।।४।।

सुरतक खोज करब जहाँ पाव ।
घर कि अछए नहि सखि रे सुधाव ।।६।।

बेरि एक माधव सुन मझु बानि ।
सखि सयँ खोजि माँगि देव आनि । ८।।

विनति करए धनि माँगे परिहार ।
नागरि चातुरि भन कवि कठहार । १०।।

इस पद में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से वर्णित है। कृष्ण राधा से 'सुरत' माँग रहे हैं ।—राधा से काम-क्रीडा करने को कह रहे हैं—इधर राधा कहती है—"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन छोनो इसकी गाँठ में 'सुरत' रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' (कौन है और) क्या काम करता है ? हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी। सखियों से पूछूँगी (सखिरे सुधाव) कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव, एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूँगी तो खोज-ढूँढकर तुम्हें ला दूँगी।" यो (नायिका) विनती करती और मना कर रही है, कवि कठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता पूर्ण) वर्णन करते हैं ।

— ० —

[८५]

हरि-कर हरिनि-नयनि तन सौंपलि
सखिगन गेलि आन ठाम
अवसर पाइ धनि कर धरि नागर
विनति करए अनुपाम ॥२॥
हरिनि-नयनि धनि रामा।
कानुक सरस परस संभाषन
मेटल लाजक धामा
सुखद सेजोपरि नागरि नागर
बइसल नवरति-साधे
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर-थर काँपए राधे ॥६॥
मदन-सिंहासन करल अरोहन
मोहन रसिक सुजान।
भय-गढ तोड़ल अलप समाधल
राखल सकल समान ॥८॥
कह कवि-सेखर गरुअ भूख पर
करु जत थोर अहार
अइसन दुहु तन तलफइ पुन पुन
उपजल अधिक विकार ॥१०॥

४—सरस परस—रसमय स्पर्श, आलिंगन। ५—सेजोपरि = शय्या के ऊपर। करल अरोहन = आरोहण किया, चढ़े। ८—अलप समाधल = थोड़े में संतुष्ट किया। समान = मान-सहित। ९— गरुअ = अधिक।

[८६]

सुरत समापि सुतल वर नागर
पानि पयोधर आपी।
कनक संभु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥२॥
भनि ह माधव, केलि विलासे
मालति रमि अलि ताहि अगोरसि
पुनु रति-रंगक आसे ॥४॥
वदन मेराए धएल मुख-मंडल
कमल मिलल जनि चन्दा।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल
पीबि अमिय मकरन्दा ॥६॥
भनइ अभीकर सुनह मधुरपति
राधा-चरित अपारे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सुकवि भनथि कंठहार ॥८॥

१—सुरत = काम क्रीड़ा। समापि = समाप्त कर। सुतल = सो गया। पानि = हाथ। पयोधर = कुच। आपी = अर्पण कर, रख। २—कनक संभु = सोने का महादेव। सरोरुह = कमल। ४—अलि = भौंरा। अगोरसि = अगोर रहता है। ३—मेराए = मिलाकर। धएल = रखा। वदन-मंडल = कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख से लगाकर रखा। ६—दुअओ = दोनों। अरसाएल = अलसा गये। अभीकर = शिवसिंह के मन्त्री। सुकवि-कंठहार = विद्यापति।

[८७]

हे हरि हे हरि सुनिअ स्रवन भरि
अब न विलासक बेरा।
गगन नखत छल से अवेकत भेल
कोकिल करइछ फेरा ॥ २ ॥
चकवा मोर सोर कए चुप भेल
उठिए मलिन भेल चंदा।
नगरक धेनु डगर कए संचर
कुमुदनि वस मकरंदा ॥ ४ ॥
मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अवसर भल नहिं मंदा।
विद्यापति भन एहो न निक थिक
जग भरि करइछ निंदा ॥ ६ ॥

१—स्रवन भरि = कान भरकर, अच्छी तरह। विलासक बेरा = केलि का समय। २—गगन = आकाश। नखत = नक्षत्र, तारे। छल = थे। से = वह। अवेकत भेल = अव्यक्त हुए, छिप गये। करइछ फेरा = फेरा कर रही है, इधर-उधर पुकार रही है। ३—सोर कए = शोरगुल करके। चुप भेल = चुप हो गये। ४—धेनु = गौ। डगर = राह। संचर = जा रही है। कुमुदिनि वस मकरंदा = कुमुदिनियों के वश में मकरंद हो गया अर्थात् ये मुँद गईं। मुख केर = मुख का। सेहो = वह भी। ५—भल = भला अच्छा। मन्दा = बुरा। निक = अच्छा, उचित। थिक = है।

—::※::—

[८८]

रयनि समापलि फुलल सरोज
भमि भमि भमरी भमर खोज ॥ २ ॥
दीप मंद रुचि अम्बर रात।
जुगुतहि जानलि भए गेल परात ॥ ४ ॥
अबहु तेजह पहु मोहि न सोहाए।
पुनु दरसन होअ मदन दोहाए ॥ ६ ॥
नागर राख नारि मान-रंग
हठ कएने पहु हो रस भंग ॥ ८ ॥
सब परिजन जन पावए चोरि।
पर जन रस लए न रह अगोरि ॥ १० ॥

१—रयनि = रात। समापलि = बीत गई। सरोज = कमल। २—भमरी घूम-घूमकर भ्रमर की खोज कर रही है—क्योंकि भ्रमरी को छोड़कर भ्रमर पराग लोभ से रात-भर कमलिनी-कोष में बंद था और अब उसके निकलने का समय आ गया है। ३—दीप = दीपक। मंद रुचि = क्षीण कान्ति, मलिन। अम्बर = आकाश। रात = लाल हुआ। ४—जुगुतहि = युक्ति से ही। जानलि = जान गई। ५—तेजह = छोड़ो। पहु = प्रभु, प्रीतम। ६—मदन दोहाए = कामदेव की दुहाई। ७—नागर = चतुर। मान रंग = आदर और प्रेम। ९—पावए = कहे। परजन = परपुरुष।

"The beauty of poetry is to paint the human life truly."

सखी-सम्भाषण

[८९]

आजु विपरित घनि देखिअ तोय।
बुझए न पारिअ संसय मोय ॥२॥

तुअ मुख-मंडल पुनिमक चाँद।
का लागि भए गेल ऐसन छाँद ॥४॥

नयन, जुगल भेल काजर विथार।
अघर निरस करु कओन गमार ॥६॥

पीनपयोघर नखरेख देल।
कनक-कुंभ जनि भगनहु भेल ॥८॥

अंग विलेपन कुंकुम भार।
पीताम्बर घरु इथे कि विचार ॥१०॥

सुजन रमनि तुहु कुलवति वाद।
का सयँ भुंजलि मरमक साघ ॥१२॥

कामिनि कहिनि कह सम्वाद।
कह कवि-सेखर नह परमाद ॥१४॥

१—विपरित = वदली हुई। ३—पुनिम क = पूर्णिमा का। ४—का लागि = किसलिये। ऐसन छाँद = इस आकार का अर्थात् ऐसा मलिन। ५—वियार = विस्तार, फैल जाना। ६—अघर = ओष्ठ। ७—पीन-पयोधर = पुष्ट कुच। ८—कनक-कुम्भ = सोने के घड़े (कुच)। भगनहु = टूट जाना। कुंकुम भार = केशर से भरा हुआ अर्थात् पीतवर्ण। १०—पीताम्बर घरु = पीताम्बर धारण किये हुई हो-शरीर पीला पड़ गया है। इथे = इसका। कि = क्या। १२—का सयँ = किसके संग। भुंजलि = भोग किया। मरम क साघ = हृदय की इच्छा। १४—परमाद = प्रवाद, शिकायत

[६०]

आजु देखलिसि कालि देखलिसि
आज कालि कत भेद।
सैसव बापुर सीमा छाड़ल
जउवन बाँधल फेद ॥२॥
सुन्दर कनककेआ मुति गोरी।
दिन दिन चाँद-कला सयँ बाढ़लि
जउवन सोभा तोरी ॥४॥
बाल पयोधर गिरिक सहोदर
अनुपमिए अनुरागे।
कओन पुरुष कर परसए पाओल
जे तनु जिवत्र परागे ॥६॥
मन्द हास बंकिम कए दरसए
चंगिम भौंह बिभंगे।
लाज वेआकुलि सामु न हेरए
आओल नयन-तरंगे ॥८॥
विद्यापति कविवर यह गाबए
नव जौवन नव कन्ता।
सिवसिंह राजा ए रस जानए
मधुमति देवि सुकन्ता ॥१०॥

२—बापुर = बेचारा। फेद (अस्पष्ट)। कनककेआ = कनकीया, स्वर्ग-निर्मिता। मुति = मूर्ति। ४—बाल पयोधर = छोटे छोटे कुच। गिरिक सहोदर = पहाड़ के भाई (पहाड़ के ऐसे)।

[९१]

सामरि हे झामरि तोर देह।
की कह का सयँ लाएलि नेह ॥२॥
नींद भरल अछ लोचन तोर।
कोमल वदन कमल-रुचि चोर ॥४॥
निरस धुसर करु अधर पँवार।
कोन कुबुधि लुटु मदन-भंडार ॥६॥
कोन कुमति कुच नख-खत देल।
हा-हा सम्भु भगन भए गेल ॥८॥
दमन-लता सम तनु सुकुमार।
फूटल वलय टुटल गृम हार ॥१०॥
केस कुसुम तोर, सिरक सिंदूर।
अलक तिलक हे सेउ गेल दूर ॥१२॥
भनइ विद्यापति रति अवसान।
राजा सिव सिंघ ई रस जान ॥१४॥

अनुपामिए = उपमा देते हैं। ६—जितल परागे = पराग को जीत लिया—पीला पड़ गया। ७—चंगिम = सुन्दर। सामु = सामने।

१—सामरि = श्यामा, सुन्दरी। झामरि = मलिन। २—की = क्या। का सयँ = किससे। लाएलि = लाई। ३—अछ = है। ४—कोमल मुख की कमल-सदृश आभा चोरी चली गई है—वह मंद पड गया है। ५—घुसर = धूसर, भूरा। पँवार = प्रवाल, मूँगा। ७—खत = क्षत, घाव। दमन-लता = द्रोण पुष्प की लता। १०—वलय = हाथ की चूड़ी। गृम = ग्रीवा, गला। ११-कुसुम = फूल। [illegible]

[९२]

ए धनि ऐसन कइवि मोय।
अजु जे कैसन देखिय तोय ॥२॥
नयन बयन आनहि भाँति।
म्हइत कहिनि भूजसि पाँति ॥४॥
सुरँग अधर बिरँग भेलि।
का सयँ कामिनि कएल केलि ॥६॥
बेकत भए गेल गुपुत काज।
अतए ककर करह लाज ॥
सघन जघन काँपइ तोर।
मदन मथन कएल जोर ॥१०॥
गोर पयोधर रातुल गात।
नखर आँचर झापसि हात ॥१२॥
अमिअ सागर तुहु से राहि।
मुकुद मातँग निहर ताहि ॥१४॥
कइ कवि सेखर कि कर लाज।
कइ न कहिनि सखिन समाज ॥१६॥

३—आनहि = अन्य ही। सुरग = लाल। बिरग = मलिन। ७—बेकत = व्यक्त, प्रकट। ८—अतए = अतएव, यहाँ। ककर = किसकी। ९—सघन = पुष्ट। जघन = जाँघ। ११—१२—रातुल = लाल। गोर कुचों का रंग लाल हो गया है। नखर = नखों की रेखा। १३—अमिअ = अमृत। राहि = राधा। ११—मुकुन्द-मातँग = कृष्ण रूपी मत्त हाथी।

[९३]

आजु देखिए सखि वड़ अनमनि सनि
वदन मलिन सन तोरा।
मन्द वचन तोहि कोन कहल अछि
से न कहिए किछु मोरा ॥२॥
आजुक रयनि सखि कठिन वितल अछि
कान्हु रभस कर मंदा।
गुन-अवगुन पहु एकओ न वुझलनि
राहु गरासल चंदा ॥४॥
अधर सुखाएल केस अरुझाएल
घामे तिलक वहि गेला।
वारि बिलासिनि केलि न जानथि
भाल अरुन उड़ि गेला ॥६॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
ताहि करव किए वाधे।
जे किछु पहु देल आँच वाँधि लेल
सखि सभ कर उपहासे ॥८॥

१—अनमनि = अनमनी, उदासीन। सनि = समान। वदन = मुख। २—मंद = वुरा। अछि = है। ३—रयनि = रात। रभस = कामक्रीड़ा। मंदा = वुरी तरह से। ३—पहु = प्रीतम। ५—अधर = ओठ। घामे = पसीने से। तिलक = टीका। ६—वारि = वालिका। भाल अरुन उड़ि गेल = मस्तक का सिंदुर-विन्दु नष्ट हो गया। ७—किए = कैसे। वाधे = वाधा देना, रोकना। ८—उपहासे = निंदा।

[९४]

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध।
की कहब हमहु तकर परबोध ॥ २ ॥

अलप वयस हम कानु से तरुना।
अतिहु लाज डर अतिहू करुना ॥ ४ ॥

लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ॥६॥

हठ भेल रस मोर हरल गेआन।
निवि बँध तोड़ल कखन के जान ॥८॥

देल आलिंगन भुज-जुग चापि।
तखन हृदय मझु उठल काँपि ॥१०॥

नयन वारि दरसाओलि रोइ।
तबहु कान्हु उपसम नहिं होइ ॥१२॥

अधर सुरस मझु कएलन्हि मन्द।
राहु गरसि निसि तेजल चन्द ॥१४॥

कुच-जुग देलन्हि नख-परहार।
केहरि जनि गज-कुम्भ विदार ॥१६॥

भनइ विद्यापति रसवति नारि।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥१८॥

२—तकर = उनका। ६—जामिनि = रात। जत = जितना। ८—कखन = कब। ९—भुज-जुग = दोनो हाथ। चापि = दबाकर। १०—तखन = उस समय। १२—उपसम = शान्त, ठढा। १३—अधर = ओष्ठ। १४—तेजल = छोड़ दिया। १५—नख-परहार = नखो का प्रहार।

(६५)

कि कहब हे सखि आजुक विचार।

से सुपुरुष मोहे कएल सिंगार ॥२॥

हँसि हँसि पहु आलिंगन देल।

मनमथ अंकुर कुसुमित भेल ॥४॥

आँचर परसि पयोधर हेरु।

जनम पंगु जनि भेटल सुमेरु ॥६॥

जब निवि-बंध खसाओल कान।

तोहर सपथ हम किछु जदि जान ॥८॥

रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि।

तोहर पुने जीअलि हम नारि ॥१०॥

कह कवि-रंजन सहज मधु राई।

न कह सुधामुखि गेल चतुराई ॥१२॥

१६—केहरि = सिंह। गज कुम्भ = हाथी का मस्तक। विदार = फाड़ना। १८—चेतन = चतुरा। लुबुध = लोभायमान।

२—कएल = किया ३—पहु = प्रीतम। ४—मनमथ = कामदेव। कुसुमित = फूला हुआ। कामदेव रूपी अंकुर फूल उठा—काम का पूर्ण विकास हुआ। ५—आँचर = अंचल। पयोधर = कुच। हेरु = देखना। ६—पंगु = पगहीन। जनि = मानों। ७—खसाओल = (खोलकर) गिरा दिया। कान = कृष्ण। ६—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़े कठोर-हृदय हैं। १०—पुने = पुण्य से। जीअलि = जीती बची। ११—सहज मधु राई = राई (राधा) स्वभावतः ही मधु (सदृश) है। १२—गेल चतुराई = चतुरता गई।

[६६]

दृढ़ परिरम्भन पीड़लि मदने।
उबरि अएलहुँ सखि पुरब पुने ॥२॥
टुटि छिड़ियाएल मोतिम हार।
सिन्दुर लोटाएल सुरंग पँवार ॥४॥
सुन्दर कुच जुग नख-खत भरी।
जनि गज कुंभ विदारल हरी ॥६॥
अधर दसन देखि जिउ मोरा काँपे।
चाँद-मडल जनि राहुक झाँपे ॥८॥
समुद ऐसन निसि न पारिए ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर ॥१०॥
मोयँ न जाएब सखि तन्हि पिया-ठाम।
बरु जिब मारि नड़ावथि काम ॥१२॥
भनइ विद्यापति तेज भय लाज।
आग जारिये पुनु आगिक काज ॥१४॥

१—परिरम्भन = गाढ़ आलिंगन। पीड़लि = पीड़ित हुई। मदने = काम द्वारा। १—उबरि अएलहुँ = मैं बच आई। पुने = पुण्य से। ३—छिडिआएल = बिखर पड़ा। ४-सुरग = लाल। पँवार = प्रवाल, मूँगा। ५—कुच = स्तन। युग = दो। नख खत = नखो द्वारा किये गये घाव। ६—गजकुम्भ = हाथी का मस्तक। बिदारल = विदीर्ण किया, चीर-फाड़ डाला। हरी = सिंह। ७—ओठ पर दाँतों का आक्रमण करता देख मेरे प्राण काँप उठे। राहु क झाँप = राहु का आक्रमण। ९—समुद = समुद्र, सागर। ऐसन = समान। ऊर = ओर, सीमा।

[६७]

कि कहब हे सखि रातुक बात।
मानिक पड़ल कुबानिक हात ॥ २ ॥

काँच कंचन न जानए मूल।
गुंजा रतन करए समतूल ॥ ४ ॥

जे किछु कभु नहि कला रस जान।
नीर खीर दुहू करए समान ॥ ६ ॥

तन्हि सौं कहाँ पिरीत रसाल।
वानर-कंठ कि मोतिम माल ॥ ८ ॥

भनइ विद्यापति इह रस जान।
वानर-मुँह की सोभए पान ॥ १० ॥

---

१० — उगत = उगेगा । सूर = सूर्य । ११—मोंय = मैं । तन्हि = उस । १२—वरु = भले ही । नड़वथि = छोड़ दे । १४ = आग जलाती है, किन्तु पुनः आग ही की जरूरत होती है।

१—कि कहब = क्या कहूँ । रातुक = रात की । २—मानिक = माणिक्य, मणि । पड़ल = पड़ गया । कुबानिक = अपटु व्यापारी । हात = हाथ । ३—कंचन = सोना । मूल = मूल्य, कीमत । ४—गुंजा = एक प्रकार का लाल फल जो जंगल में विशेष होता है, वनवासी इसकी माला बनाते हैं, घूँघची । रतन = रत्न, मणि । समतूल = समान । ६—नीर = पानी । खीर = क्षीर, दूध । ७—तन्हि सौं = उनसे । रसाल = रसमय । ८—वानर = बंदर । कि = क्या । ९—इह = यह । १०—की = क्या । सोभए = शोभता है।

[९८]

पहिलुक परिचय पेमक संचय
रजनी आध समाजे।
सकल कला रस सँभरि न भेले
वैरिन भेलि मोरि लाजे ॥ २ ॥

साए-साए अनुसए रहलि बहुते।
तन्हिहि सुबन्धु के कहिए पठाइअ
जौं भमरा होअ दूते ॥ ४ ॥

खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच भगे।
एकलि नारि हम कत अनुरंजब
एकहि बेरि सब रंगे ॥ ६ ॥

१—पहिलुक = प्रथम बार का। परिचय = जान पहचान। पेमक = प्रेम का। रजनी = रात। पहली बार का परिचय था—प्रथम-प्रथम भेंट हुई थी, अत प्रेम के सचय में ही, प्रेमोत्पत्ति में ही, आधी रात बीत गई। २—सँभरि न भेले = सँभलकर न हुआ—अच्छी तरह नहीं हुआ। भेलि = हुई। ३—साए = सखि। अनुसए = अनुताप, पछतावा। रहलि = रह गया। ४—तन्हिहि = उनके। कहिए पठाइअ = बोल पठाना, बुला भेजना। जौं = जिस प्रकार। भमर = भ्रमर = भौंरा। ५—खनहि = क्षण। चीर = साड़ी। चिकुर = केश। गह = पकड़ना। कुच भगे = कुच को विदीर्ण करना। ६—एकलि = अकेली। कत = कितना। अनुरजब = अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी। बेरि = बार।

तखन विनय जत से सब कहब कत
कहए चाहल कर जोली।
नव रस-रंग भंग भए गेल सखि
ओरि धरि भेल न बोली ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनु बरजौवति
पहु अभिमत अभिमाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ विरमाने ॥ १० ॥

७—तखन = उस समय। जत = जितना। से = वह। कहब = कहूँगी। कत = कितना। कहए चाहल = कहना चाहा। कर-जोली = हाथ जोड़-कर। ८—नव = नवीन, नया। भंग भए गेल = भंग हो गया। ओर = अंत। ओर धरि भेल न बोली = अन्त तक कह भी न सके—साफ-साफ बात भी नहीं कह सके। ७-८—इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनों हाथ जोड़कर उस समय उसकी प्रार्थना करने लगे। यों, ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिये जोड़े जाने के कारण रति-रंग में भंग हो गया। फिर तो कृष्ण के मुख से बोली तक न निकली। इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे। ९—पहु = प्रभु, प्रीतम। अभिमत = युक्त-युक्त। १०—बिरमाने = विरमण, प्रीतम, पति।

—::o::—

कौतुक

[६६]

उठ उठ माधव कि सुतसि मंद।
गहन लाग देखु पुनिमक चंद ॥२॥

हार-रोमावलि यमुना-गंग।
त्रिवलि त्रिवेनी विप्र-अनंग ॥४॥

सिंदुर-तिलक तरनि सम भास।
धूसर मुख-ससि नहि परगास ॥६॥

एहन समय पूजह पँचवान।
होअ उगरास देह रतिदान ॥८॥

पिक मधुकर पुर कहइत बोल।
अलपओ अवसर दान अतोल ॥१०॥

विद्यापति कवि एहो रस भान।
राए सिवसिंघ सब रसक निधान ॥१२॥

१—मंद = असमय। २—गहन = ग्रहण। ३, ४—रोमावलि = कमर के निकट केशों की पंक्ति। त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। अनंग = कामदेव। हार और रोमावली क्रमशः गंगा और यमुना हैं, त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है। ५—सिंदुर-तिलक = सिंदूर का टीका। तरनि = सूर्य। भास = प्रकाशित। ६—धूसर = धूमिल, प्रभाहीन। परगास = प्रकाश। ७—एहन = ऐसा। पँचवान = कामदेव। ८—होअ उगरास—उगरस होगा, ग्रहण छूटेगा। देह रतिदान = रति का दान दो। ९—पिक = कोयल। मधुकर = भौंरा। पुर कहइत बोल = गाँव में कहता फिरता है। १९—अलपओ = थोड़ा ही। अतोल = अनंत।

[१००]

त्रिवलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि
मनमथ पत्र पठाऊ।
जोवन दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति दूत बढ़ाऊ ॥२॥
माधव, अब, देखु साजिए बाला।
तसु सैसव तोहि जे सतापल
से सब आओत पाला ॥४॥
कुंडल चक्क तिलक अंकुस कए
चंदन कवच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अछि बामा ॥६॥
सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
बिद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ बिरमाने ॥८॥

१—त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन रेखाएँ। तरंगिनी = नदी। त्रिवली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २— दलपति = सेनापति। समर लागि = युद्ध के लिये। ऋतुपति = बसंत। ४—तुम = उसके। तोहें = तुमने। सतापल = दुःख दिया। ५—कुण्डल चक्क = कुंडल (कर्णफूल) चक्र है। तिलक अंकुस = टीका ही अंकुश है। चंदन का कवच = चंदन का लेप ही शरीर त्राण है। ६—कमान = धनुष। ७—खेत = युद्धभूमि।

[१०१]

अम्बर वदन झपावह गोरी ।
राजा सुनइ छिअ चाँदक चोरी ॥२॥
घर घर पहरि गेल अछि जोहि ।
अबहि दूखन लागत तोहि ॥४॥
कतए नुकाएत चाँदक चोर ।
जतहि नुकाएत ततहि उजोर ॥६॥
हास-सुधारस न कर उजोर ।
वनिक-धनिक धन वोलव मोर ॥८॥
अधरक सीम दसन कर जोति ।
सिंदूरक सीम वैसाओलि मोति ॥१०॥
भनइ विद्यापति होह निरसंक ।
चाँदहु काँ थिक भेद कलंक ॥१२॥

१—अम्बर = वस्त्र । वदन = मुख । झपावह = ढाप लो । २—चाँदक = चन्द्रमा की । ६—पहरि = पहरी, पहरूआ । गेल छल जोहि = ढूँढ़ गया है । ४—दूषन = दोष, कलंक । ५—कतए कहाँ । नुकाएत = छिपेगा । ६—उजोर = प्रकाश । ७, १०—हास = हँसी । सुधारस = अमृत का रस । अधरक सीम = ओष्ठ के निकट । दसन = दाँत । वैस ओलि = वैठाया । हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओष्ठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर-विन्दु मोती से चमक रहे हैं । ११—होइ = होओ । १२—थिक = है । चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है, क्योंकि उसमें कलंक है ।

[१०२]

लोलुअ बदन सिरी अछि घनि तोरि।
जनु लागिह तोहि चाँदक चोरि ॥२॥
दरसि हलह, जनु हेरह काहु ।
चाँद भरम मुख गरसत राहु ॥४॥
धवल नयन तोर जनि तरुआर ।
तीख तरल तेहि कटाख क धार ॥६॥
निरवि निहारि फास गुन जोलि।
बाँधि हलव तोहि खजन बोलि ॥८॥
सागर सार चराओल चद ।
ता लागि राहु करए बड दद ॥१०॥
भनइ विद्यापति होउ निरसक ।
चाँदहु की रिछ लागु कलक ॥१२॥

१—लोलुअ = आन्दोलित, चचल। बदन सिरी = बदनश्री, मुख की शोभा। अछि = अस्ति, है। घनि = स्त्री। २—जनु = नहीं। ३, ४—दरसि हलह = देखकर (झटपट) हट जाओ। 'शृगार तिलक' में यों लिखा है—"झटिति प्रविश गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण समय-वेला वर्त्तते शीतरश्मे। तव मुखमकलक वीक्ष्य नून स राहु, ग्रसति तव मुखेन्दु पूर्णचन्द्र विहाय।" ५—धवल = उजला। जनि = ऐसा। तरुआर = तलवार। ६—तीख = तीक्ष्ण। कटाखक = कटाक्ष की। ७, ८—निरवि = नीचे की ओर। फास गुन = गुण रूपी फाँस में। जोलि = जोड़कर, बाँधकर। हलव = जायगा। बोलि = समझकर। ९—सागर सार = अमृत। १०—दन्द = द्वन्द्व। जोर = जुल्म।

[१०३]

साँझक बेरि उगल नव ससधर।
भरम बिदित सविताहु॥
कुंडल चक्र तरास नुकाएल।
दूर भेल हेरथि राहु॥२॥
जनु बइससि रे वदन हाथ लाई।
तुअ मुख चंगिम अधिक चपल भेल
कति खन धरब नुकाई॥४॥
रक्तोपल जनि कमल बइसाओल
नील नलिनि दल तहु।
तिलक कुसुम तहु माझु देखि कहु
भमर आवथि लहु लहु॥६॥
पानि-पलव-गत अधर बिम्ब-रत
दसन दाड़िम बिज तोरे।
कीर दूर भेल पास न आवए
भौंह धनुहि के भोरे।८॥

१—संध्या के समय नवीन चन्द्र का उदय हुआ, जिससे सूर्य का भी भ्रम हुआ—मतलब यह है, सूर्यास्त हो रहा था, उसी समय नायिका घर से निकली। सूर्य अभी पूर्णतः अस्त नहीं हुए थे, उन्हें आश्चर्य हुआ कि मेरे अस्त होने के पहले ही यह कौन सा नवीन चन्द्रमा उदित हुआ। २—कुंडल-चक्र=कुंडल (कर्णफूल) रूपी चक्र। नुकाएल=छिपा हुआ। ३—वदन हाथ लाई=मुख हाथ पर रखकर। ४—चंगिम=सुन्दर। कति खन=कबतक।

(१०४)

यइ कौसलि तुअ राधे!
किनल कन्हाई लोचन आधे।२॥

ऋतुपति हटवए नहि परमादी।
मनमथ मधथ उचित मूलवादी।।४॥

द्विज पिक लेखक मसि मकरंदा।
काँप भमर पद साखी चंदा॥६॥

बहि रति रंग लिखापन माने।
श्री सिवसिंह सरस कवि भाने।।८॥

५—रत्तोपल = लाल कमल (हाथ)। कमल = (मुख)। नील नलिनी = नील कमल (आँखें)। तुहु = वहाँ भी। ६—लहु-लहु = धीरे-धीरे। ७—पानि पल्व गत = हाथ पल्लव के सामान हैं। अधर = ओठ। बिम्ब रत = बिम्ब फल के समान। दाड़िम बिज = अनार के दाने। ८—कीर = सुग्गा। भौरे = भ्रम में।

१—कौसलि = सुचतुरा। किनल—क्रय किया, खरीदा। २—लोचन आधे = आधी आँख से, एक कटाक्ष से। ऋतुपति = वसन्त। हटवए = (मैथिली प्रयोग)—तौलनेवाला। नहि परमादी = प्रमादी नहीं, बुद्धिमान्। ४—मनमथ = कामदेव। मधथ = मध्यस्थ, दलाल। मूल = मूल्य। वादी = कहनेवाला। ५—द्विज पिक लेखक = कोयल-रूपी ब्राह्मण लेखक हैं। मसि = रोशनाई। मकरन्दा = पराग। ६—काँप = कँड़े की कलम। भमर पद = भौंरे का पैर। साखी = साक्षी, गवाह। बहि = बही, हिसाब की पुस्तक। रति रंग = काम विलास। लिखापन माने = मान लिखा गया। इस पद का

[१०५]

कंचन गढ़ल हृदय हथिसार।
ते थिर थम्भ पयोधर भार ॥२॥
लाज-सिकर धर दृढ़ कए गोए।
आनक वचन हलह जनु कोए ॥४॥
दूर कर अगे सखि चिन्ता आन।
जओवन-हाथि करिय अवधान ॥६॥
मनसिज-मदजल जओँ उमताए।
धरहसि, पियतम-आँकुस लाए ॥८॥
जावे न सुमत तावे अगोर।
मुसइत मनिहसि मानस चोर ॥१०॥
भन विद्यापति सुनु मतिमान।
हाथि महते नव के नहि जान ॥१२॥

संस्कृतानुवाद स्वयं विद्यापति ने यों किया है—"रत्नाकरसुता भार्या यस्य कृष्णस्य राधिके। लोचनार्द्धेन स क्रीतस्त्वया ते कौशलम्महत् ॥ हट्टाधिपो वसन्तस्योऽपवादी विचक्षणः। योग्यमूल्यार्थवादी च मध्यस्थो मन्मथोऽभवत्। भ्रामरस्य पदं कर्णो लेखकः कोकिलो द्विजः। अभूत कृष्ण-क्रये राधे शशीपात्रं मसी मधु ॥ वहिर्नति रतिक्रीड़ा मानो वेदन लेखकः। कृष्णस्य शिवसिंहेन वाणी विद्यापतेः कवेः ॥"

१—कंचन = सोना। हथिसार = हस्तीशाला। २—थिर = स्थिर, थम्भ = स्तम्भ, खम्भा। पयोधर = कुच। ३—सिकर = शृंखला, जंजीर। गोए = छिपाकर। ४—आनक = दूसरे के। हलह जनु कोए = कभी मत खोल दो। ६—जवानी को हाथी समझ लो।

[१०६]

कउड़ि पटाओले पाव नहि घोर।
धीव उधार माँग मतिभोर ॥२॥
बास न पारए माँग उपाति।
लोभक रासि पुरुष थीक जाति ॥४॥
कि कहब आज की कौतुक भेल।
अपदहि बान्हक गोरु गेल ॥६॥
आएल बइसल पाव पोआर।
सेजक कहिनी पूछए बिचार ॥८॥
ओछाओन खँढतरि पलिया चाह।
आओर कहब कत अहिरिन नाह ॥१०॥
भनइ विद्यापति एहु गुनमंत।
सिर सिवसिंघ लखिमा देइ कंत ॥१२॥

७—मनसिज = कामदेव। मदजल = हाथी के मस्तक से चूनेवाला पानी। उमताए = पागल हो। पियतम आँकुर = प्रीतम रूपी अंकुर। ९—सुमत = मत में आ जाय। १०—मूमइत = (मुच् धातु) खोलने से। मनि-हसि = मना करना। १२—महते = महाव्रत से।

१—कउड़ी = कौड़ी (यहाँ मूल्य)। पटाओल = भेजने पर भी। घोर = मट्ठा। २—धीव = घी। मतिभोर = मूर्ख। ३—बास = रहने की जगह। उपाति = खाद्य सामग्री। लोभक रासि = लोभ का खजाना। थिक = है। ६—अपदहि = अस्थान पर, बुरी जगह। ७—पोआर = पयाल, पुआल। ८—ओछाओन—ओछावन = बिछावन। खँढतरि = (मैथिली प्रयोग) जीर्ण शीर्ण चटाई। पलिया = पलंग।

अभिसार

[१०७]

घनि घनि चलु अभिसार।
सुभ दिन आजु राजपन मनमथ
पाओब कि रीति बिथार ॥२॥

गुरुजन नयन अंध करि आओल
बांधव तिमिर बिसेख।
तुअ उर फुरत बान कुच लोचन
महुमंगल करि लेख ॥४॥

कुलवति धरम करम भय अब सब
गुरु-मंदिर चलु राखि।
प्रियतम संग रंग करु चिर दिन
फलत मनोरथ साखि ॥६॥

नीरद बिजुरि बिजुरि सयँ नीरद
किंकिन गरजन जान।
हरखए बरखए फुल सब साखी
सिखि-कुल दुहु गुन गान ।८॥

१—अभिसार = गुप्त मिलन। २—राजपन मनमथ = काम का राज्य है। बिथार = विस्तार। ३—गुरुजन = बड़े लोग। बांधव = बन्धु, मित्र। तिमिर = अन्धकार। ४—फुरत = फड़कना। उर = हृदय। बाम = बायें। लेख = समझो। ६—साखि = शाखी, वृक्ष। ७—नीरद = मेघ। सयँ = संग में। मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ)। ८—सिखिकुल = मोर।

[१०८]

कइ यह सुन्दरि न कर बेआज।
देखिअ आज अपूरब साज ॥२॥
मृगमद पंक करसि अंगराग।
कोन नागर परिनत होअ भाग ॥४॥
पुनु पुन उठसि पछिम दिसि हेरि।
कखन आएत दिन कत अछि बेरि ॥६॥
नूपुर उपर कसि कसि थीर।
दृढ़ कए पहिरसि तम सम चीर ॥८॥
उठसि विहँसि हँस तेजिए सार।
तोर मन भाव सघन अँधियार ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनु बर नारि।
धैरज धर मन मिलत मुरारि ॥१२॥

१—बेआज = बहाना। ३—मृगमद पक = कस्तूरी का लेप (जो काला है)। ४—को = कौन। किस नायक का भाग्य परिणत हुआ = किसका, भाग्योदय हुआ है। ५—हेरि = देखना। ६—कखन = कब। कत = कितना अछि—अस्ति = है। बेरि = समय। ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो। ८—तम-सम = अन्धकार के समान कला। ९—तेजिए सार = सार त्यागकर, अकारण ही। १०—तोर = तुम्हारे। भाव = अच्छा लगता है। अँधियार = अन्धकार।

[१०९]

माधव, धनि आएलि कत भाँति।
प्रेम-हेम परखाओल कसौटी
भादव कुहु-तिथि राति॥२॥
गगन गरज घन ताहि न गन मन
कुलिस न कर मुख वंका।
तिमिर-अंजन जलधार धोए जनि
ते उपजावति संका॥४॥
भाग भुजग सिर कर अभिनय कर-
झाँपल फनिमनि दीप।
जनि सजल घन से देई चुम्बन
तेँ तुअ मिलन समीप॥६॥
नारि-रतन धनि नागर व्रजमनि
रसी गुन पहिरल हार।
गोविंद चरन मन कह कविरंजन
सफल भेल अभिसार॥८॥

१—हेम = सोना। कसौटी भादव कुहु-तिथि राति = भादो की अमावस्या की रात-रूपी कसौटी पर। ३—गगन = आकाश। कुलिस = वज्र, ठनका। मुख वंका = मुख टेढ़ा करना, विमुख करना। ४—तिमिर अंजन = अन्धकार-रूपी अंजन का। जनि = नहीं। भागते हुए सर्प-के सिर पर मानो नृत्य करती है और सर्प के मणि को हाथ से ढाँप लेती है। ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में यों है—

श्लिष्यति चुम्बित-जलधर कम्पम्। हरिरुपगत इति तिमिर मनल्पम्॥

[११०]

चन्दा जनि उग आजुक राति।
पियाके लिखिअ पठाओव पाँति ॥२॥
साओन सयँ हम करब पिरीत।
जत अभिमत अभिसारक रीत ॥४॥
अथवा राहु बुझाएब हँसी।
पिबि जनि उगिलह सीतल ससी ॥६॥
कोटि रतन जलधर तोहँ लेह।
आजुक रयनि घन तम कए देह ॥८॥
भनइ विद्यापति सुभ अभिसार।
भल जन करथि परक उपकार ॥१०॥

७—घनि = बाला (राधे)। नागर = नायक (कृष्ण) ८—कवि रत्न = विद्यापति का उपनाम।

१—जनि = नहीं। उग = उदय हो। २—पठाओव = पठाऊँगी, भेजूँगी। पाँति = पत्र। ३—साओन सय = श्रावन मास से। ४—अभिमत = मनोनीत। जो अभिसार करने की निश्चित रीति है—निश्चित काल है। ६—पिबि = पीकर। उगिलह = उगल दो। ससी = चन्द्रमा। ७—जलधर = मघ। लेह = लो। ८—रयनि = रजनी, रात। घन = घना, निविड़। तम = अन्धकार। देह = दो। १०—करथि = कहते हैं। परक = दूसरे का।

—:o—

Poetry is an emotion realized in tranquility
—Wordsworth

[१११]

आजु मोयँ जाएब हरि-समागम
कत मनोरथ भेल।
घर गुरुजन निंद निरूपइत
चन्द उदय देल ॥२॥
चन्दा भलि नहि तुअ रीति।
एहि मति तोहें कलंक लागल
किछु न गुनह भीति ॥४॥
जगत नागरि मुख जितल जब
गगन गेला हारि।
तहिओ राहु गरास पड़ला
देब तोह कि गारि ॥६॥
एक मास त्रिहि तोहि सिरिजए
दए सकलओ वल।
दोसर दिन पुनु पुर न रहसी
एही पापक फल ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन तोयँ जुवती
न कर चाँदक साति।
दिना सोरह चाँदक आइत
ताहि पर भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरूपइत = नींद का निरूपण करते, सोते-न सोते। ४—भीति=डर। ५—संसार की नागरियों ने जब तुम्हारे मुख को जीत लिया—अपनी मुखश्री से तुम्हें पराजित किया—तब तुम हारकर आकाश

[१२२]

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर बलगई ॥२॥
सजनी, आजु दुरदिन भेल।

कंत हमर नितान्त अगुसरि संकेत-कुंजहि गेल ॥४॥
तरल जलधर बरिख झरझर, गरज घन घनघोर।
साम नागर एकले कइसन पंथ हेरब मोर ॥६॥
सुमिरि मझु तनु अवस भेल जनि अथिर थर थर काँप।
इ मझु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाँप ॥८॥
तुरित चल अब किए विचारति, जीवन मझु अगुसार।
कवीसेखर वचन अभिसर, किए से विपिन-विथार ॥१०॥

में भाग गये। ७—पुर = पूर्ण। ९—खाति = ख्याति, निन्दा। १०—बाउनि = बादल, सीमा। ताहि पर = उसके बाद।

१—गगन = आकाश। घन = घन, निविड़। दामिनि = बिजली। २—कुलिस-पातन = वज्र का गिरना, टनके की टनक। खरतर बलगई = अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि = अग्रसर होकर आगे जाकर। संकेत = गुप्त मिलन-स्थान। ५—तरल = अस्थिर, चलायमान। जलधर = मेघ। बरिख = बरस रहा है। ६—साम = श्याम, श्रीकृष्ण। एकले = अकेले। ७—मझु = मेरा। अथिर = चंचल। ८—इ = यह। गुरुजन = बड़े लोग, श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहि = अंधकार। ९—तुरित = तुरत। किए = क्या। विचारति = विचारती हो। मझु = मध्य में। अगुसार = अग्रसर होओ, बढ़ो। १०—अभिसार = अभिसार करो। विथार = विस्तार।

[११३]

रयनि काजर वम भीम भुजंगम
कुलिस परए दुरबार।
गरज तरज मन रोस बरिस घन
संसअ पड़ अभिसार ॥२॥

सजनी, वचन छड़इत मोहि लाज।
होएत से होओ वरु सब हम अंगिकरु
साहस मन देल आज ॥४॥

अपन अहित लेख कहइत परतेख
हृदय न पारिअ ओर।
चाँद हरिन वह राहु कबल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१—रयनि = रात। वम = वमन करती है। रयनि काजर वम = रात अन्धकारपूर्ण है। भीम = विशाल, भयानक। भुजंगम = सर्प। कुलिस = वज्र, ठनका। दुरबार = जिससे बचना मुश्किल है। २—रोस = रोष, क्रोध। ४—होएत से होओ वरु = जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अंगिकरु = अंगीकार करूँगी। ५—अहित = बुराई। लेख = समझना। परतेख = प्रत्यक्ष। ओर = सीमा, अन्त। ६—हरिन = चन्द्रमा में जो हरिण के आकार का काला धब्बा है। वह = धारण करना। कबल = कौर, ग्रास। सह = साथ, सहता है। पराभव = हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है, प्रेम में पराजय है ही नहीं—किसी विघ्न-बाधा से प्रेम का नाश नहीं हो सकता।

चरन बेढ़लि फनि हित मानलि घनि
नेपुर न करए रोर ।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेहक कत दुर ओर ॥८॥
ठामहि रहिअ घुमि परस चिह्निअ भूमि
दिग मग उपजु सदेह ।
हरि हरि सिव सिव तावे जाइअ जिउ
जावे न उपजु सिनेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनहु सुचेतनि
गमन न करह बिलम्ब ।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
सकल कला अवलम्ब ॥ २॥

७—बेढ़लि=लपेटना, घेरना । फनि=सर्प । रोर=शब्द, झंकार पैर में सर्प लिपट आने पर बाला ने उसे अपना हित समझा, क्योंकि (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे । ८—सरुप=सत्य । ओर=अन्त । सुन्दरी, मैं तुमसे पूछती हूँ, सच-सच बताओ, प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है । ९—दिग=दिशा । घूम-घूम कर एक ही स्थान पर चली आती हूँ । स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ती) । दिशा और राह के विषय में सन्देह है । मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है जिससे मैं राह भूल गई हूँ । १०—तावे=तबतक । जावे=जबतक । ११—सुचेतनि=बुद्धिमती, सुचतुरा । गमन=जाने में ।

[११६]

अवहु राजपथ पुरुजन जागि।
चाँद-किरन नभमंडल लागि ॥२॥
सहए न पारए नव नव नेह।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि संदेह ॥ ४ ॥
कामिनि कएल कतहु परकार।
पुरुषक वेस कयल अभिसार ॥ ६ ॥
धम्मिल लोल झोट कए बंध।
पहिरल वसन आन करि छन्द ॥८॥
अम्बर कुच नहि सम्बरु भेल।
वाजन-जन्त्र हृदय करि लेल ॥१०॥
अइसए मिललि धनि कुंज क माझ।
हेरि न चीन्हइ नागर राज ॥१२॥
हेरइत माधव पड़लन्हि धंद।
परसइत भाँगल हृदय क दंद ॥१४॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
दूध-समुद्र जनि राज-मरालि ॥१६॥

३—सहए न पारए = सह नहीं सकती। नव = नया। ५—परकार = प्रकार, उपाय। ७—धम्मिल = केश, वेणी। लोल = चंचल। झोंट = झोंटा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि = दूसरी तरह से। ९—अम्बर = कपड़ा। सम्बरु = सँभालना। किन्तु कपड़े के कसे जाने पर भी कुछ सँभल न सके—छिप न सके। १०—वाजन-जन्त्र = सितार। हृदय करि

[११४]

प्रथम समागम नव गहम मनोभव
छोटि मधुमास रजनि ।
जागे गुरुजन नींद गमाए थाइ नेह
संगम पइल सजनि ॥२॥
नलिनी दल निर थिर न रहए थिर
तन पर तन हो बहार ।
विधि मोर बड़ मंदा कगि जनु आए चंदा
सुनि उठि गमन निहार ॥ ४ ॥
पथहु पथिक संका पथ पथ पथ पंका
कि करति भो नव तरुनी
सखन थाइ दुनि पुनु पर लागि-लागि
आलक ठेकलि हरिनी ॥ ६ ॥
साए साप कओन वेदन तनु जाने ।
निकुंज पनहि हरि जाइति कओन परि
अनुमन हन पँचवाने ॥ ८ ॥
विद्यापति भन कि करत गुरुजन
नींद निरूपन लागी ।
नयन नीर भरि धीर समापए
रयनि गमाअए जागी ॥१०॥

१—मधुमास = चैत्र । ३—नलिनि दल निर = कमल के पत्ते पर के पानी के समान । बहार = बाहर । ४ सुनि = सोकर । ५-पथ = पग । पंका = कीचड़ । ६—आलय ठेकलि=जाल में घिरी हुई । ७—साए = सखी । ८—हन = मारना

[११६]

अबहु राजपथ पुरजन जागि।
चाँद-किरन नभमंडल लागि ॥२॥
सहए न पारए नव नव नेह।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि संदेह ॥ ४ ॥
कामिनि कएल कतहु परकार।
पुरुपक वेस कयल अभिसार ॥ ६ ॥
धम्मिल लोल झोट कए बंध।
पहिरल बसन आन करि छन्द ॥८॥
अम्बर कुच नहि सम्बरु भेल।
बाजन-जन्त्र हृदय करि लेल ॥१०॥
अइसए मिललि घनि कुंज क माझ।
हेरि न चीन्हइ नागर राज ॥१२॥
हेरइत माधव पड़लन्हि धंद।
परसइत भाँगल हृदय क दंद ॥१४॥
भनइ विद्यापति सुन बर नारि।
दूध-समुद्र जनि राज-मरालि ॥१६॥

३—सहए न पारए = सह नहीं सकती। नव = नया। ५—परकार = प्रकार, उपाय। ७—धम्मिल = केश, वेणी। लोल = चंचल। झोंट = झोंटा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि = दूसरी तरह से। ९—अम्बर = कपड़ा। सम्बरु = सँभालना। किन्तु कपड़े के कसे जाने पर भी कुछ सँभल न सके—छिप न सके। १०—बाजन-जन्त्र = सितार। हृदय करि

[११७]

चरण नूपुर उपर सारी।
मुखर मेखल कर निवारी ॥ २ ॥
अम्बर सामर देइ झपाई।
चलहु तिमिर पथ समाई ॥ ४ ॥
समुद कुसुम रभस रसी।
अवहि उगत कुगत ससी ॥ ६ ॥
आएल चाहिअ सुमुखि तोरा।
पिसुन लोचन भम चकोर ॥ ८ ॥
अलक तिलक न कर राधे।
अंग बिलेपन करह वाधे ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि तीर।
तहँ चलि आओल गोकुल वीर ॥१२॥
तयँ अनुरागिनि ओ अनुरागी।
दूषन लागत भूषन लागी ॥१४॥
भनइ विद्यापति सरस कवि।
नृपति-कुल सरोरुह रवि ॥ १६ ॥

लेल = हृदय पर रख लिया। १३—सद = सदेह। १४—दद = द्वन्द्व, दुविधा। १६—समुद्र समुद्र। राजमरालि—राजहंसिनी।

१, २—पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ा लो, और मुखर (शब्द करने वाली) करधनी को हाथ से निवारण करो। ३—अम्बर = वस्त्र। तिमिर पथ = अन्धकारपूर्ण राह। समाई = घुसकर। ५—समुद = समुद्र। कुसुम = फूल। रभस = आनन्द। रसी = रस-युक्त। ६—कुगत = जिसक

[११८] १५९

जागल घर पर नींद भेल भोर।
सेजु तेजल उठि नंद-किसोर ॥२॥
सघन गगन हेरि नखतर पाँति।
अवधि न पाओल छूटल राति ॥४॥
जलधर रुचिहर सामर काँति।
जुवति-मोहन वेस धरु कत भाँति ॥६॥
धनि अनुरागिन जानि सुजान।
घोर अँधियारे कएल पयान ॥८॥
पर नारी पिरितक ऐसन रीति।
चलल निभृत पथ न मानय भीति ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि-तीर।
तहँ चलि आएल गोकुल वीर ॥१२॥
कबिसेखर पथ मीलल जाई।
आएल नागर भेंटल राई ॥१४॥

आगमन अशुभ हो। ससी = चन्द्रमा। ८—पिसुन = दुष्ट। भम = भ्रमण कर रहे हैं। ९—अलक-तिलक = महावर और टीका। १०—अंग विलेपन = शरीर में अंगराग लगाना। करह बाधा = बाधा कर दो, मत लगाओ।

१—घर पर जो जगे थे, सभी सो गये। ३—नखतर = नक्षत्र, तारे। ४—रात कितनी बीती, इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर = मेघ। रुचि-हर = शोभा हरनेवाला। ६—जुवती मोहन = युवतियों को मोहनेवाला। १०—निभृत = सुनसान अन्धकार, पूर्ण। १४—राई = राधा।

[११९]

तपनक ताप तपत भेल महि तल
तातल वालु दहन समान।
चढ़ल मनो-रथ भामिनि चलु पथ
ताप तपत नहि जान ॥२॥
प्रेमक गति दुरवार।
नविन जौबनि धनि चरन कमल जिनि
तइओ कएल अभिसार ॥४॥
कुल-गुन-गौरव सति जस-अपजस
तृन करि न मानए राधे।
मन मधि मदन महोदधि उछलल
बूड़ल कुल मरजाद ॥ ६ ॥
कत कत विघिन जितल अनुरागिनि
साधन मनमथ तंत।
गुरुजन नयन निवारइत सुवदनि
पाठ करए मन मंत ॥८॥
केलि कलावति कुसुम-सरिस-कुल
कौसल करल पयान।
जत छल मनोरथ पूरल मनमथ
इह कविसेखर भान ॥१०॥

१—तपन क=सूर्य की। ताप=गर्मी। तपत=तप्त, जलता हुआ। तातल=गर्म हो गया। दहन=अग्नि। २—मनोरथ=इच्छा रूपी रथ। भामिनी=स्त्री। ३—दुरवार=अटल। ४—जिनि=

[१२०]

निअ मंदिर सयँ पग दुइ चारि।
घन घन वरिस मही भर वारि॥२॥
पथ पीछर वड़ गरुअ नितम्ब।
खसु कत वेरि नहीं अवलम्ब॥४॥
विजुरि-छता दरसावए मेघ।
उठए चाह जल धारक थेघ॥६॥
एक गुन तिमिर लाख गुन भेल।
उतरहु दखिन भान दुर गेल॥८॥
ए हरि जानि करिअ मोयँ रोस।
आजुक विलम्ब दइव दिअ दोस॥१०॥

समान। तइओं=तौ भी। ५—सति=सती स्त्रियों का। ६—मधि=मध्य, में। महोदधि=महा समुद्र। उछल=उछलने लगा, तरंगित होने लगा। ७—मनमथ=कामदेव। तंत्र=यन्त्र। ८—निवारइत=वचती हुई। मन्त=मन्त्र। ९—कुसुम=फूल। सरसि=सरसी, तालाव। कुल (कूल)=किनारे। कौशल=छल से। १०—छल=था।

१—निअ=अपना। सयँ=से। पग=डेग। २—घन घन=घने घादल। मही भर वारि=पृथ्वी जल से भर गई। ३—पीछर=जिसपर पैर फिसल जायँ। गरुअ=भारी। नितम्ब=चूतड़। ४—खसु कत वेरि=कितनी वार गिर पड़ी। ६—जल धारक थेघ=मूसलधार—वरसना चाहता है। ७—तिमिर=अन्धकार। ८—उत्तर और दक्षिण का ज्ञान दूर हो गया, दिशा-ज्ञान नहीं रहा।

[१२१]

माधव, करिअ सुमुखि समधाने।
तुअ अभिसार कएलि जत सुन्दरि
कामिनि करु के आने ॥२॥
वरिस पयोधर धरनि बारि भरि
रयनि महा भय भीमा।
तइओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा ॥४॥
देखि भवन-भित लिखित भुजँग-पति
तसु मन परम तरासे।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
विहुसि आएलि तुअ पासे ॥६॥
निअ पहु परिहरि आइलि कमल-मुखि
परिहरि निअ कुल गारी।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि वर नारी ॥८॥
ई रस-रसिक विनोदक विन्दक
कवि विद्यापति गावे !
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे ॥१०॥

२—के = कौन। ३—आने = दूसरा। ४—पयोधर = बादल।
[भी]मा = डरावनी। ५—भित = दीवाल। भुजँग = सर्प। ७—कर =
[...]य। फनिमनि— सर्प के मणि को। ७—पहु = प्रभु, प्रीतम। गारी—

[१२२]

राहु मेघ भए गरसल सूर।
पथ परिचय दिवसहि भेल दूर ॥२॥
नहि बरिसए अवसन नहि होए।
पुर परिजन संचर नहि कोए ॥४॥
चल चल सुन्दरि कर गए साज।
दिवस समागम सपरत आज ॥६॥
गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर ॥८॥
एहि संसार सार बथु एक।
तिला एक संगम, जाव जिब नेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति कबिकंठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस-अभिसार ॥१२॥

गाली, शिकायत। १०—कखने...करावे = कब क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ-परिचय = राह की पहचान। दिवसहि = दिन में ही। ३—अवसन = अवसन्न, समाप्त। मेघ न बरसता है, न खुल जाता है। ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज = जाकर साज करो—शृंगार करो। ६—दिवस-समागम = दिन का मिलन। सपरत = सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत = मनोवांछा। ९—सार = तत्त्व, । बथु = वस्तु। १०—एक क्षण के लिये रति-क्रीड़ा और जीवन-भर प्रेम करना। ११—कोटिहुँ = करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट = न घट सकता, न हो सकता।

[१२३]

आज पुनिम तिथि जानि मोयँ अएलिहुँ
उचित तोहर अभिसार।
देह-जोति ससि-किरन समाइति
के बिभिनावए पार ॥२॥
सुन्दरि अपनहुँ हृदय बिचारि।
आँखि पसारि जगत हम देखलि
क जग तुअ सम नारि ॥४॥
तोहें जनि तिमिर हीत कए मानह
आनन तोर तिमिरारि।
सहज विरोध दूर परिहरि धनि
चलु उठि जतए मुरारि ॥६॥
दूती वचन हीन कए मानल
चालक भेल पँचबान।
हरि-अभिसार चललि वर कामिनि
विद्यापति कवि भान ॥७॥

१—पुनिम = पूर्णिमा। अएलिहुँ = मैं आई। २—देहजोति = शरीर की कांति। ससि किरन = चन्द्रमा की किरण (में)। समाइति = घुल जायगी, मिल जायगी। के = कौन। बिभिनावए पार = विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है। ५—जनि = नहीं। तिमिर = अन्धकार। हीत = मित्र। आनन = मुख। तिमिरारि = अन्धकार का शत्रु, चन्द्र। ६—जतए = जहाँ। ७—चालक = प्रेरक। पँचबान = काम। हरि-अभिसार = कृष्ण से गुप्त मिलन करने को।

[१२५]

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीपक सिखा मलिन भए गेल ॥२॥

हठ तज माधव जएबा देह।
राखए चाहिअ गुपुत सनेह ॥४॥

दुरजन जाएत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान। ६॥

भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि वेकत करए निअ चोरि ॥८॥

अपनयँ धन हे धनिक धर गोए।
परक रतन परगट कर कोय ॥१०॥

फाव चोरि जौं चेतन चोर।
जागि जाए पुर परिजन मोर ॥१०॥

भनइ विद्यापति सखि कह सार।
से जीवन जे पर उपकार ॥१४॥

१—अरुन-किरन = सूर्य की किरण। अम्बर = आकाश। २—सिखा = लौ, टेम। ३—तज = छोड़ो। जएवा देह = जाने दो। ४—गुप्त = गुप्त, छिपा हुआ। ६—सगर = सब। मलान = म्लान, मिलन। ७—भमर = भौंरा। रमि = रमण कर, विहार कर। अगोरि = अगोरकर रहना। ८—वेकत = व्यक्त, प्रगट। ९-१०-धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है ! ११—फाव = फवना शोभना। चेतन = चतुर। १३—सार = सत्य।

[१०५]

दुहु रुप लावनि मनमथ मोहनि
निरखि नयन भूलि जाय।
रजनि-जनित रति विशेष अलापन
अलप रहल दुहु गाय ॥२॥
चाँचर कुन्तल ताहे कुसुम-दल
लोलत आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय बादए सुख
बोलत भूलत पाँति ॥४॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
बिरह-बिषानल दुहु तनु जारल
लोचन लागल धन्द ॥६॥
भीतक चीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल बिदायक बेला।
प्रेम-पयोनिधि उछलि उछलि पड़
चेतन अचेतन ॥८॥
दुहु जन चीत--
छन छन ।
रजनि पोहाभोल
से सउ अधिक
सेखर बुझि तब
दुहु सँग
निज निज मन्दिर
गुरुजन भेद

छलना

[१२६]

मन्दिर अछलौं सहचरि मेलि ।
परसंगे रजनि अधिक भइ गेलि ॥ २ ॥

जब सखि चललहुँ अप्पन गेह ।
तब मझु नींद भरल सब देह ॥ ४ ॥

सूति रहल हम करि एक चीत ।
दैव-विपाक भेल विपरीत ॥ ६ ॥

न बोल सजनि सुन सपन-सम्वाद ।
हँसइ केहु जनि कर परिवाद ॥ ८ ॥

विषाद पड़ल मझु हृदयक माँझ ।
तुरित घोंचावलौं नीविक काज ॥ १० ॥

एक पुरुष पुनु आओल आगे ।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे ॥ १२ ॥

से भय चिकुर चीर आनहि भेल ।
कपाल-काजर मुख सिन्दुर भेल ॥ १४ ॥

अतर-कहब केह अपजस गाव ।
विद्यापति कह के पतिआव ॥ १६ ॥

१—अछलौं = मैं थी । सहचरि = सखी । २— परसंगे = प्रसंग में, बातचीत में । रजनि = रात । ५—सूति रहल = सो रही । चीत एक करि = चित्त एकाग्र करके । ६—विपाक = फल । ७—सपन = स्वप्न । ८—परिवाद = प्रवाद, शिकायत । १०—घोंचायलौं = शिथिल कर दिया । नीविक काज = नीवी का बंधन । १२—अरुन = लाल । अधरक दागे = ओष्ठ पर चिह्न बना दिया ।

[१२७]

कुसुम तोरय गेलहु जाहाँ ।
भमर अधर खंडल ताहाँ ॥ २ ॥

तेँ चलि एलहु जमुना तीर ।
पवन हरल हृदय चीर ॥ ४ ॥

ए सखि सरुप कहल तोहि ।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि ॥ ६ ॥

हार मनोहर बेकत भेल ।
उजर उरग संसअ लेल ॥ ८ ॥

तेँ धसि मजूर जोड़ल झाँप ।
नखर गाड़ल हृदय काँप ॥ १० ॥

भन विद्यापति उचित भाग ।
बचन पाटव कपट लाग ॥ १२ ॥

१३—से भय = उस डर से । चिकुर = केश । चीर = साड़ी । आनहि गेल = दूसरे ही ढग का हो गया । १४—कपाल = मस्तक । १५—अतर = हृदय की बात । १६—पतिआब = विश्वास करेगा ।

१—कुसुम = फूल । गेलहुँ = मैं गई । २—भमर = भौंरा । अधर = ओष्ठ । ३—तेँ = तहाँ से । ४—हृदय चीर = वक्ष स्थल की साड़ी, अचल । ५—सरुप = सत्य । अनु = अन्य । ७—बेकत = व्यक्त, प्रकट । उजर = उज्ज्वल । उरग = सर्प । ६—झाँप जोड़ल = झपट पड़ा । १०—नखर गाड़ल = नख गडा गया । १२—पाटव = पटुता, चतुरता ।

—:•:—

सखि हे तोहे हमर वहु सेवा।
ऐसनि वानि कवहु जनि वोलवि
जाति कुल किए मोर लेवा॥ २॥

गोकुल नगर कान्हु रति लम्पट
जौवन सहज हमारा।
तुहु सखि रमसि मोहे जनि वोलवि
लोक करव पतिआरा॥ ४॥

केसर कुसुम हेरि हम कौतुक
भुज जुग मेटल ताहि।
दाड़िम भरम पयोधर ऊपर
पड़लहु कीर लोभाहि॥ ६॥
चकित उभय भुज इति उति पेखल
तैं वेप भए गेल आन।
इथे परिवाद कहसि मोहे वैरिनि
इह कवि सेखर भान॥ ८॥

१—हे सखि, मैं तुम्हारी वहुत सेवा करूँगी। २—वानि = वोली। जाति कुल = मेरा जाति-कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि = दिल्लगी में। पतिआरा = विश्वास। ५—केशर के फूल देखकर, कौतुक वश, उसे दोनों हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगे दीख पड़ते हैं]। ६—अनार समझ कर सुग्गे मेरे कुचों पर लुभा गये। [उनकी चोंचों के आघात से कुच क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख-रेखा समझ रही हो।] ९— उभय = दोनों। भुज = हाथ। तैं = इससे।

[१२९]

खरि नरि बेग भासलि नाई।
धरए न पारथि बाल कन्हाई ॥२॥

तें घसि जमुना भेलहुँ पार।
फूटल बलआ टूटल हार ॥४॥

ए सखि ए सखि न बोल मंद।
बिरुह बचन बाढ़ए दंद ॥६॥

कुंडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइत पड़लि साँझ ॥८॥

अलक तिलक तें बहि गेल।
सुध सुधाकर बदन भेल ॥१०॥

तटिनि बट न पाइअ बाट।
तें कुच गड़ल कठिन काँट ॥१२॥

भनइ बिद्यापति अपसाद।
बचन कओसलें जितिअ बाद ॥१४॥

रेप = रूप। आन = दूसरा।

१—खरि = तीव्र। नरि = नदी। भासलि = भस गई, बह चली। नाइ = नाव, नौका। ३—घसि = तैरकर। ४—बलआ = चूड़ी। ५—मंद = बुरी बात। ६—बिरुह = विरस, कठोर। दंद = झगड़ा।—७—खसल = गिर पड़ा। ८—जोहइत = खोजने में। ९—अलक = आलता, महावर। तिलक = टीका। १०—सुध = शुद्ध निष्कलंक। सुधाकर = चन्द्रमा। ११—तटनि = नदी। बाट = राह। १२—गड़ल = गड़ गया। १३—अपसाद = पराजय।

[१३०]

ननदी सरुप निरूपह दोसे।
बिनु बिचार बेभिचार बुझओबह
सासू करतन्हि रोसे ॥ २ ॥

कौतुक कमल नाल सयँ तोरल
करए चाहल अवतंसे।
रोष कोष सयँ मधुकर आभोल
तेहि अधर करु दंसे ॥ ४ ॥

सरवर-घाट बाट कंटक-तरु
देखहि न पारल आगू।
साँकरि बाट उबटि कहु चललहु
तें कुच कंटक लागू ॥ ६ ॥

१४—वचन कओसले = वचन-चातुरी से। बाद = मुकदमा।

१—सरूप = स्वरूप, आकृति। निरूपण = निरूपण करती हो। मेरी ननद, तुम आकृति देखकर मुझे दोष लगाती हो। २—बेभिचार = व्यभिचार, पाप कर्म। बुझओबह = समझाओगी। रोसे = क्रोध। ३—नाल सयँ = मृणाल से। अवतंसे = सिर का आभूषण। ४ रोप = क्रोधित होकर। कोष = कमल का भीतरी भाग। मधुकर = भौंरा। तेहि = उसीने। करु दंसे = काट लिया (जिससे ओष्ठ मलिन हो गये)। ५—सरवर = तालाब। बाट = राह। कंटक तरु = काँटों के पेड़। देखहि न पारल = देख न सकी। आगू = आगे। ६—सँाकरि = संकीर्ण, पतली। तें = इसमें। कुच = स्तन।

गरुअ कुम्भ सिर थिर नहि थाकए
तें उघसल केस पास।
सखि जन सयँ हम पाछे पड़लिहु
तें भेल दीघ निसास॥ ८॥

पथ अपबाद पिसुन परचारल
तथिहु उतर हम देला।
अमरख चाहि धैरज नहि रहले
तें गदगद सर भेला॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
ई सभ राखह गोई।
ननदी सयँ रस रीति बढ़ाबह
गुपुत बेकत नहि होई।१२॥

७—गरुअ = भारी। कुम्भ = घड़ा। सिर थिर नहो थाकए = सिर स्थिर नहीं रहता। उघसल = परिपाटी विहीन हो गया। ८—सयँ = से। पीछे पड़लिहु = पीछे पड़ गई। दीघ भेल = तीव्र हुआ। निसास ऊँची साँस, उच्छ्वास। मैं सखियों से पीछे पड़ गई, अत दौड़ कर उन्हें पाने की चेष्टा करने के कारण साँस जल्दी जल्दी आ रही है। ९—पथ = राह। अपबाद = शिकायत। पिसुन = दुष्ट। परचारल = प्रचारित किया, फैलाया। तथिहु = वहाँ। उतर देल = उत्तर दिया। १०—अमरख चाहि = आमर्षवश, क्रोध के आवेग से। गदगद सर = भर्राई आवाज। ११—ई सभ = यह सब। गोई = छिपाकर। १२—ननँद से प्रीति बढ़ाओ, उसे मेल में रक्खो तो गोपनीय (बात) प्रकट न होगी।

[१३१]

जाहि लागि गेलि हे ताहि कहाँ लइलि हे
ता पति वैरि पितु काहाँ ।
अछलि हे दुख सुख कहह अपन मुख
भूषण गमओलह जाहाँ ॥ २ ॥

सुन्दरि, कि कए बुझाओब कंते
जन्हिका जनम होइत तोहे गेलिहु
अइलि हे तन्हिका अंते ॥ ४ ॥

जाहि लागि गेलहु से चलि आएल
तें मोयँ घाएल नुकाई ।

१—जाहि लागि = जिसके लिये (जल के लिये)। गेलि = गई। ताहि = उसे। कहाँ लाइलि = कहाँ लाई (नहीं लाई)। ता पति वैरि पितु काहाँ = उसके (जलके) पति = समुद्र, समुद्र का वैरी = अगस्त्य, अगस्त्य का पिता = घट, घड़ा; कहाँ है ? २—अछलि = थी। भूषण = अंगराग आदि। गमओलह् = खो दिया। जहाँ अंगराग आदि (रति-क्रीड़ा की मस्ती में) नष्ट हो गये, वहाँ के सुख दुःख अपने ही मुख से कहो। ३—कि कए = क्योंकर। बुझाओब = समझाओगी। ४—जन्हिका जनम होइत = जिसका (दिन का) जन्म होते ही-प्रातःकाल ही। आइल हे तन्हिका अन्ते = उसके (दिन के) अन्त में—संध्या को आई। ४—जिसके लिये (जल के लिये) मैं गई, वह (जल-वृष्टि, वर्षा) चली आई—वर्षा होने लगी, जिससे मुझे दौड़कर छिपना पड़ा।

से चलि गेल ताहि लए चललिह्
तें पथ भेल अनेआई ॥ ६ ॥

संकर-बाहन खेड़ि खेलाइत
मेदिनि - बाहन आगे ।

जे सब अछलिसँग से सब चललि भँग
उबरि अएलहुँ अति भागे ॥ ८ ॥

जाहि दुई खोज करइ छथि सासुन्हि
से मिलु अपना संगे ।
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
गुपुत नेह रति-रगे ॥ १० ॥

६—से = वह (जलवृष्टि) चली गई तब उसे (जल) लेकर चली । तें = इस कारण । पथ = राह । अनेआई = अन्याय । ७—संकर-बाहन = बैल । खेड़ि खेलाइति = खेल कर रहा था, आपस में लड़ रहा था । मेदिनि-बाहन = सर्प । आगे = आगे था । ८—अछलि = थी । भँग = छिटक-कर । उबरि अएलहुँ = उबर आई, बच आई । भागे = भाग्य से ही । ९—जिन दोनो (जल और घड़ा) की खोज सासुजी कर रही हैं, वे दोनों अपने साथियों से मिल गये—(वर्षा हो रही थी कि घड़ा फूट गया—घडे का पानी वर्षा के पानी में मिल गया और मिट्टी का घड़ा मिट्टी में मिल गया) । १०—जौवति = युवती । गुपुत नेह = गुप्त प्रेम । रति रगे = रति क्रीड़ा ।

—·•·—

When passion and philosophy meet in a single individual, we have a great poet—Browning.

[१३२]

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥२॥

ततहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥४॥

कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग राँगि कर गोर ॥६॥

आनक भूषण तोर कलङ्क।
बड़ ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥८॥

चिटि-गुड़ चुरडलि राडक पोरि।
लाओने लाथ वेकत भेल चोरि ॥१०॥

भनइ विद्यापति बजबहु बाद।
बड़ अपराध मौन पए साध ॥१२॥

---

१ २—उजागर = जागरण। निवेद = जनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रकट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायितमलस निमेषम्—गीतगोविन्द।" ३—ततहि जाह = वहीं जाओ। लाथ = बहाना। ५ ६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानों अनुराग के रंग में रँगकर (काले वक्षस्थल को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक = दूसरे का। ८—परसंग = प्रसंग, संगति। ९—चिटि गुड़ = गुड़-चींटी। राड़ = शूद्र की एक उपजाति। पोरि = घर। १०—लाथ लओने = बहाना करने पर। वेकत = व्यक्त। १२—बजबहु = बोलना। बाद = व्यर्थ।

[१२४]

कुंकुम लओलह नख-खत गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥२॥

तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लोचन अरुन वेकत भेल चोरि ॥४॥

चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥६॥

जानओं प्रकृति बुझओं गुनशीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥८॥

वचन नुकावह वेकतओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय वड़ लाज ॥१०॥

अपथहु सपथ बुझावह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥१२॥

भनइ विद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से बकोटकर तुम्हारे वक्षःस्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओष्ठ का। अएलहु = आये हो। ३—छपल = छिप सका। ४—अरुन = लाल। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकाबह = छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जान कर भी। १२—कोन परि = किस प्रकार। खेओम = क्षमा करूँगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = साधना।

[१२२]

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥२॥

धतहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥४॥

कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग रँगि करु गोर ॥६॥

आनक भूषण तोर कलङ्क।
बड़ ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥८॥

चिटि-गुड़ चुरइलि राड़क पोरि।
लाओले लाथ वेकत भेल चोरि ॥१०॥

भनइ विद्यापति बजबहु बाद।
बड़ अपराध मौन पए साध ॥१२॥

१-२—उजागर = जागरण। निवेद = बनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रकट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायितमलस निमेषम्—गीतगोविन्द।" ३—धतहि जाह = वहीं जाओ। लाथ = बहाना। ५-६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानों अनुराग के रंग में रँगकर (काले वक्ष स्थल को) गोरा बना दिया हो। [illegible]क = दूसरे का। ८—परसग = प्रसंग, संगति। ९—चिटि [illegible] । राड़ = शूद्र की एक उपजाति। पोरि = घर। १०— [illegible] । करने पर। वेकत = व्यक्त।

[१३४]

कुंकुम लओलह नख-खत गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥२॥

तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लोचन अरुन वेकत भेल चोरि ॥४॥

चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥६॥

जानओं प्रकृति बुझओं गुनशीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥८॥

वचन नुकावह वेकतओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय वड़ लाज ॥१०॥

अपथहु सपथ बुझावह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥१२॥

भनइ विद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से वकोटकर तुम्हारे वक्षःस्थल पर चिह्न वना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओष्ठ का। अएलहु = आये हो। ३—छपल = छिप सका। ४—अरुन = लाल। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकावह = छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जान कर भी। १२—कोन परि = किस प्रकार। खेओम = क्षमा करूँगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = साधना।

[१३२]

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद॥२॥

जतहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ॥४॥

कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग रागि कर गोर॥६॥

आनक भूषन तोर कलङ्क।
बड़ ओ भेद मन्द ओ परमङ्क॥८॥

चिटि-गुड़ चुरइत्ति राइक पोरि।
लाओले लाथ येकन्त भेल चोरि॥१०॥

भनइ विद्यापति बजबहु बाद।
बड़ अपराध मौन पद साध॥१२॥

१ २—उजागर = जागरन। निवेद = बतलाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रकट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायितम् अलस निमेषम्—गीतगोविन्द।" ३—जतहि जाह = जहाँ जाओ। लाथ = बहाना। ५ ६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानों अनुराग के रंग में रँगकर (काले कृष्णचन्द्र को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक = दूसरे का। ८—परमङ्क = प्रसंग, सङ्गति। ९—चिटि गुड़ = गुड़-चींटी। राइ = सूद की एक जाति। पोरि = घर। १०—लाथ लओले = बहाना करने पर। येकन्त = एकान्त। १२—बजबहु = बोलना। बाद = व्यर्थ।

[१२४]

कुंकुम लओलह नख-खत गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥२॥

तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लोचन अरुन बेकत भेल चोरि ॥४॥

चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥६॥

जानओं प्रकृति बुझओं गुनशीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥८॥

वचन नुकावह बेकतओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय बड़ लाज ॥१०॥

अपथहु सपथ बुझावह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥१२॥

भनइ विद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से बकोटकर तुम्हारे वक्षःस्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओष्ठ का। अएलहु = आये हो। ३—छपल = छिप सका। ४—अरुन = लाल। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकावह = छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जान कर भी। १२—कोन परि = किस प्रकार। खेओम = क्षमा करूँगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = साधना।

[१३२]

खनहि खन महँघि भइ किछु अरुन नयन कइ
कपट धरि मान सम्मान लेही।
कनक जयँ प्रेम कसि पुनु पलटि वाँक हसि
आधि सयँ अधर मधु-पान देहि ॥१॥

अरेरे इन्दुमुखि अद न कर पिअ हृदय खेद हर
कुसुम-सर रंग संसार सारा ॥३॥
वचन वस होसि जनु ससरि भिन्न होइत तनु
सहज वरु छाड़ि देव सयन सीमा।
प्रथमे रस भंग भेल लोभे मुल सोम गेल
वाँधि भुज-पास पिय धरव ग्रीमा ॥४॥
जदि नयन-कमल-वर मुकल कल कान्ति धिर
खर नखर-घात कइ सेहे वेला।
परम पद लाभ सम मोद चिर हृदय रम
नागरि सुरत-सुख अमिअ मेला ॥७॥
सरसकवि सुरस भन चारू तर चतुरपम
नारि अराहिअइ पँचवाने।
सकल जन सुजन गति रानि लखिमाक पति
रूप नरायन सिवसिंघ जाने ॥६॥

[मान-शिक्षा] १—महँघि = महँगा। ३—अद = ओट, टालमटूल। कुसुम-सर = कामदेव। ५—ग्रीम = ग्रीवा, गरदन। ६—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—आँखें झिपने लगें—तो उस समय नख का विकट प्रहार करना।

[१३२]

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥२॥

ततहि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥४॥

कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग रँगि करु गोर ॥६॥

आनक भूषण तोर कलङ्क।
बड़ ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥८॥

चिटि-गुड़ चुपड़लि राड़क पोरि।
लाओले लाथ बेकत भेल चोरि ॥१०॥

भनइ विद्यापति बजबहु वाद।
बड़ अपराध मौन पए साध ॥१२॥

१-२—उजागर = जागरण। निवेद = जनाता है। लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रकट करती हैं। "रजनि जनित गुरुजागर राग कषायितमलस निमेषम्—गीतगोविन्द।" ३—तनहि जाह = वही जाओ। लाथ = बहाना। ५-६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है। मानों अनुराग के रंग में रँगकर (काले वक्ष स्थल को) गोरा बना दिया हो। ७—आनक = दूसरे का। ८—परसंग = प्रसंग, संगति। ९—चिटि-गुड = गुड-चींटी। राड़ = शूद्र की एक उपजाति। पोरि = घर। १०—लाथ लओले = बहाना करने पर। बेकत = व्यक्त। १०—बजबहु = बोलना। वाद = व्यर्थ।

[१३४]

कुंकुम लओलह नख-खत गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥२॥

तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लोचन अरुन वेकत भेल चोरि ॥४॥

चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥६॥

जानओं प्रकृति बुझओं गुनशीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥८॥

वचन नुकावह वेकतओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय वड़ लाज ॥१०॥

अपथहु सपथ बुझावह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥१२॥

भनइ विद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से बकोटकर तुम्हारे वक्षःस्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओष्ठ का। अएलहु = आये हो। ३—छपल = छिप सका। ४—अरुन = लाल। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकावह = छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जान कर भी। १२—कोन परि = किस प्रकार। खेओम = क्षमा करूँगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = साधना।

[१३५]

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
वचन बोलत आध आधे।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ॥२॥

माधव, चल चल चलतिन्हि ठाम।
जसु पद जावक हृदयक भूषन
अनहु जपत तसु नाम ॥४॥

कत चंदन कत मृगमद कुंकुम
तुअ कपोल रहु लागि।
देखि सौति अनुरूप कएल बिहि
अतए मानिय बहु भागि ॥६॥

१—मुदित = मुँदे हुए। २—रति आलस = काम क्रीड़ा जनित थकावट। सामर = श्यामला। झामर = मलिन। हेरि = देखकर। साधे = हौसला। ३—चल = जाओ। तन्हि ठाम = उसी के यहाँ। ४—जसु = जिसके। पद जावक = पैर का महावर। जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय का आभूषण हुआ है, उसीका नाम तुम अब भी जप रहे हो। [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस नायिका का नाम निकल गया था।] ५—कत = कितना। मृगमद = कस्तूरी। कुंकुम = केसर। कपोल = गाल। ६—अनुरूप = समान। ६—मैं तो इसी में अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है।

[१३६]

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥

पुजलौं पशुपति जामिनि जागि।
गमन विलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥

लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ॥६॥

रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥

नवकविसेखर कि कहव तोय।
सपथ करह तब परतीत होय ॥१०॥

१—अवधान = मनोयोग, ध्यान देना। कहसि काहे आन = दूसरी बात क्यों कह रही हो? पसुपति = महादेव। जामिन = रात। ४—गमन = आने में, चलने में। तेहि लागि = इसीलिये। ५—६—उचरइत = उच्चारण करते हुए। राग—लालिमा। कस्तूरी और केशर से शिव की पूजा की। शरीर पर उन्हींके चिह्न हैं। बार-बार मंत्र उच्चारण करने के कारण ओष्ठ की ललाई नष्ट हो गई। ७—रजनि = रात। उजागर = जागरण, घोर = भयानक (लाल)। ८—इसीलिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९—१०— विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

[१३५]

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
वचन बोलत आध आधे।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ॥२॥

माधव, चल चल चलतिन्हि ठाम।
जसु पद - जावक हृदयक भूषन
अबहु जपत तसु नाम ॥४॥

कत चंदन कत मृगमद कुंकुम
तुअ कपोल रहु लागि।
देखि सौति अनुरूप कएल बिहि
अतए मानिए बहु भागि ॥६॥

१—मुदित = मुँदे हुए। २—रति आलस = काम क्रीडा की थकावट। सामर = श्यामला। झामर = मलिन। हेरि = देख। साधे = हौसला। ३— चल = जाओ। तन्हि ठाम = उसी यहाँ। ४—जसु = जिसके। पद जावक = पैर का महावर। पैर का महावर तुम्हारे हृदय का आभूषण हुआ है, उसीका तुम अब भी जप रहे हो। [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस का नाम निकल गया था।] ५—कत = कितना। मृगमद = कुंकुम = केशर। कपोल = गाल। ६—अनुरूप = समान। तो इसी में अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक सौत दी है।

[१३६]

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
विनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥

पुजलौं पशुपति जामिनि जागि।
गमन विलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥

लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ॥६॥

रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥

नवकविसेखर कि कहव तोय।
सपथ करह तव परतीत होय ॥१०॥

१—अवधान = मनोयोग, ध्यान देना। कहसि काहे आन = दूसरी बात क्यों कह रही हो? पसुपति = महादेव। जामिन = रात। ४—गमन = आने में, चलने में। तेहि लागि = इसीलिये। ५—६—उचरइत = उच्चारण करते हुए। राग—लालिमा। कस्तूरी और केशर से शिव की पूजा की। शरीर पर उन्हींके चिह्न हैं। बार-बार मंत्र उच्चारण करने के कारण ओष्ठ की ललाई नष्ट हो गई। ७—रजनि = रात। उजागर = जागरण, घोर = भयानक (लाल)। ८—इसीलिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९—१०— विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

[१३७]

ए धनि माननि करहु संजात।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि
ताक उपर धर हात॥२॥

तोहे छोड़ि जदि हम परसब कोय।
तुअ हार-नागिनि काटब मोय॥४॥

हमर बचन यदि नहि परतीत।
बूझि करहु साति जे होय उचीत॥६॥

भुज-पास बाँधि जघन-तर तारि।
पयोधर-पाथर हिय दह भारि॥८॥

उर-कारा बाँधि राख दिन-राति।
विद्यापति कह उचित इह साति॥१०॥

१—धनि = बाला। करहु संजात = संयत करो, क्रोध छोड़ो। २—हेम-घट = सोने का घड़ा। भुजंगिनि = सर्पिणी। ताक = उसके। [यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच रूपी सोने के घड़े तथा हार रूपी सर्पिणी के ऊपर हाथ रखकर मैं शपथ खाता हूँ। ३—छोड़ि = छोड़कर। परसब = स्पर्श करूँगा। कोय = किसीको। ६—साति = शास्ति, दण्ड। ७—भुज पास = भुजा-रूपी जंजीर। जघन तर = जाँघों के तले। तारि = ताड़ना करके, खूब ठोक-पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उर-कारा = हृदय रूपी जेलखाने में। राख = रखो। १०—इह = यह। साति = शास्ति, दंड।

[१३८]

अरुण पुरब दिसा वितलि सगरि निसा
गगन मगन भेला चंदा।
मूदि गेलि कुमुदिन तइओ तोहर धनि
मूदल मुख अरविंदा ॥२॥

चाँद वदन कुवलय दुहु लोचन
अधर मधुरि निरमान।
सगर सरीर कुसुम तोय सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ॥४॥

असकति करह कँकन नहि पहिरह
हार हृदय भेल भार।
गिरिसम गरुअ मान नहि मुंचसि
अपरुब तुअ वेवहार ॥ ६ ॥

अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि विहान।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—अरुन = लाल। वितलि = वीत गई। सगरि = समग्र, समूची। मगन = मग्न, डूब जाना। २—अरविंदा = कमल। ३—वदन = मुख। कुवलय = कमल। मधुरि = एक लाल फूल। ४— कुसुम = फूल। सिरिजल = बनाया। किए दहु = क्यों दिया। पखान = पत्थर। ५—असकति = (मैथिली प्रयोग) आलस। करह = कर रही हो। कँकन = कंगन। ६—गरुअ = भारी। मुंचसि = छोड़ती हो। ७— विहान = प्रातःकाल।

[१३६]

मदन-कुंज पर बइसल नागर
वृन्दा सखि मुख चाहि।
जोड़ि जुगुल कर बिनति करए कत
तुरित मिलावह राहि ॥ २ ॥

हम पर रोखि विमुख भइ सुन्दरि
जरहु चललि निज गेहा।
मदन हुतासन मझु मन जारल
जीव न बाँधइ थेहा ॥ ४ ॥

तुअ अति चतुर सिरोमनि नागरि
तोहे कि सिखाओब बानि।
तुह्न बिनु हमर मरम कोन जानत
कइसे मिलाएब आनि ॥ ६ ॥

चन्दन चाँद पवन भेल रिपु सम
वृन्दावन बन भेल।
कोकिल मयूर झंकार देत कत
मझु मन मनमथ सेल ॥ ८ ॥

छल छल नयन बयन भरि रोअत
चरन पकड़ि गहि जाब।
हा हा से धनि हमए न हेरब
सिंह भूपति रस गाब ॥ १० ॥

१—चाहि = देखना। २—राहि = राधा। ४—मदन हुतासन = कामदेवरूपी अग्नि। जीव न बाँधइ थेहा = जीव स्थैर्य

[१४०]

माधव, ई नहि उचित विचार।
जनिक एहन धनि काम-कला सनि
से किअ करु व्यभिचार॥ २॥

प्रानहु ताहि अधिक कए मानव
हृदयक हार समान।
कोन परजुगति आनकें ताकव
की थिक तोहर गेआन॥ ४॥

कृपन पुरुपकें केओ नहि निक कह
जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहि उपभोगव
केवल परहिक आस॥ ६॥

भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
ई थिक अनुचित काज।
माँगि लायव वित से जदि हो नित
अपन करव कोन काज॥ ८॥

नहीं बाँधते, प्राण स्थिर नहीं होते। ८—मनमथ = कामदेव।

२—जनिक = जिसको। एहन = ऐसी। सनि = समान। ४—परजुगति = प्रयुक्ति। आनकें ताकव = दूसरे को देखना। की = क्या। थिक = है। ५—कृपन = सूम। निक = नीक, अच्छा। उपहास = हँसी। ६—अछइत = रहते। परहिक = दूसरे की। ८—यदि माँगा हुआ धन नित्य रहता—यदि मँगनी की चीज से ही काम चल जाता—तो लोग अपने धन के लिये क्यों कष्ट उठाते?

[१४१]

बिरह व्याकुल बकुल तरुतर
पेखल नन्द-कुमार रे।
नील नीरज नयन सयँ सखि
ढरइ नीर अपार रे॥ २॥

पेखि मलयज-पङ्क मृगमद
तामरस घनसार रे।
निज पानि-पल्लव मूँदि लोचन
धरनि पड़ असँभार रे॥ ४॥

बहइ मन्द सुगन्द सीतल
मन्द मलय-समीर रे।
जनि प्रलय कालक प्रबल पावक
दहइ सून सरीर रे॥ ६॥

अधिक वेपथ टूटि पड़ खिति
मसन मुकुता-माल रे।
अनिल तरल तमाल तरुवर
मुंच सुमनस जाल रे॥ ८॥

मान-मनि तजि सुदति चलु जहि
राए रसिक सुजान रे।
सुखद श्रुति अति सरस दण्डक
कवि विद्यापति भान रे॥१०॥

१—बकुल=मौलिश्री, मनसरी। २—नीरज=कमल। ३—मलयज=चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। तामरस=कमल। घन-

[१४२]

रामा, कि अब बोलसि आन।
तोहर चरन सरन से हरि
अबहु मेटह मान ॥ २ ॥

गोवर्धन गिरि वाम कर धरि
कएल गोखुल पार।
विरह से खिन करक कंकन
गरुअ मानए भार ॥ ४ ॥

दमन कालो कएल जे जन
चरन जुगुल-वरे।
अब भुजंगम मरम भूलल
हृदय हार न धरे ॥ ६ ॥

सहज चातक छाड़ए न वरत
न वइसे नदी तीर।
नविन जलधर-वारि विनु
न पिवए ताहरि नीर ॥ ८ ॥

सार = कपूर। ४—पानि = हाथ। ६—पावक = अग्नि। सून = शून्य। ७—वेपथ = व्यथित। खिति = पृथ्वी। मसृन = चिकना। ८—अनिल-तरल = वायु-द्वारा आन्दोलित। मुच = गिरना। सुमनस = फूल। ९—सुदति = सुन्दरी। १०—स्रुति = सुनने में। दंडक = इस छंद का नाम दंडक है।

१—रामा = सुंदरी। आन = अन्य। ४—करक = हाथ का। गरुअ = अधिक, कठिन। ६—दमन = दलित, नष्ट। वरे = श्रेष्ठ। भुजंगम = सर्प। ७—वरत = व्रत। वइसे = बैठता। जलधर = बादल।

[१४३]

सखि हे बूझल कान्ह गोआर।
पितरक टाँड़ काज दहु कओन लइ
ऊपर चकमक सार ॥२॥

हम तो कएल मत गेलहि होएत भल
हम छलि सुपुरुख भाने।
तोहार बचन सखि कएल आँखि देखि
अमिअ-भरम बिष पाने ॥४॥

पसुक संग हुन जनम गमाओल
से कि बुझथि रतिरंग।
मधु-जामिनि मोर आज बिफल गेलि
गोप गमारक संग ॥६॥

तोहर बचन कूप धसि जाएब
तैं हमे गेलहु अबाट।
चंदन भरम सिमर आलिंगल
सालि रहल हिय काँट ॥८॥

भनइ बिद्यापति हरि बहुबल्लभ
कएल बहुत अपमान।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा पति रस जान ॥१०॥

२—पितरक—पीतल का। टाँड़=हाथ का एक गहना। ३—गेलहि=जाने से। छलि=थी। मधुजामिन=वसंत की रात। ७—अबाट=कुपथ ८—सिमर=सेमल। ९—बहुबल्लभ=बहुत स्त्रियों के पति।

[१४४]

मधु सम वचन कुलिस सम मानस
प्रथमहि जानि न भेला ।
अपन चतुरपन पिसुन हाथ देल
गरुअ गरब दुर गेला ॥२॥

सखि हे, मन्द प्रेम परिनामा ।
बड़ कए जीवन कएल अपराधिन
नहि उपचर एक ठामा ॥४॥

झाँपल कूप देखहि नहि पारल
आरति चललहु धाई ।
तखन लघूगुरु किछु नहि गूनल
अब पछतावक जाई ॥६॥

एक दिन अछलहु आन भान हम
अब वूझिल अवगाहि ।
अपन मूँड़ अपने हम चाँछल
दोख देब गए काहि ॥८॥

भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
चित्त गनब नहि आने ।
पेमक कारन जीउ उपेखिए
जग जन के नहि जाने ॥१०॥

१—कुलिस=वज्र । २—पिसुन=दुष्ट । ४—उपचर=शान्ति । ५—आरति=शीघ्रता में । ६—गूनल=समझा । ७—आनभान=नासमझ । अवगाहि=अन्तः प्रवेश करके । ८—चाँछल=छील लिया । १०—उपेखिए=उपेक्षा करो ।

[१४५]

माधव, दुर्जय मानिनि-मानि।
विपरित चरित पेखि चकरित भेल
न पुछल आयहु धानि ॥२॥

तुअ रूप साम अखर नहि सूनए
तुअ रूप रिपु सम मानि।
तुअ जन सयँ सम्भास न करई
कइसे मिलाएब आनि ॥४॥

नील बसन वर, काँचन चुरि कर
पौतिक माल उतारि।
करि-रद चुरि कर मोति माल बर
पहिरल अरुनिम सारि ॥६॥

असित चित्र उर पर छल,मेटल
मलयज देह लगाइ।
मृगमद तिलक धोइ दृगंचल, कच
सयँ मुख लए छपाइ ॥८॥

२—विपरित=उलटा। चकरित=चकित, चक्कर आ गया। ३—साम=श्याम (कृष्ण)। अखर=अक्षर। ४—सयँ=से। सम्भास=बातचीत। काँचन चुरि कर=हाथों की काँच की चूड़ी। पौतिक=फिरोजा, नीलमणि। ६—करि-रद-चुरि=हाथी के दाँत की चूड़ी। अरुनिम=लाल। सारि=साड़ी। ७—असित चित्र=काला गोदना। छल=था। मलयज=चंदन। ८—मृगमद=कस्तूरी (काली होती है) दृगचल=आँख के कोने। कच=केश। ९—तील=तिल, तिलवा।

एक तील छल चारु चिबुक पर
निन्दि मधुप-सत सामा।
तृन-अग्रे करि मलयज रंजल
ताहि छपाओल रामा ॥१०॥

जलधर देखि चन्द्रातप झाँपल
सामरि सखि तेहि पास।
तमाल तरु गन चूना लेपल
सिखि पिक दूरि निवास ॥१२॥

मधुकर डर थनि चम्पक-तरु तल
लोचन जल भरिपूर।
सामर चिकुर हेरि मुकुर पटकल
टूटि भए गेल सत चूर ॥१४॥

तुअ गुन-गाम कहए सुक पंडित
सुनतहि उठल रोसाइ।
पिंजर झटकि फटिक पर पटकल
धाए धएल तहि जाइ ॥१६॥

मेरु सम मान सुमेरु कोप सम
देखि भेल रेनु समान।
विद्यापति कह राहि मनावए
आपु सिधारह कान ॥१८॥

चिबुकि=ठुड्डी। निन्दि... ...=जो भौंरे के बच्चे की श्यामलता को भी लज्जित करता था। १०—खर की नोंक से चन्दन लगाकर उस सुन्दरी ने उसे मिटा दिया। ११—जलधर=मेघ। चन्द्रातप=

[१४६]

मनिनि हम कहिए तुअ लागी।
नाह निकट पाइ जे जन बंचए
तेकर बड़हि अभागी ॥२॥

दिनकर-बन्धु कमल सब जानए
जल तेहि जीवन होई।
पङ्क बिहीन तनु भानु सुखावए
जल पटाब बरु कोई ॥४॥

नाह समीप सुखद जत वैभव
अनुकुल होएत जोई।
तेकर 'बिरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोई ॥६॥

तुहु धनि गुनमति बूझि करह रति
परिजन ऐसन भास।
सुनइत राहि हृदय भेल गदगद
अनुमति कएल प्रगास ॥८॥

चँदोवा। १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर तथा कोयल को छोड़ दिया। १३—चिकुर=केश। मुकुर=आईना। १४—मउ चूर=दो टुकड़े। १५—गाम—समूह। गुक=गुग्गा। रोमाई=कंपित होकर। फटिक=स्फटिक पत्थर। १६—रेनु=धूल।

१—तुअ लागि=तुम्हारे लिये। २—नाह=पति। ३—दिनकर=सूर्य। ४-बिहिन=हीन। भानु=सूर्य। पटाब=छिड़कना। ६-दगधए=जलता है।

[१४७]

मानिनि आब उचित नहि मान
एखनुक रंग एहन सन लगइछ
जागल पए पँचबान ॥२॥

जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनि
एहन समय नहिं आन।
एहि अवसर पिय-मिलन जेहन सुख
जकरहि होए से जान ॥४॥

रभसि-रभसि अलि बिलसि बिलसि करि
करए मधुर मधु पान।
अपन अपन पहु सबहु जेमाओलि
भूखल तुअ जजमान ॥६॥

त्रिवलि तरंग सितासित संगम
उरज सम्भु निरमान।
आरति पति मँगइछ परतिग्रह
करु धनि सरबस दान ॥८॥

दीपक-दिप सम थिर न रहय मन
दृढ़ करु अपन गेआन।
संचित मदन बेदन अति दारुन
बिद्यापति कवि भान ॥१०॥

२—इस समय का समा (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है, मानों कामदेव सोते से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि = शीतल। ४—जेहन = जैसा। जकरहि जिसको। ६—रभसि = उमंग में आकर।

[१४८]

अखिल लोचन तम-ताप-बिमोचन
उदयति आनन्दकन्दे।
एक नलिनि-मुख मलिन करए जदि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥२॥

सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति।
गुन गन तेजि दोष एक घोषसि
अन्त अहीरनि जाति ॥४॥

सकल जीव-जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुसीते।
दीपक-जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते ॥६॥

अलि = भौंरा। ६—पहु = प्रीतम। जेमाओलि = खिलाया। ७—त्रिवली की तरंग में गंगा यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच-रूपी शिव की स्थापना है। ८—आरति = आर्त, व्याकुल। परतिग्रह = दान। ९—दीपक दिप = दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन = कामदेव।

१—अखिल = समूचा (संसार) तम = अंधकार। ताप = गर्मी, ज्वाला। बिमोचन = नाश करनेवाला। उदयति = उगता है। कंद = मूल जड़। २—नलिनि = कमलिनी। इथे = इसलिये। निन्दह = निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति = बुद्धि। ४—घोषसि = बार बार कहना। ५—जीव-जन = प्राणी। जीव = प्राण। समीरन = वायु। ६—परस = स्पर्श। नीन्द = निन्दा करना। मारुते = पवन को।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥८॥

खन-खन सकल कुसुम मन तोषय
निसि रहु कमलिनि संगे।
चम्पक एक जइओ नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ॥१०॥

पाँच-पाँच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे।
विद्यापति कान्हु आकुल तो विनु
विषाद न पावसि लाजे ॥१२॥

७—स्थावर = वृक्ष आदि अचल जीव। जंगम = मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट = कीड़े। पतंगम = फनगे आदि। ८—कागद पत्र = कागज के पन्ने। परस = स्पर्श जाओं = यदि। नीर = पानी। ६—खन = क्षण। कुसुम = फूल। तोषय = संतुष्ट करता है। निसि = रात। १०—चम्पक = चम्पा। जइओ = यदि। भृंग = भौंरे को। ११—(५ × ५ × १० × ४ × ८ × २) = १६००० सखियों के मध्य में। १२—कान्हु = श्रीकृष्ण। विषाद = दुःख। पावसि = पाती हो।

—::*::—

"सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति॥"

[१४८]

अखिल लोचन तम-ताप-विमोचन
उदयति आनन्दकन्दे।
एक नलिनि मुख मलिन करए जदि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥२॥

सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति।
गुन गन तेजि दोष एक घोपसि
अन्त अहीरनि जाति ॥४॥

सकल जीव-जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुसीवे।
दीपक-जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते ॥६॥

अलि = भौंरा। ६—पहु = प्रीतम। जेमाओलि = खिलाया। ७—त्रिवली की तरग में गगा यमुना (हार और रोमावलि) का सगम हुआ है, जहाँ कुच-रूपी शिव की स्थापना है। ८—आरति = आर्त, व्याकुल। परतिग्रह = दान। ९—दीपक दिप = दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन = कामदेव।

१—अखिल = समूचा (ससार) तम = अधकार। ताप = गर्मी, ज्वाला। विमोचन = नाश करनेवाला। उदयति = उगता है। कद = मूल जड। २—नलिनि = कमलिनी। इथे = इसलिये। निन्दह = निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति = बुद्धि। ४—घोपसि = बार बार कहना। ५—जीव-जन = प्राणी। जीव = प्राण। समीरन = वायु। ६—परस = स्पर्श। नीन्द = निन्दा करना। मारुते = पवन को।

[१५०]

सजनी अपद न मोहि परबोध।
तोड़ि जोड़िअ जहाँ गाँठ पड़ए तहाँ
तेज तम परम विरोध ॥ २ ॥

सलिल सनेह सहज थिक सीतल
ई जानए सब कोई।
से जदि तपत कए जतने जुड़ाइए
तइओ विरत रस होई ॥४॥

गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पड़ए हुतास पतंग ॥६ ॥

दूसरे की स्त्री। ४—एहनी = ऐसी। दूर गेल = दूर हो गया। ५—एक नये कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया, वह वहीं सूख गया, और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला। ७—छयि = है। ओतहि = वहीं। ८—समागम = भेंट। १०—आओत = आवेगा।

१—अपद = अस्थान, अनुचित रूप से। परबोध = समझाओ। ३—सहज सीतल थिक = स्वाभावतः ही ठंढा है। ४—तपत कए = गर्म करके। जतने = यत्नपूर्वक। जुड़ाइअ = ठंढा कीजिये। तइओ = तोभी। विरत रस = रसहीन। ५—कुल-रूपी चद्रमा में नीला धब्बा पड़ जाने पर तथा कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है। ६—अनुभवि = अनुभव करके। पुनु = पुनः। अनुभवए = अनुभव करता है। हुतास = अग्नि।

(१४९)

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरत सब मनकाम।
कटक दरस परस भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥२॥

एकहि नगर वसु माधव सजनी
पर भामिनि वस भेल।
हम धनि एहन कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥४॥

अभिनव एक कमल फुल सजनी
दोना नीमक डार।
सेहो फुल ओतहि सुखायल छयि सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥६॥

विधि वस आज आएल पुनि सजनी
एत दिन ओतहि गमाय।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआय ॥८॥

भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठ बधाव करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन=चदन। भरम=भ्रम से। सेवलि=सेवा की।
२—कटक=काँटा। सीमर=सेमर। ३—पर-भामिनि=

[१५२]

जनम होअए जनु, जौं पुनि होई
जुवति भए जनमय जनु-कोई ॥२॥

होई जुवति जनु हो रसमंति
रसओ बुझए जनु हो कुलमंति ॥४॥

इ घन माँगओं विहि एक पए तोहि।
थिरता दिहह अवसानहु मोहि ॥६॥

मिलि सामी नागर रसधार।
परवस जनु होए हमर पिआर ॥८॥

होए परवस कुछ बुझए विचारि।
पाए विचार हार कओन नारि ॥१०॥

भनइ विद्यापति अछ परकार।
दंद-समुद होअ जीव दए पार ॥१२॥

१—जौं = यदि। जनु = नहीं। २—जुवती = नौजवान स्त्री। ३. ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो उँचे कुल की नहीं हो। ५—इ = यह। घन = (यहाँ) वरदान। विहि = ब्रह्मा। एक पए = एक ही। ६—थिरता = स्थिरता। दिहह = देना। अवसानहु = अन्तिम अवस्था में भी। ७—सामी = स्वामी, पति। नागर = चतुर। रसधार = रसिक। ८—परबस = दूसरे के वश। ९—१० यदि परवस भी हो जाय तो कुछ समझ-बूझ रक्खे, क्योंकि समझ-बूझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है। ११—अछ = है। परकार = उपाय। दंद = कलह। समुद = समुद्र। प्राण देकर कलह-रूपी समुद्र से पार हो जाओ।

[१५१]

कबहु रसिक सयँ दरसन होए जनु
दरसन होए जनु नेह।
नेह बिछोह जनु काहुक उपचए
बिछोह धरए जनु देह ॥ २ ॥

सजनी दुर करु ओ परसग।
पहिलहि उपजइत प्रेमक अकुर
दारुन विधि देल भग ॥४॥

दैवक दोप प्रेम जदि उपजए
रसिक सयँ जनु होए।
कान्ह से गुपुत नेह करि अब एक
सबहु सिखाओल मोय ॥ ६ ॥

एहन औपध सखि कहि नहि पाइअ
जनि जौवन जरि जाव।
असमजस रस सहए न पारिअ
इह कवि सेखर गाव ॥ ८ ॥

१—सयँ=से। जनु=नही। २—बिछोह=जुदाई। काहुक=किसी को। ३—दुर करु=अलग करो, बद करो। परसग=विपय, बातचीत। ४—दारुनक=ठोर। भग देल=तोड़ डाला, कुचल डाला। ५—दैवक दोप=विधि विडम्बना से। ६—कृष्ण में गुप्त प्रेम करके मैं एक शिक्षा लोगो को देती हूँ। ७—ऐसी दवा मैं कही भी नही पाती, जिसके खाने से यह जवानी जल जाती। ८—असमजस=दुविधा। सहए न पारिअ=सहा नहीं जाना।

[१५२]

जनम होअए जनु, जौं पुनि होई
जुवति भए जनमय जनु-कोई ॥२॥

होई जुवति जनु हो रसमंति
रसओ बुझए जनु हो कुलमंति ॥४॥

इ धन माँगओं विहि एक पए तोहि ।
थिरता दिहह् अवसानहु मोहि ॥६॥

मिलि सामी नागर रसधार ।
परवस जनु होए हमर पिआर ॥८॥

होए परवस कुछ बुझए विचारि ।
पाए विचार हार कओन नारि ॥१०॥

भनइ विद्यापति अछ परकार ।
दंद-समुद होअ जीव दए पार ॥१२॥

१—जौं = यदि । जनु = नहीं । २—जुवती = नौजवान स्त्री । ३. ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो । ५—इ = यह । धन = (यहाँ) वरदान । विहि = ब्रह्मा । एक पए = एक ही । ६—थिरता = स्थिरता । दिहह् = देना । अवसानहु = अन्तिम अवस्था में भी । ७—सामी = स्वामी, पति। नागर = चतुर । रसधार = रसिक । ८—परवस = दूसरे के वश । ६—१० यदि परवस भी हो जाय तो कुछ समझ-बूझ रक्खे, क्योंकि समझ-बूझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है । ११—अछ = है । परकार = उपाय । दंद = कलह । समुद = समुद्र । प्राण देकर कलह-रूपी समुद्र से पार हो जाओ ।

[१४३]

चरन-नखर मनिरंजन छाँद।
धरनि लोटायल गोकुलचाँद ॥२॥

ढरकि ढरकि परु लोचन नोर।
कतरूप मिनति कएल पहु मोर ॥४॥

लागल कुदिन कएल हम मान।
अबहु न निकसए कठिन परान ॥६॥

रोस तिमिर अत बेरि किए जान।
रतनक मय गेल गैरिक मान ॥८॥

नारि जनम हम न कएल भागि।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥१०॥

बिद्यापति कह सुन धनि राइ।
रोअसि काहे कह भल समुझाइ ॥१२॥

१,२—मेरे चरण की नख-रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुलचन्द्र (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया। ३—नोर = आँसू। ४—कतरूप = कितने प्रकार से। मिनति = विनय। पहु = प्रीतम। ६—निकसए = निकलता है। ७—८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई, रत्न को मैंने गेरू मिट्टी समझा। ९—भागि = भाग्य। १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। ११—राइ = राधा। १२—रोअसि = रोती है। काहे = किसलिये। भल समुझाइ = अच्छीतरह समझाकर।

[१५४]

घनि भेलि मानिनि सखि गन माँझ।
अनुनय करइत उपजए लाज ॥२॥

पिरितक आरति बिरति न सहई।
इंगित भंगिए दुहु सब कहई ॥४॥

राहि सुचेतनि कान्हु सयान।
मनहि समाघल मन अभिमान ॥ ६॥

अघर मुरलि जौं घएल मुरारि।
फोइ कबरि घरि बाँधि समारि ॥ ८॥

जौं निज पुर-पथ घएल मुरारि।
सखि लखि अनतए चलु वर नारि ॥१०॥

हरि जब छाया कर घनि पाय।
घनि संभ्रम बइसलि कर लाय ॥१२॥

कह कवि सेखर वुझय सयान।
इंगित रस पसारल पँचबान ॥१४॥

१—घनि = बाला। ३—आरति = आतुरता, शीघ्रता। प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं सहती। ४—इंगित भंगिए—इशारे से। ५—राहि = राघा। सुचेतनि = सुचतुरा। ६—समाघल = समाधन किया। ८—फोइ = खोलकर। कबरि = केश। घनि = बाला। समरि = सँभालकर। ९—पुर-पथ = गाँव का रास्ता। १०—अनतए = अन्यत्र। सखियों की ओर देखकर (वह चतुर स्त्री) दूसरी ओर चली। ११—जब कृष्ण ने (रास्ते में), राघा को पाकर, उस पर छाया की तब राघा झटपट उनका हाथ पकड़ बैठ गई।

[१५५]

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधव रतनहि मंदिर
निवसय सयनक सूख।
रस रस दारुन दंद उपजल
कान्ह चलल तब रूस ॥२॥

नागर-अंचल कर धरि नागरि
हसि मिनती करु आधा।
नागर-हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥४॥

देख सखि झूठक मान।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तब काहे रोखल कान ॥६॥

रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मधथ पँचबान।
आवसर जानि मनावथि राधा
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—रतनहि = रत्न का बना। निवसय = निवास करते हैं। सयनक मुख = शय्या के सुख में—मिलनानन्द में। २—रस-रस = धीरे धीरे। दारुन = कठोर। दंद = कलह। रूस = रूठकर। ३—अंचल = चादर की खूँट। कर = हाथ। ४—पाँचसर = कामदेव। हनलक = मारा। उरज = कुच। दरसि = देखकर। मन-बाधा = मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा। ६—रोखल = क्रुद्ध

[१५६]

एत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे ॥२॥

एकहि वचन वीच भेल रे।
हँसि पहु उतरो न देल रे ॥४॥

एकहि पलँग पर कान रे।
मोरे लेख दुर देश भान रे ॥६॥

जाहि वन केओ नहि डोल रे।
ताहि वन पिया हँसि बोल रे ॥८॥

धरब योगिनिया के भेस रे।
करब में पहुक उदेस रे ॥१०॥

भनइ विद्यापति भान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे ॥१२॥

हुआ। ७--समापि = समाप्त कर। रहस पसारल = काम-क्रीड़ा में लगा। मधथ = मध्यस्थ, पंच। ८—(उपयुक्त) समय जानकर राधा मनाने लगीं। भान = कहते हैं।

१—एक = इतने। छलि = थी। नव = नवीन। २—मीन = मछली। जेहन = जैसा। ३—वीच भेल = अन्तर पड़ गया। ४—पहु = प्रीतम। उतरो = उत्तर भी। ५—कान = कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर लेख = मेरे लिये। भान = मालूम होता है। ७—केओ = कोई। डोल = आता-जाता है। ९—धरब = धरूँगी। जोगिनियां = जोगिनि। १०—पहुक = प्रीतम का। उदेस = तलाश। ११—निदान = अन्त।

—::०::—

[१५५]

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधव रतनहि मंदिर
निवसय सयनक सुख ।
रस रस दारुन दद उपजल
कान्ह चलल तब रूस ॥२॥

नागर-अंचल कर धरि नागरि
हसि मिनती करु आधा ।
नागर हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥४॥

देख सखि झूठक मान ।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तब काहे रोखल कान ॥६॥

रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मयथ पँचबान ।
अवसर जानि मनावथि राधा
कवि विद्यापति मान ॥८॥

१—रतनहि = रत्न का बना । निवसय = निवास करते हैं । सयनक सुख = शय्या के सुख में—मिलनानन्द में । २—रस रस = धीरे-धीरे । दारुन = कठोर । दद = कलह । रूस = रूठकर । ३—अंचल = चादर की खूँट । कर = हाथ । ४—पाँचसर = कामदेव । हनलक = मारा । उरज = कुच । दरसि = देखकर । मन-बाधा = मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा । ६—रोखल = क्रुद्ध

[१५६]

एत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे ॥२॥

एकहि वचन वीच भेल रे।
हँसि पहु उतरो न देल रे ॥४॥

एकहि पलँग पर कान रे।
मोरे लेख दुर देश भान रे ॥६॥

जाहि वन केओ नहि डोल रे।
ताहि वन पिया हँसि वोल रे ॥८॥

धरब योगिनिया के भेस रे।
करब में पहुक उदेस रे ॥१०॥

भनइ विद्यापति भान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे॥१२॥

हुआ। ७--समापि = समाप्त कर। रहस पसारल = काम-क्रीड़ा में लगा। मधथ = मध्यस्थ, पंच। ८—(उपयुक्त) समय जानकर राधा मनाने लगीं। भान = कहते हैं।

१—एक = इतने। छलि = थी। नव = नवीन। २—मीन = मछली। जेहन = जैसा। ३—बीच भेल = अन्तर पड़ गया। ४—पहु = प्रीतम। उतरो = उत्तर भी। ५—कान = कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर लेख = मेरे लिये। भान = मालूम होता है। ७—केओ = कोई। डोल = आता-जाता है। ९--धरब = धरूँगी। जोगिनियां = जोगिनि। १०—पहुक = प्रीतम का। उदेस = तलाश। ११—निदान = अन्त।

—::०::—

[१५७]

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त।
पुन कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥२॥

सबतहु सुनिये अइसन बेवहार।
पुनु टूटए पुनु गाँथिए हार ॥४॥

ए कन्हु कन्हु तोहहि सयान।
बिसरिए कोप करए समाधान ॥६॥

प्रेमक अंकुर तोहे जल देल।
दिन-दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥८॥

तुअ गुन न गुनल सउतिन आछ।
रोपि न काटिए विषहुक गाछ ॥१०॥

जे नेह उपजल प्रानक ओल।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥

जगत बिदित भेल तोह हम नेह।
एक परान कएल दुइ देह ॥१४॥

भनइ विद्यापति न कर उदास।
बड़क वचन करिए बिसवास ॥१६॥

१—२—जहाँ प्रेमरस है, वहीं दौरात्म्य कलह भी है। अत: गुणवान् एक बार टूटने पर पुन: प्रीति करते हैं। ३—सबतहु = सर्वत्र ही। ६—समधान = समाधान। ७—तोहे = तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन कर लाये। १०—विषहुक गाछ = विष का भी वृक्ष। ११—प्रानक ओल = प्राणों की ओर, अन्तस्तल में। १२—दुर = दूर, भिन्न। १३—तोह हम = तुम्हारा और मेरा।

[१५८]

की हम साँझक एकसरि तारा
भादव चौठिक ससी।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हसी ॥२॥

साए साए कहह कहह कन्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे ॥
न मोयँ कवहु तुम अनुगति चुकलिहुँ
बचन न बोलल मंदा।
सामि समाज प्रेम अनुरंजिए
कुमुदिनि सन्निधि चंदा ॥५॥

भनइ बिद्यापति सुनु वर जौवति
मेदिनि मदन समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देबि रमाने ॥७॥

१-२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँ। (जिसे लोग देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है।) ६—साए = सखि। कहह = कहो। कन्हु = श्रीकृष्ण। ४—अनुगति = पीछे जाना, आज्ञा मानना। सामि = स्वामी, पति। अनुरंजिए = अनुरंजन किया, निभाया। सन्निधि = निकट। ७—मेदिन-मदन = पृथ्वी के कामदेव।

[१५९]

करतल कमल नयन ढर नीर।
न चेतए अभरन कुंतल चीर ॥२॥

तुअ पथ हेरि-हेरि चित नहिं थीर।
सुमिरि पुरुब नेहा दगध सरीर ॥४॥

कत परि माधव साधव मान।
विरही जुबति माँग दरसन दान ॥६॥

जल-मध कमल गगन-मध सूर
आँतर चान कुमुद कत दूर ॥८॥

गगन गरज मेघ सिखर मयूर,
कत जन जानसि नेह कत दूर ॥१०॥

भनइ विद्यापति विपरित मान।
राधा बचन लजाएल कान ॥१२॥

१—करतल = हथेली। कमल = (मुख)। नीर = आँसू। २—चेतय = सँभालती है। अभरन = आभरण, गहने। कुन्तल = केश। चीर = वस्त्र। ३—तुअ पथ = तेरी राह। हेरि-हेरि = देख-देखकर। थीर = स्थिर। ४—पुरब = पहला। दगध = जलता है। ५—कत परि = कब तक। साधव मान = मान किये रहोगे। ७—मध = मध्य। सूर = सूर्य। आँतर = अन्तर, बीच। चान = चन्द्रमा। कुमुद = कुईं, कुमुदिनी। कत = कितना ९—गरज = गरजना है। सिखर = पहाड़ की चोटी। १०—जन = आदमी। जानसि = जानते हैं। ११-१२—यह विपरीत मान कैसा? (मान स्त्रियाँ करती हैं, पुरुष नहीं) राधा का यह वचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

[१६०]

वड़ई चतुर मोर कान।
साधन विनहि भाँगल मझु मान ॥२॥

जोगी वेस धरि आओल आज।
के इह समुझव अपरुब काज ॥४॥

सास वचन हम भीख लइ गेल।
मझु मुख हेरइत गदगद भेल ॥६॥

कह तव—'मान-रतन दइ मोय'।
समझल तव हम सुकपट सोय ॥८॥

जे किछु कहल तव कहइत लाज।
कोई न जानल नागर-राज ॥१० ॥

विद्यापति कह सुन्दरि राई।
किए तुह समुझवि से चतुराई ॥१२॥

२—भाँगल = तोड़ा। मझु = मेरा। ३—आओल = आया। ४—के = कौन। अपरुव = अपूर्व। ५—सास वचन = सास के कहने से। लइ गेल = ले गई। ६—हेरइत = देखते। ७—तव कहा—'मुझे मान-रूपी रत्न दो' ८—सोय = वह। १०—जानल = जाना। नागर-राज = चतुरों का बादशाह। ११—राई = राधा। १२—किए = कैसे।

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।

[१६१]

जटिला सास फुकरि तहि बोलल
बहुरि बेरि काहे ठाढ़ि।
ललिता कहल अमंगल सूनल
सति पतिभय अवगाढ़ि ॥२॥

सुनि कह जटिला घटल की अकुसल
घर सयँ बाहर होय।
बहुरिक पानि धरि हेरह जोगी
किये अकुसल कह मोहि ॥४॥

जोगेस्वर फेरि बहुरिक पानि धरि
कुसल करब बनदेब।
इहे एक अंक बंक बिसंकओ
वन मधि पसुपति सेब ॥६॥

१—फुकरि = चिल्लाकर। बहुरि = बहुरिया, पतोहू। बेरि = बिलम्ब। २—अवगाढ़ि = निश्चय। जटिला सास चिल्लाकर बोली—बहुरिया, उतनी देर से वहाँ क्यों खड़ी हो? ललिता ने कहा—कुछ अमंगल सुना जा रहा है। सती को पति-भय निश्चित है। ३—घटल की अकुशल = कौन-सा अमंगल घटा है? ४—बहुरिक पानि = बहुरिया के हाथ। हेरह = देखो। २-६—अंक = रेखा। बंक = टेढ़ा। बिसंकओ = शंकायुक्त। मधि = में। तब योगेश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर कहा—वन देवता कुशल करें, यही हाथ की एक रेखा कुछ टेढ़ी है, जिसमें अकुशल की आशंका है। इसके निवारण के लिये वन में पशुपति की सेवा करनी होगी।

पुजनक तंत्र-मंत्र बहु आछए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओब
तुहु बीज कर इह दान ॥८॥

एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन भेल एक ठाम।
मनमथ मंत्र पढ़ाओल दुहु जन
पूरल दुहु मनकाम ॥१०॥

पुनु दुहु जन मंदिर सयँ निकसल
जटिला सयँ कह भाखी।
जब इह गौरि अराधन जाओब
विधवा जन घर राखी ॥१२॥

एत कहि सबहु चलल निज मंदिर
जोगी चरन प्रनाम।
बिद्यापति कह नटवर सेखर
साधि चलल मन काम ॥१४॥

७-८—पूजा के बहुत से मंत्र-तंत्र हैं। हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा—तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा—तुम इसे बीजदान दो— झाड़-फूँक कर दो। ९—पइसल = प्रवेश किया। ११—सयँ = से। १२—जब यह गौरी की आराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख ले—विधवा इसके साथ न जाय। [बेचारी सास विधवा थी; अतः बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा होगी।] १४—मनकाम = मनःकामना, इच्छा।

[१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरहि ऐसे पुकारि।
अरुन वसन पैन्हि जटिल बेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ॥२॥

सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर बधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मंदिर लइगेल ॥४॥

देवदेयासिनि कान।
जटिला बचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ बयान ॥६॥

कह तब अतनु देव इथे पाओल
हृदि-मधि पइसल काल।

१—देवमयासिनि = वह स्त्री जो झाड़-फूँक करती है। आओल = आई। नगरहि = नगर में। १—अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिल = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकित = आश्चर्यित। ४—बधूक = बधू को, पतोहू को। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही की तरह को। लइ गेल = (श्रीकृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि—चंद्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट ही। एकदीठि = एकटक। बयान = मुख। ७—अतनुदेव = कामदेव। इथे = इसे। हृदि-मधि = हृदय में पइसल = प्रवेश किया।

निरजन होइ मंत्र जब झाड़िए
तब इह होएब भाल ॥८॥

एत सुनि जटिला घर दोहे लेअल
निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ॥१०॥

बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब सेहो देवा।
देवदेयासिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझब केवा ॥१२॥

जटिला बहुत भकति करि हरखिल
कतक भीख आनि देल।
कह कविसेखर भीख लिए तब
सेहो देयासिनि गेल ॥१४॥

८—निरजन = एकान्त में। झाड़िये = झाड़-फूँक करूँ। इह = यह। भाल = अच्छी। ९—एत = ऐसा। जटिला = सास। घर दोहे लेअल = दोनों को घर में ले आई। ठाम = जगह। १०—निकसल = निकल गई। बइसल = बैठी। मनकाम = मनःकामना, इच्छा। ११—भागल = भाग गया। सेहो = वह। १२—केवा = किसने ?—अर्थात् किसी ने नहीं। १३—भकति = भक्ति। कतक = कितना (बहुत)। आनि देल = ला दिया। १४—गेल = गई।

"कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता है।"

[१६३]

वर नागर साजइ नागरि बेसा।
मुकुट उतारि सीमंत सँवारल
बेनी बिरचित केसा ॥२॥

चंदन धोइ सिंदुर भाल रंजल
लोचन अंजन अंका।
कुंडल खोलि कर्नफूल पहिरल
भरि तनु केसर-पंका ॥४॥

बेसर खचित सतेसरि पहिरल
चूरि कनक कर कंजे।
चरन-कमल पास जावक रंजन
तापर मंजिर गंजे ॥६॥

कंचुकि माँझ कदम्ब-कुसुम भरि
आरम्भन कुच आभा।
अरुनाम्बर वर सारी पहिरल
यत्र विलोकन सोभा ॥८॥

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे हैं। २—सीमंत = माँग। विरचित = बनाया। ३—रंजन = अनुरञ्जित करते हैं, लगाते हैं। अंका = रेखा। ४—केसर पंका = केशर का लेप। ५—चूरि कनक कर कंजे = कमल-रूपी हाथों में सोने की चूड़ियाँ। ६—जावक = महावर। गंजे = गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर आभायुक्त उभरते हुए कुच बनाये। ८—अरुनाम्बर = लाल कपड़ा।

धरि परिवादिनि स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने।
पहिलहि वाम चरण तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन माने ॥१०॥

ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठारि।
कर धरि यंत्र तंत्र सँवारत
को इह लखइ न पारि ॥१२॥

राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भइ गेल साधा।
ए नव यौवनि नविन विदेसिनि
आओ पुकारइ राधा ॥१४॥

सुनइत स्याम हरखि चित आओल
उठि धनि आदर देल।
बाँह पकड़ि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ॥१६॥

९—परिवादिनि = वीणा। पयाने = जाना। १० = पहले बायाँ पैर बढ़ाया, क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है। ११—एकलि = अकेली। १२—कर = हाथ। यंत्र = वीणा। तंत्र = तार। को इह = कोई थी। लखइ न पारि = देख नहीं सकती। १३—राइक = राधा के। साधा = इच्छा। १५—धनि = बाला। १६—बाँह = हाथ। कत-कत = कितना।

× × ×

जबहि बजाओल बीन सुमाधुरि
रीझि देहल मनि - माल।
अइसे बजावए हमर जंतरिया
मोहन जंत्र रसाल ॥२०॥

गाम गाम कइ कुल अवलम्बन
व्रज आगम किए काजा
सुखम इ नाम, मथुरपुर जदुकुल
गुनीजन पीड़इ राजा ॥२॥

धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
माँगह मानस जोय।
मनोरथ कर्म जाँचलि जदि सुन्दरि
मान रतन देह मोय ॥२४॥

हँसि मुख मोड़ि पीठि देइ बइसल
कान्ह कएल धनि कोर।
टूटल मान बढ़ल कत कौतुक
भूपति के करु ओर ॥२६॥

१९—देहल = दिया। २०—बजावए = बजाता है। जंतरिया = [illegible]ा बजानेवाला। यंत्र = वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयो है, गाँव [illegible]रा, कुल यदुवंश, वहाँ के राजा गुणियो को पीड़ा देते हैं, इसलिये [illegible] हूँ। २३—मानस = हृदय। २४—मान रतन = मानरूपी रत्न। [illegible] = दो। २५—कोरगोद। २६—भूपति = शिवसिंह।

विदग्ध-विलास

[१६४]

आजुक लाज तोहे कि कहब माई ।
जल देइ धोइ जदि तबहु न जाई ॥२॥

नहाइ उठल हम कालिंदी तीर ।
अंगहि लागल पातल चीर ॥४॥

तैं बेकत भेल सकल सरीर ।
ताहि उपनीत समुख जदुबीर ॥६॥

विपुल नितम्ब अति बेकत भेल ।
पालटि तापर कुंतल देल ॥८॥

उरज उपर जब देइल दीठ ।
उर मोरि बइसल हरि करि पीठ ॥१०॥

हँसि मुख मोड़ए ढीठ कन्हाई ।
तनु-तनु झाँपइते झाँपल न जाई ॥१२॥

विद्यापति कह तुहू अगेआनि ।
पुनु काहे पलटि न पैसलि पानि ॥१४॥

१—आजुक = आज का । माई = अरी दैया । २—जल दइ = जल देकर । ३—नहाइ = स्नान कर । ४—पतली साड़ी शरीर से सट गई । ५—तैं = इससे । बेकत = व्यक्त, प्रकट । ६—ताहि = वहीं । उपनीत = बैठा हुआ । जदुबीर = कृष्ण । ७, ८—पालटि = पर्दा । तापर = उसपर । कुंतल = केश । ९—देहल दीठ(= श्रीकृष्ण) ने दृष्टि डाली । १०—मोरि = मोड़कर । बइसल = मैं बैठ गई । हरि करि पीठ = कृष्ण की ओर पीठ करके । १२—तनु-तनु = अंग-अंग । १४—पुन: लौटकर पानी में क्यों न पैठ गई ?

[१६५]

हम अबला सखि किये गुन जान।
से रसमय सनु रसिक सुजान ॥२॥

कतहु जतन मोर कोर बइसाई।
बाँधल बेनि से कबरि खसाई ॥४॥

कचुक देल हृदय पर मोर।
परसि पयोधर भै गेल भोर ॥६॥

कठ पहिराओल मनिमय हार।
अंग विलेपन कुंकुम भार ॥८॥

बसन पेन्हाओल कए कत छंद।
किंकिनि जालहि नीबि निबध ॥१०॥

निज कर पल्लव मञ्जु मुख माज।
नयनहि कयल सु काजर साज ॥१२॥

अलक तिलक दए चोलि निहारि।
कह कवि सेखर जाँओ बलिहारि ॥१४॥

१—किये गुन जान = क्या गुन जानने गई। से = वह। ३—कतहु = कितने। मोर = मुझे। कोर बइसाई = गोद में बि[illegible]कर। ४—कबरि = केश। खसाईखो = लकर। ५—कचुक = चो[illegible] ६—परसि = स्पर्श कर, छूकर। पयोधर = कुच। भोर = बेसु[illegible] ८—बिलेपने = लेप किया। कुकुम = केसर। ९—पेन्हाओल = पहनाय[illegible] कत कत छंद = कितने छल करके। १०—किंकिनि जाल = करधने[illegible] नीबि निबध = नीवी को बाँधा। १२—माज = माँजना—पोंछन[illegible] १३—अल्क तिल्क = महावर और टीका। चोलि = कचुक

[१६६]

ए धनि रंगिनि कि कहव तोय।
आजुक कौतुक कहल न होय ॥२॥

एकलि सुतल छलि कुसुम सयान।
दोसर मनमथ कर-धनुबान ॥४॥

नूपुर झुन-झुन आओल कान।
कौतुक मुँदि हम रहल नयान ॥६॥

आओल कान्हु वइसल मझु पास।
पास मोड़ि हम लुकाओल हास ॥८॥

कुंतल कुसुमदाम हरि लेल।
वरिहा माल पुनहि मोहि देल ॥१०॥

नासा मोतिम गीमक हार।
जतने उतारल कत परकार ॥१२॥

कंचुकि फुगइत पहु भेल भोर।
जागल मनमथ बाँधल चोर ॥१४॥

कवि विद्यापति एह रस भान।
तुहू रसिका पहु रसिक सुजान ॥१६॥

१—रंगिनि = सुरसिका। ३—एकली = अकेली। सुतल छलि = सोई थी। कुसुम सयान = पुष्पशय्या पर। ३—मनमथ = कामदेव। कर = हाथ। ५—आओल = आया। ७—वइसल = बैठा। मझु = मेरे। ८—मुँह फेरकर मैंने अपनी हँसी छिपाई। कुंतल = केश। कुसुमदाम = फूल की माला। हरि लेल = हर लिया, उतार लिया। १०—वरिहा = मयूर की पूँछ। ११—गीमक = गले का।

[१६७]

हरि धरि हार चऔंकि परु राधा।
आध माधव कर गिम रहु आधा ॥२॥

कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी।
हरि हँसि रहल बदन बिधु हेरी ॥४॥

मधुरिम हास गुपुत नहि भेला।
तखने सुमुखि-मुख चुम्बन देला ॥६॥

करु धरु कुच, आकुल भेलि नारी।
निरखि अधर मधु पिबए मुरारी ॥८॥

चिकुर - चमर झरु कुसुमुक धारा।
पिबि कहु तम जनि बम नव तारा ॥१०॥

विद्यापति कइ सुन्दरि बानी।
हरि हँसि मिललि राधिका रानी ॥१२॥

१३—फुगइत = खोलते ही। पहु = प्रीतम। भोर = बेसुध। १५—भान = कहते हैं।

१ २—राधिका सोई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया। राधिका चौंक पड़ी। हार टूट गया। आधा हार कृष्ण के हाथ में रहा और आधा राधिका के गले में। ३—कपट कोप = झूठमूठ का क्रोध। दिठि धरु फेरी = आँखें फेर लीं। ४—बदनविधु = मुखचन्द। हेरी = देखना। ५, ६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया। ८—अधर = नीचे का ओठ। ९—चिकुर = केश। १०—मानो अंधकार तारे को निगलकर पुन उसे उगल रहा हो।

[१६८]

सासु सुतल छलि कोर अगोर।
तहि अति ढीठ पीठ रहु चोर ॥२॥

कत कर आखर कहब बुझाई।
आजुक चातुरि कहल कि जाई ॥४॥

नहि कर आरति ए अबुझ नाह।
अब नहि होयत बचन निरबाह ॥६॥

पीठ आलिंगन कत सुख पाव।
पानिक पियास दूध किए जाव ॥८॥

कत मुख मोरि अधर रस लेल।
कत निसबद कए कुच कर देल ।.१०॥

समुख न जाए सघन निसोआस।
किए कारन भेल दसन विकास ॥१२॥

जागल सास चलल तब कान।
न पूरल आस विद्यापति भान ॥१४॥

१—सुतल छलि = सोई थी। कोर अगोर = अपनी गोद में लेकर। २—तहि = वहाँ भी। ३—शब्दों में इसे कहाँ तक समझा कर कहूँ! ४—कहल कि जाई = क्या कहा जाता है? ५—आरति = आतुरता, शीघ्रता। नाह = प्रीतम। ७, ८—मेरी पीठ के आलिंगन से उन्हें क्या सुख मिला—पानी की प्यास कहीं दूध से जाती है? ९—मोरि = मोड़कर। १०—निसबद कए = निःशब्द होकर, चुपचाप। ११—निसोआस = निश्वास, साँस। ऊँची साँस सम्मुख नहीं छोड़ता कि कहीं उस साँस के स्पर्श से मेरी सास न

[१६६]

कि कहब हे सखि आजुक रग।
सपनहि सूतल कुपुरुप संग ॥२॥

बड़ सुपुरुख बलि आओल धाई।
सूति रहल मञु आँचर झँपाई ॥४॥

काँचलि खोलि आलिंगन देल।
मोहे जगाए आपु निंद गेल ॥६॥

हे विहि हे विहि बड़ दुख देल।
से दुख रे सखि अबहु न गेल ॥८॥

भनए विद्यापति इह रस धंद।
भेक कि जान कुसुम-मकरंद ॥१०॥

जग जाय। १२—न मालूम क्यो, उसी समय दाँत चमक उठे। १३—कान = कृष्ण। १४—न पूरल आस = आशा नही पूरी हुई।

१ – रग = रंग वर्त्ता। २—आज मैं स्वप्न में—भ्रम में आकर—कुपुरुप के साथ सोई। ३—बलि = समझकर। आओल धाइ—दौडकर आई। ४—आँचर झँपाई = आँचल से ढँककर। ५—काँचलि = चोली। आलिंगन देल = छाती से लगाया। ६—मुझे जगाकर पुन आप सो रहा। ७—विहि = ब्रह्मा। ९—रस धंद = रस की विचित्रता। १०—भेक = मेढक, बेंग। कि = क्या। कुसुम-मकरद = फूल का पराग।

—:०:—

भ्रमरहिता सा कचवत्स्त्रीणां कुचवच्च सरसहिता।
लसदक्षरपीयूषाधरवत्कविता महात्मना जीयात् ॥"

[१७०]

आकुल चिकुर वेढ़लि मुख सोभ।
राहु कएल ससि-मंडल लोभ ॥२॥

बड़ अपरुब दुइ चेतन मेलि।
विपरित रति कामिनि कर केलि ॥४॥

कुच विपरीत विलम्बित हार।
कनक कलस बम दूधक धार ॥६॥

पिय मुख सुमुखि चूम तजि ओज।
चाँद अधोमुख पिबए सरोज ॥८॥

किंकिन रटत नितम्बनि छाज।
मदन-महारथ बाजन बाज ॥१०॥

फूजल चिकुर माल धरु रंग।
जनि जमुना मिलु गंगतरंग ॥१२।

वदन सोहाओन स्रम-जल बिन्दु।
मदन मोति लए पूजल इन्दु ॥१४॥

भनइ विद्यापति रसमय बानी।
नागरि रम पिय अभिमत जानी ॥१६॥

१—आकुल=व्यग्र, चंचल, छिटके हुए। चिकुर=केश। वेढ़िल=घेरा हुआ। ३—दुहु चेतन=दो चतुर (राधा-कृष्ण)। ५—विलम्बित=लटका हुआ। ६—बम=वमन करता है, उगलता है। ७—ओज=(यहाँ) लाज। ९—रटत=बजती हुई। नितम्बिनि=स्त्री। छाज=शोभती है। ११—फूजल=खुले हुए। ११—रम=रमती है। अभिमत=इच्छा।

[१७१]

विगलित चिकुर मिलित मुखमण्डल
चाँद बेढल घनमाला।

मनिमय कुण्डल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक बहि गेला ॥२॥

सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल-दाता।
रति विपरीत समर जदि राखवि
कि करब हरि हर-धाता ॥४॥

किंकिन किनिकिनि कंकन कनकन
घनघन नूपुर बाजे।

रति-रन मदन परामव मानल
जय-जय डिमडिम बाजे ॥६॥

तिल एक जघन सघन रव करइत
होअल सैनक भंग।

विद्यापति कवि ई रस गाअए
जामुन मिलली गंग ॥८॥

१—विगलित = बिखरे हुए। घनमाल = मेघसमूह। ३—स्रवन = कान। दुलित = डोलता हुआ। ४—समर = युद्ध। राखवि = रखा करोगी। धाता = ब्रह्मा। ६—युद्ध में कामदेव हार गये हैं उन्हीं की जय भेरी बज रही है। ७—तिल एक = एक क्षण के लिये। सघन जघन = पुष्ट जाँघ। रव = शब्द। होअल = हो गया ८—जामुन = यमुना।

[१७२]

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर।
सपन कि परतेख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥२॥

तड़ित - लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ु तारा ॥४॥

अम्बर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले।
खरतर वेग समीरन संचरु
चंचरिगन करु रोले ॥६॥

प्रलय - पयोधि - जले तन झाँपल
इ नहि जुग अवसान।
के विपरीत कथा पतिआयत
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—किछु नहि फूर = कहने की स्फूर्ति नहीं होती। २—परतख = प्रत्यक्ष। किए = क्या। नियरे = निकट। ३—तड़ित-लता = बिजुली (राधा)। तल = नीचे। जलद = मेघ। (कृष्ण)। आँतर = वीच में। सुरसरि धारा = गंगा की धारा (हार)। ४—तरल तिमिर = चंचल, अंधकार (केश)। ससि = चन्द्रमा (मुख) सूर = सूर्य (सिन्दूर-विन्दु)। खसि-पड़ु = गिर पड़े। तारा = नक्षत्र (माथे पर के फूल)। ५—अम्बर (१) आकाश वस्त्र।

(१७१)

दुहुक सञुत चिकुर फूजल।
दुहुक दुहू बलाबल बूझल ॥२॥

दुहुक अधर दसन लागल।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥४॥

दुअओ अधर करए पान।
दुहुक कठ आलिगन दान ॥६॥

दुअओ केलि सयँ सयँ भेलि।
सुरत सुखे विभावरि गेल ॥८॥

दुअओ सअन चेत न चीर।
दुअओ पियासल पीवए नीर ॥१०॥

भन विद्यापति ससय गेल।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

धराधर = (१) पर्वत (२) कुच। उन्टलउ = लट पड़ा। धरनी = (१) पृथ्वी, (२) नितम्ब। ६—खरतर = तीव्र। समीरन = (१) हवा, (२) निश्वास। चचरिगन = (१) भ्रमर, (२) किंकिणी, आदि। रोले = शोर। ७—प्रनय पयोधि = (१) प्रेम का समुद्र, (२) पसीना। जुग अवसान = युग का अन्त। विपरीत रति का अद्भुत वर्णन है।

१—सञुत = साथ ही-साथ। चिकुर = केश। फूजल = खुल गया। २—बलाबल = ताकत और कमजोरी। ३—अधर = नीचे का ओष्ठ। दसन = दाँत। ७—केलि = कामक्रीड़ा। सयँ सँय = साथ-ही-साथ। ८—विभावरि = रात। ९—दोनों ही शय्या पर अपने अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते। १०—पियासल = प्यासा।

वसंत

[१७४]

माघ मास सिरि पंचमी गँजाइलि
नवम मास पंचम हरुआई।
अति घन पीड़ा दुख बड़ पाओल
बनसपति भेलि धाई हे॥२॥
सुभ खन वेरा सुकुल पक्ख हे
दिनकर उदित समाई।
सोरह सम्पुन वतिस लखन सह
जनम लेल ऋतुराई हे॥४॥
नाचए जुवतिजना हरखित मन
जनमल वाल मधाई हे।
मधुर महारस मङ्गल गावए
मानिनि मान उड़ाई हे॥६॥

१—सिरिपंचमी = माघ शुक्ल पंचमी। गँजाइल = पूर्ण गर्भा हुई। नवम मास = वैसाख में वसंत का अंत होता है, जेठ से माघ तक नौ महीने हुए। पंचम हरुआई = पाँचवाँ दिन होने पर। (वैद्यक के अनुसार नौ महीने पाँच दिन पर पुत्र वालक पैदा होता है)। २—घन = अधिक। ३—खन = क्षण। वेरा = वेला, समय। सुकुल पक्ख = शुक्लपक्ष। दिनकर = सूर्य। उदित समाई = उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन = सोलह अंगों से सम्पूर्ण। वतिस लखन = वतीस लक्षण। ऋतुराई = वसंत ५—जनमल = जन्म लिया। मधाई = माधव (वसंत)। ६—उड़ाई = उड़ा ले गया नष्ट किया।

बह मलयानिल ओत उचित है
नव धन भओ उजियारा।
माधवि फूल भेल मुकुता तुल
ते देल वन्दनवारा ॥८॥
पीअरि पाँड़रि महुअरि गावए
काहरकार धतूरा।
नागकेसर—सख धूनि पूर
तकर तान समतूरा ॥१०॥
मधु लए मधुकर बालक दएहलु
कमल - पखरी - लाई।
पओनार तोरि सूत बाँधल कटि
केसर कएलि बघनाई ॥१२॥
नव - नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदम्बक माला।
बैसलि भमरी हरउद गावए
चक्का चन्द निहारा ॥१४॥

७—मलय पवन बह रहा है, उसमे ओत करना उचित है। (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है, अत नवीन मेघ छा गये)। ८—मुकुता तुल—मुक्ता के समान। पीअरि पाँड़रि—फूल विशेष। महुअरि=गीत विशेष। काहरकार=तुरही। तकर=उसका। समतूरा=समान। ११—(जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दएहलु=ला दिया। १२—पओनार=पद्मनाल। कटि=कमर में। (लड़के की कमर में सूत बाँधा जाता है)। बघनाई=बाघनख (लड़के की कमर

कनअ केसुअ सुति-पत्र लिखिए हलु
रासि नछत कए लोला।
कोकिल गनित-गुनित भल जानए
रितु वसंत नाम थोला ॥१६॥

× × × ×

वाल वसंत तरुन भए धाओल
वढ़ए सकल संसारा ॥१८॥
दखिन पवन घन अंग उगारए
किसलय कुसुम परागे।
सुललित हार मजरि घन कज्जल
अखितौं अंजन लागे ॥ २० ॥
नव वसंत रितु अगुसर जौवति
विद्यापति कवि गावे।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
सकल कला मनभावे ॥२२॥

में पहनाया जाता है)। १३—ओछाओल = विछाया। सिर माला=कदम्ब की माला सिरहाने (तकिये के रूप में) रक्खी। १४—हरउद = पलने का गीत। भमरी = भ्रमरी। १५—कनअ = सोना। केसुअ = पलास। सुति-पत्र = जन्मपत्र। नछ्त = नक्षत्र। १६—कोकिल गणित की गणना खूब जानती थी; उसीने वसंत नाम रक्खा। १८—बीच की एक पंक्ति गायब है। १६-२०—दक्षिण पवन किसलय और पुष्प-पराग लेकर उस शरीर में उवटन लगाता है। मंजरी की सुन्दर हार गले में है, मेघ ने उसकी आँखों में काजल लगा दिया।

[१७५]

आएल रितुपति राज बसंत।
धाओल अलिकुल माधवि-पंथ ॥ २ ॥
दिनकर - किरन भेल पौगंड।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ॥ ४ ॥
नृप - आसन नव पीठल पात।
कांचन कुसुम छत्र धरु माथ ॥ ६ ॥
मौलि रसाल-मुकुल भेल ताय।
समुखहि कोकिल पञ्चम गाय ॥ ८ ॥
सिखिकुल नाचत अलिकुल यंत्र।
द्विजकुल आन पढ़ आसिख मंत्र ॥१०॥
चन्द्रातप उड़े कुसुम पराग।
मलय पवन सह भेल अनुराग ॥१२॥

१—आएल = आया। २—धाओल = दौड़ा। अलिकुल = भ्रमर-समूह। माधवि-पंथ = माधवी की ओर। ३—दिनकर = सूर्य। भेल = हुआ। पौगंड = किशोरावस्था, कुछ कुछ तीव्र। हेमदंड = सोने का डंडा, आसा। "मदन-महीपति कनकदंड रुचि केसर-कुसुमविकासे—गीतगोविन्द।" ५—पीठल = वृक्ष विशेष, पिठवा। पात = पत्ता। कांचनकुसुम = चम्पा। ७—मौलि = किरीट। रसाल मुकुट = आम की मंजरी। ताय = उसके। ९—सिखि = मोर। अलिकुल यंत्र = भौंरे बाजा बजा रहे हैं। १०—द्विजकुल = (१) पक्षी, (२) ब्राह्मण (पक्षी को द्विज इसलिये कहा जाता है कि उसका भी जन्म दो बार होता है, एक बार अंडे के रूप में, पुन

कुंदवल्ली तरु धएल निसान ।
पाटललतून असोक-दल वान ॥१४॥
किंसुक लवँग-लता एक संग ।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥१६॥
सैन साजल मधु मखिका कूल ।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥१८॥
उधारल सरसिज पाओल प्रान ।
निज नव दल करु आसन दान ॥२०॥
नव वृन्दावन राज बिहार ।
बिद्यापति कह समयक सार ॥२२॥

पक्षी के रूप में)। आन = आकर। आसिखमंत्र = आशीर्वादात्मकश्लोक। ११—चंद्रातप = चंदोवा। फूलों के पराग ही चँदोवे से उड़ रहे हैं। १२—मलयपवन = मलयाचल से आनेवाली हवा, दक्षिण पवन। सह = साथ। कुंदवल्ली = वृक्ष-विशेष। निशान = पताका। पाटल तून = पाटल के पत्ते ही तूण (तरकस) हैं। असोक-दल वान = अशोक के पत्ते वाण हैं। १५—किंसुक = पलास। [धनुष के समान] लवँगलता [ताँत के समान]। १६—आगे दल भंग = पहले ही सैन्यभंग हो गया। १७—कूल = कुल। १९—उधारल = उद्धार किया। पाओल = पाया। २०—दल = पत्ता।

अर्थो गिरामपिहितः पिहितश्च कश्चित्।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभः॥
नान्ध्रीपयोधरइवातितरां प्रकाशो।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढः॥

[१७६]

नव बृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव विकसित फूल ।
नवल बसंत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कूल ॥२॥
विहरइ नवलकिशोर ।
कालिंदी-पुलिन कुंज बन सोमन
नव नव प्रेम-विभोर ॥४॥
नवल रसाल-मुकुल-मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय ।
नवयुवती गन चित उमताअई
नव रस कानन धाय ॥६॥
नव जुवराज नवल बर नागरि
मीलए नव नव भाँति ।
निति निति ऐसन नव नव खेलन
विद्यापति मति माति ॥८॥

१—नव = नवीन । विकसित = खिले हुए । २—मलयानिल = मलय-पवन । मातल = पागल बना । अलिकूल = भौंरे । ३—विहरइ = विहार करता है । नवलकिशोर = युवक कृष्ण । ४—कालिंदी = यमुना । पुलिन = किनारे । सोभन = सुशोभित । प्रेम-विभोर = प्रेम में बेसुध । ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी नई कोयल गा रही है । ६—उमताअई = उन्मत्त हो जाता है । ८—ऐसन = इस प्रकार का । खेलन = क्रीड़ा । मति = मत्त बनी ।

[१७७]

लता तरुअर मंडप जीति ।
निरमल ससधर धवलिए भीति ॥२॥
पउँअ नाल अइपन भल भेय ।
रात परीहन पल्लव देल ॥४॥
देखइ माइ हे मन चित लाय ।
वसन्त-विवाह कानन-थलि आय ॥६॥
मधुकरि-रमनी मंगल गाव ।
दुजवर कोकिल मंत्र पढ़ाव ॥८॥
करु मकरंद हथोदक नीर ।
विधु बरिआती धीर समीर ॥१०॥
कनअ किसुक मुति तोरन तूल ।
लावा विथरल वेलिक फूल ॥१२॥
केसर कुसुम करु सिंदूर दान ।
जओतुक पाओल मानिन मान ॥१४॥
खेलए कौतुक नव पँचवान ।
विद्यापति कवि दृढ़ कए भान ॥१६॥

१—लता और वृक्ष ने मानों मंडप को जीत लिया—लता और वृक्ष ही मंडप है । २—निरमल = स्वच्छ । ससधर = चन्द्रमा । धवलिए = उज्ज्वल कर दिया (चूना पोत दिया) । भीति = दीवार । ३—पउअ नाल = पद्मनाल, कमल का नाल । अइपन = ऐपन (जमीन पर का मांगलिक चित्र) । ४—रात = लाल । परीहन = परिधान, वस्त्र । ५—माइ हे = अरी मैया । ६—कानन थलि = वनस्थली । ७—मधुकरि-रमनी =

[१७८]

नाचहु रे तरुनी तजहु लाज ।
आएल बसन्त रितु बनिक राज ॥२॥
हस्तिनि, चित्रिनि, पदुमिनि नारि ।
गोरी सामरी एक बूढ़ि बारि ॥३॥
विविध भाँति कएलन्हि सिंगार ।
पहिरउ पटोर गृम झूल हार ॥६॥
केओ अगर चन्दन घसि भर कटोर ।
ककरहु खोईंछा कपुर तमोर ॥८॥
केओ कुमकुम मरदाव आँग ।
ककरहु मोतीअ भल छाज माँग ॥१०॥

मँग भर श्री । ८—द्विजवर = द्विज श्रेष्ठ । ९—हथोदक = हस्तोदक, जो पानी हाथ में लेकर विवाह का संकल्प पढ़ा जाता है । १०—विधु = चन्द्रमा । समीर = पवन । ११—कनय = सोना । तारल तूल = तरल के समान । १२—लाजा = शादी के समय धान का लावा (खील) छींटा जाता है । १४—जओतुक = दहेज ।

२—बनिक राज = व्यापारी-श्रेष्ठ । ४—बारि = बाला, नवयुवती । ६—पटोर = रेशमी वस्त्र । गृम = गले में । ७—घसि = घिसकर । ८—ककरहु = किसीके । कपुर = कपूर । तमोर = पान । ९—कुमकुम = केसर । मरदाव = मर्दन करती है, मलवाती है । १०—मोतिअ = मोती । छाज = शोभता है । माँग = माथ, सीमंत ।

Poets are long lived race than heroes, they reathe more of the air of immortality—Hazlite.

[१७६]

अभिनव पल्लव बइसक देल।
धवल कमल फुल पुरहर भेल ॥२॥

करु मकरंद मंदाकिनि पानि।
अरुन असोग दीप दहु आनि ॥४॥

माइ हे आज दिवस पुनमंत।
करिए चुमाओन राय बसंत ॥६॥

सपुन सुधानिधि दधि भल गेल।
भमि भमि भमरि हुँकारइ देल ॥८॥

टेसु कुसुम सिंदुर सम भास।
केतिक-धुलि बिथरहु पटबास ॥१०॥

भनइ विद्यापति कविकंठहार।
रस बुझ सिवसिंध सिव अवतार ॥१२॥

१—अभिनव = नवीन। बइसक = बैठने के लिये। २—धवल = स्वच्छ। पुरहर = व्याह का मांगलिक कलसा जो चूने से पुता रहता है। ३—मकरंद = पुष्परस। मंदाकिनी-पानि = गंगा का पानी। ८—अरुण = लाल। असोग = अशोक। दीप = दीपक। दहु आनि = ला दिया। ५—पुनमंत = पुण्यमय, शुभ। ६—वसंत रूपी दुलहे का चुमाओन करो, चूमाओ। ७—सपुन = सम्पूर्ण, पूर्ण। सुधानिधि = चंद्र। दधि भेल = दही बना। ८—भमि = भ्रमण कर। भमरि = भ्रमरी, भौंरी। हुँकारइ देल = बुलावा ले आई। ६—टेसू = पलास। कुसुम = फूल। भास = मालूम होता है। १०—धूल = पराग। वियरहु = बिखेर दिया है। पटबास = मिथिला के एक प्रकार शृङ्गार जो सिन्दूर से माँग में किया जाता है।

[१८०]

दखिन पवन बह दस दिस रोल।
से जनि बादी भाषा बोल ॥२॥
मनमथ काँ साधन नहि आन।
निरसएल से मानिनि मान ॥४॥
माइ हे सीत - बसंत विवाद।
कओन विचारब जय - अवसाद ॥६॥
दुहु दिस मधय दिवाकर भेल।
दुजवर कोकिल साखी देल ॥८॥
नव पल्लव जयपत्रक भाँति।
मधुकर - माला आखर - पाँति ॥१०॥
वादी तह प्रतिवादी भीत।
सिसिर - विन्दु हो अन्तर सीत ॥१२॥
कुन्द - कुसुम अनुपम विकसंत।
सतत जीत वेकताओ बसंत ॥१४॥
विद्यापति कवि एहो रस भान।
राजा सिवसिंघ एहो रस जान ॥१६॥

१—रोल=शोर करता हुआ। ४—निरसएल=नीरस कर दिया। ६—जय अवसाद—जीत और हार। ७—मधय=मध्यस्थ। ८—दुजवर=(१) द्विज श्रेष्ठ, (२) पक्षी श्रेष्ठ। ९, १०—नये पल्लव जयपत्र (जिस पर फैसला लिखा जाय) है और भौंरों के समूह अक्षरों की पंक्तियाँ हैं। ११, १२—वादी (वसंत) से मुहतोड़ कर गया और शीत शिशिर की ओसबूँद में जा रहा। १४—वेकताओ = प्रकट किया।

[१८१]

अभिनव कोमल सुन्दर पात।
सबरे बने जनि पहिरल रात ॥२॥
मलय-पवन डोलय बहु भाँति।
अपन कुसुम रस अपने माति ।४॥
देखि देखि माधव मन हुलसंत।
बिरिदावन भेल बेकत वसंत ॥६॥
कोकिल बोलय साहर भार।
मदन पाओल जग नब अधिकार ॥८॥
पाइक मधुरकर कर मधु पान।
भमि-भमि जोहए मानिनि-मान ॥१०॥
दिसि दिसि से भमि विपिन निहारि।
रास बुझावए मुदित मुरारि ॥१२॥
भनइ विद्यापति ई रस गाव।
राधा-माधव अभिनव भाव ॥१४॥

१—अभिनव = नवीन। पात = पत्ते। २—सबरे = सम्पूर्ण। रात = लाल (वस्त्र)। मानों समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया हो। ३—डोलए = वह रहा है। ४—माति = मत्त होकर फूल अपने रस में आप ही पागल है। ५—हुलसंत = हुलसित हुआ। ६—बेकत भेल = प्रकट हुआ। ७—साहर = आम्रमंजरी। ८—मदन = कामदेव। ९—पाइक = पायक, दूत। मधुकर = भौंरा। १०—भमि-भमि = भ्रमण कर। जोहए = खोजता है। ११—विपिन = वन। निहारि = देखकर। १२—प्रसन्नचित्त कृष्ण रासलीला कर रहे हैं।

[१८२]

चल देखए जाऊ रितु बसंत।
जहाँ कुंद-कुसुम केतकि हसंत ॥२॥
जहाँ चंदा निरमल भमर कार।
जहाँ रयनि उजागर दिन अँधार ॥४॥
जहाँ मुगुधलि मानिनि करए मान।
परिपंथिहि पेखए पंचबान ॥६॥
भनइ सरस कवि - कंठहार।
मधुसूदन राधा बन बिहार ॥८॥

[१८३]

मधुरितु मधुकर पाँति। मधुर कुसुम मधुमाति ॥
मधुर वृन्दावन माँझ। मधुर मधुर रससाज ॥
मधुर जुवति जन संग। मधुर मधुर रसरंग ॥
मधुर मृदंग रसाल। मधुर मधुर करताल ॥
मधुर नटन-गति भंग। मधुर नटनि नट संग ॥
मधुर मधुर रस गान। मधुर विद्यापति भान ॥

३—निरमल = स्वच्छ। भमर = भ्रमर, भौंरा। कार = काला। ४—जहाँ रात उजली-प्रकाशमय (फूलों और चन्द्र के कारण) और दिन अंधकारपूर्ण (भौंरों और गुल्म-लताओं के कारण)। ६—६—परिपंथिहि = पथिकों को, विरोधियों को। पेखए = देखता है। पंचबान = कामदेव।

मधुरितु = बसंत। मधुकर = भौंरा। मधुमाति = मधु से मस्त। माँझ = में। रसराज = शृंगार। मधुर नृत्य का गति-भंग (भाव-भंगी) और मधुर नाचनेवाली के साथ (मधुर) नट का (मधुर) संग।

[१८४]

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति कलावति माति श्याम संग
कर करताल प्रवन्धक ध्वनिया ॥२॥
डम डम डंफ डिमिक डिम मादल
रुनु झुन मंजिर बोल।
किंकिन रनरनि वलआ कनकनि
निधुवन रास तुमुल उतरोल ॥४॥
वीन, रवाव, मुरज स्वरमंडल
सा रि ग म प ध नि सा बहु विधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदंग गरजनि
चंचल स्वरमंडल करु राव ॥६॥
स्रम भर गलित लुलित कबरीयुत
मालति माल विथारल मोति।
समय बसंत रास-रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ॥८॥

२—नटति = नाच रही है। माति = मत्त होकर। ध्वनिया = आवाज। ३—मादल = एक वाजा। ४—वलआ = कंगना। निधुवन... = निधवन में रासलीला जोश के साथ हो रही है। ५—रवाव = सारंगी ढंग का एक वाजा। स्वरमंडल = वीणा का एक। ६—राव – स्वर। ७—परिश्रम के कारण पसीना चल रहा है, केश चंचल हो इधर-उधर छिटके हैं और मालती की माला मोती विखेर रही है। ८—छोभित – क्षोभित, चंचल।

[१८५]

रितुपति - राति रसिक रसराज।
रसमय रास रमस रस माँझ ॥२॥
रसमति रमनि - रतन धनि राहि।
रास रसिक सह रस अवगाहि ॥४॥
रंगिनि गन सब रंगहि नटई।
रनरनि कंकन किंकिनि रटई ॥६।
रहि - रहि राग रचय रसवंत।
रतिरत रागिनि रमन बसंत ।८।।
रटति रबाव महतिक पिनास।
राधारमन करु मुरलि विलास ॥१०॥
रसमय बिद्यापति कवि भान।
रूपनारायन भूपति जान ॥१२॥

[१८६]

मलय पवन बह। बसंत बिजय कह॥
भमर करइ रोर। परिमल नहि ओर॥
रितुपति रँग हेला। हृदय रमस मेला॥
अनंग मगल मेलि। कामिनि करथु केलि॥
तरुन तरुनि संगे। रयनि खेपवि रंगे॥
विहरि विपदि लागि। केसु उपजल आगि॥
कवि विद्यापति भान। मानिनि जीवन जान॥
नृप रुद्रसिंह बरु। मेदिनि कलपतरु॥

महतिक = बड़ी वीणा। पिनास = एक वाद्यंत्र! खेपवि = बितायेगा।

विरह

[१८७]

सखि हे बालम जितब विदेस ।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेस ॥२॥

ई न विदेसक वेलि ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तें तोहे पिया लग मेलि ॥४॥

किछु दिन करथु निवास ।
हम पूजल जे सेहे पए भुंजब
राखथु पर-उपहास ॥६॥

होएताह किए वध-भागी ।
जेहि खन हुन मन जाएब चिंतब
हमहु मरब धसि आगी ॥८॥

बिद्यापति कवि भान ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥१०॥

१—जितब = जीतेंगे (अपशकुन समझकर 'जायेंगे' ऐसा नहीं कहती) । २—तोहुँ = तुम भी । हुनि = उनको । ३—वेलि = बेला, समय । ४—अनुमापब = समझेंगे । तें तोहे पिया लग मेलि = इसीलिये तुम्हें प्रीतम के निकट भेज रही हूँ । ५—करथु = करें । ६—जैसी पूजा (काम) की होगी, वैसा फल मैं भोगूँगी, वे मुझे केवल-दूसरे की निन्दा से बचा लें । ७—होएताह = होवेंगे । किये = क्यों । वध-भागी = हत्या का भागी । ८—जाएब चितब = जाने की सोचेंगे ।

[१८८]

माधव, तोहें जनु जाइ बिदेस।
हमरो रंग रभस लए जएबह
लएबह कोन सँदेस ॥२॥

बनहि गमन करु होएति दोसर मति
बिसरि जाएब पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब
फेरि माँगब पहु तोरा ॥४॥

जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा।
एकहि नगर बसि पहु भेल परबस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥

पहु सँग कामिनि बहुत सोहागिनि
चन्द्र निकट जइसे तारा।
भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाइ = मत जाओ। २—रंग-रभस = आमोद-प्रमोद। ३—मोरा बिसरि जाएब = मुझे भूल जाओगे। ५—नीर = आँसू। पहु ओरा = प्रीतम की ओर। ६—पुरत = पूरा होगा। ८—सारा = (यहाँ) धैर्य।

—:o.—

"सत्सूत्रं सुविधानं सदलङ्कारं सुवृत्तमच्छिद्रम्।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्यं माल्यमथ च ॥"

[१८९]

कालि कहल पिया ए साँझहि रे
जाएव मोयँ मारुअ देस।
मोय अभागलि नहि जानलि रे
सँग जइतओं जोगिन वेस ॥२॥

हृदय मोर वड़ दारुन रे
पिया विनु विहरि न जाए ॥३॥

× × × ×

एक सयन सखि सूतल रे
आछल बालम निसि मोर।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
विछुरल चकेवा जोर ॥५॥

सून सेज हिय सालए रे
पिया विनु घर मोयँ आजि।
विनति करओं सहलोलिनि रे
मोहि दे अगिहर साजि ॥७॥

विद्यापति कवि गाओल रे
आवि मिलव पिय तोर।
लखिमा देइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहिं भोर ॥९॥

१—मारुअ = मथुरा। २—जइतओं = जाती। ३—दारुन = कठोर। विहरि = फट जाना। ४—अछल = था। जोर = जोड़ा। ६—सालए = पीड़ा देती है ७—सहलोलनि = सहेली। मोहि...... = मुझे अग्निचिता साज दो, जिसमें जल जाऊँ।

[१९०]

मधुपुर मोहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती।
गोपी सकल बिसरलनि रे
जत छलि अहिबाती ॥२॥

सूतलि छलहुँ अपन गृह रे
निन्दइ गेलउँ सपनाई।
करसौं छुटल परसमनि रे
कोन गेल अपनाई ॥४॥

कत कहबो कत सुमिरब रे
हम मरिए गरानि।
आनक धन सों धनवंति रे
कुबजा भेल रानि ॥६॥

१—मधुपुर = मथुरा। गेल = गया। मोरा = मेरा। बिहरत =
टती है। २—विसरलनि = विस्मरण हो गये, भूल गये। जत =
तनी। छल = थी। अहिबाती = सौभाग्यवती। ३—सूतलि =
ई। छलहुँ = (मैं) थी। अपन = अपने। निन्दई गेलउँ सपनाइ =
ंद में स्वप्न देखने लगी। ४—कर = हाथ। छूटल = छूट गया।
रसमनि = स्पर्श मनि, पारस। कोन = कौन। गेल अपनाइ =
पना गया। ५—कत = कितना। कहबो = कहूँगी। सुमिरब =
मरण करूँगी। मरिए गरानि = ग्लानि से मर गई हूँ। आनक =
सरे का। सों = से। भेल = हुई।

गोकुल चान चकोरल रे
चोरी गेल चंदा।
बिछुड़ि चलल दुहु जोड़ी रे
जीव दइ गेल धंदा ॥८॥

काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड़ भोजन देव रे
भरि कनक कटोरा ॥१०॥

भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धर नारी।
गोकुल होयत सोहाओन रे
फेरि मिलत मुरारी ॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर बन गया— जो यहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार-हजार गोपियाँ चकोरी की तरह देखती थीं—वही आज स्वयं चकोर बनकर दूसरी को—कुब्जा को देख रहा है। हा! मेरा चन्द्र चोरी चला गया। ८—बिछुड़ि = बिछुड़कर। चललि = चली। दुहु जोड़ी = दोनों (राधा-कृष्ण) की जोड़ी। जीव दइ गेल धंदा = प्राणों में सन्देह दे गया। ९—काक = काग, कौआ। भाख = बोली। भाखह = बोलो। पहु = प्रीतम। आओत = आयेगा। १०—खीर = दूध। देव = दूँगी। कनक = सोना। १२—सोहाओन = शोभायमान।

"सुभासितरसास्वादबद्धरोमाञ्चकञ्चुका ।
विनापि कामिनीसङ्गं कवयः सुखमासते ॥

सरसिज बिनु सर सर बिनु सरसिज
की सरसिज बिनु सूरे।
जौवन बिनु तन तन बिनु जौवन
की जौवन प्रिय दूरे ॥२॥

सखि हे मोर बड़ दैव विरोधी।
मदन वेदन बड़ पिया मोर बोलछड़
अबहु देहे परबोधी ॥४॥

चौदिस भमर भम कुसुम कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीवइ।
मद पवन चल पिक कहु-कहु कह
सुनि विरहिनि कइसे जीवइ ॥६॥

सिनेह अछल जत हम भेव न टूटत
बड़ बोल जत सब थीर।
अइसन के बोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिध नीर ॥८॥

भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुनगाहक पिया तोरा।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
सहजे एको नहि भोरा ॥१०॥

१—की = क्या ! सूरे = सूर्य । ४—बोलछड़ = प्रतिज्ञा भंग करनेवाला। देहे = देती हो। ५—भमर भम = भौंरे भ्रमण कर रहे हैं। ७—अछल = था। भेव = समझना। बड़ बोल जत सब थीर = बड़े लोग जो कुछ कहते हैं, पक्का होता है। ८—के = कौन। सिम = सीमा।

[१६२]

सखि हे कतहु न देखि मधाई।
काँप शरीर थीर नहिं मानस
अवधि नियर भेल आई ॥२॥

माधव मास तीथि भयो माधव
अवधि कइए पिआ गेला।
कुच-जुग संभु परसि कर बोललन्हि
तें परतिति मोहि भेला ॥४॥

मृगमद चानन परिमल कुंकुम
के बोल सीतल चंदा।
पिया विसलेख अनल जो बरिसए
विपति चिन्हिए भल मंदा ॥६॥

भनइ विधापति सुन वर जौवति
चित जनु झंखह आजे।
पिय विसलेख-कलेस मेटाएत
बालम विलसि समाजे ॥८॥

१—मधाई = माधव, कृष्ण। २—मानस = मान। अवधि = मिलने का दिन। नियर = निकट। ३—माधव मास = वैशाख। माधव तिथि = एकादशी। गेला = गये। ४—कर = हाथ। तें = उससे। ५—के = कौन। ६—विसलेख = विश्लेष, विच्छेद। अनल = आग। ७—झंखह = झँखना, पश्चात्ताप करना।

[१६३]

लोचन धाए फेधायल
    हरि नहि आयल रे।
सिव-सिव जिबओ न जाए
    आस अरुझाएल रे ॥२॥

मन करे तहाँ उड़ि जाइअ
    जहाँ हरि पाइअ रे।
पेम-परसमनि जानि
    आनि उर लाइअ रे ॥४॥

सपनहु सगम पाओल
    रंग बढ़ाओल रे।
से गोरा बिहि बिघटाओल
    निन्दओ हेराएल रे ॥६॥

भनइ विद्यापति गाओल
    धनि धइरज धर रे।
अचिरे मिलत तोहि बालम
    पुरत मनोरथ रे ॥८॥

१—धाए = दौड़कर। फेधाएल = फेन सहित हो गये, फूल गये। २—जिबओ = प्राण भी। अरुझाएल = उलझ पड़े हैं। ३—मन करे = इच्छा होती है। ४—उर लाइअ = छाती से लगा लूँ। ५—सगम = मिलन, भेंट। पाओल = पाया। ६—बिहि = ब्रह्मा। बिघटाओल = नष्ट किया। निन्दओ हेराएल = नींद भूल गई, जाती रही। ८—अचिरे = शीघ्र ही पूर्ण होगा।

[१६४]

सखि मोर पिया।
अबहु न आओल कुलिस-हिया ॥२॥

नखर खोआओलुँ दिवस लिखि-लिखि।
नयन अँधाओलुँ पियापथ देखि ॥४।

जब हम बाला परिहरि गेला।
किए दोस किए गुन बुझइ न भेला ॥६॥

अब हम तरुनि बुझब रस-भास।
हेन जन नहि मोर काहे पिया पास ॥८॥

आवए हेन करि पिया मोरा गेला।
पुरवक जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुन अब राइ।
कानु समुझाइत अब चलि जाइ ॥१२॥

२—आओल = आया। कुलिस-हिया = वज्र के ऐसा कठोर हृदय। ३—नखर = नख। खोआओलुँ = नष्ट कर दिया। प्रीतम के आने का दिन लिखते-लिखते मेरे नख घिस गये। ४—अँधाओलुँ = अंधा बना लिया। पियापथ = प्रीतम की राह। ५—बाला = भोली-भाली किशोरी। परिहरि गेला = छोड़कर चले गये। ६—किये = क्या। बुझइ न भेला = कुछ न जान सके। ७—तरुनि = युवती। रस-भास = रस की बातें। ८—हेन = इस समय। १०—पुरवक = पूर्व का। बिसरित = विस्मरण। ११—राइ = राधा। १२—कानु = कृष्ण।

[१९५]

आसक लता लगाओल सजनी
नयनक नीर पटाय।
से फल अब तरुनत भेल सजनी
आँचर तर न समाय ॥२॥

काँच साँच पहु देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह भान।
दिन-दिन फल तरुनत भेल सजनी
अहु खन न करु गेआन ॥४॥

सब कर पहु परदेश बसि सजनी
आयल सुमिरि सिनेह।
हमर एहन पति निरदय सजनी
नहि मन बाढय नेह ॥६॥

भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठि बाधाव करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह ॥८॥

१, २—सखि, आँखों के पानी से सींचकर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) जवानी में आ गया, पुष्ट हो चला, वह अंचल के नीचे नहीं समाता। ३—साँच = सच-मुच में। पहु = प्रीतम। तसु = उसके। कुह = कुहेसा (निराशा)। अहुखन = इस समय भी। ६—एहन = ऐसा। ७—आओत = आयेगा। गुनसाह = गुणवान्। ८—बधाव = बधैया। नाह = पति।

[१६६]

कोन गुन पहु परबस भेल सजनी
बुझलि तनिक भल मंद।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निसि चंद ॥२॥

कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहि आन।
कतेक जतन सौं मेटिए सजनी
मेटिए न रेख पाखान ॥४॥

जे दुरजन कटु भाखए सजनी
मोर मन न होए बिराम।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तज हिमधाम ॥६॥

जतओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तेजए पाँक।
जे जन रतल जाहि सौं सजनी
कि करत बिहि भय बाँक ॥८॥

विद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमंत।
राजा सिवसिंघ मन दए सजनी
मोदवती देइ कंत ॥१०॥

१—तनिक=उनका। २—मनमथ मन मथ=कामदेव मन का मंथन कर रहा। तनि=उनके। ३—दुष्ट लोग भले ही उनके

[१६७]

माधव हमर रटल दुर देस।
केओ न कहइ सखि कुसल सनेस ॥२॥

जुग-जुग जीवथु वसथु लाख कोस।
हमर अभाग हुनक नहिं दोस ॥४॥

हमर करम भेल विहि विपरीत।
तेजलनि माधव पुरुबिल पिरीत ॥६॥

हृदयक वेदन वान समान।
आनक दुःख आन नहिं जान ॥८॥
भनइ विद्यापति कवि जयराम।
दैव लिखल परिनत फल वाम ॥१०॥

सैकड़ो अवगुण मुझसे कहूँ, किन्तु मेरे लिये उनके समान दूसरा कोई नहीं है। ३—पखान = पत्थर। ५—विराम = ठहरना। राहु पराभव = राहु द्वारा हराये जाने पर, ग्रस लिये जाने पर। हिमधाम = चन्द्रमा। ७—तरनि = सूर्य। ८—रतल = अनुरक्त। कि ररत··· = ब्रह्मा विमुख होकर क्या करेगा।

१—रटल = चला गया। २—केओ = कोई। सनेस = सदेस। ३—जीवथु = जियें। वसथु = वसें। ४—हुनक = इनका। ५—विहि = ब्रह्मा। ६—तेजलनि = छोड़ दिया। पुरुबिल = पूर्व का। ६—बेदन = वेदना, दुःख। ८—आनक = दूसरे का। १०—वाम = विपरीत।

"कृतमन्दपदन्यासा विकचश्रीदचारशब्दभगवती।
कस्य न कम्पयते कं जरेव जीर्णस्यसत्कवेर्वाणी॥"

[१६८]

जौवन रूप अछल दिन चारि।
से देखि आदर कएल मुरारि॥ २॥
अब भेल झाल कुसुम रस छूछ।
वारि विहून सर कओ नहि पूछ॥ ४॥
हमरि ए विनती कहब सखि रोय।
सुपुरुष वचन अफल नहिं होय॥ ६॥
जावे रहइ धन अपना हाथ
तावे से आदर कर संग साथ॥ ८॥
धनिकक आदर सब तहँ होय।
निरधन वापुर पुछय न कोय॥१०॥
भनइ विद्यापति राखब सील।
जो जग जीविए नवओ निधि मील॥१२॥

१=अछल=थे। २—से=वह। कएल=किया। ३—झाल=कटु, गंधहीन। रस छूछ=रस से हीन। ४—वारि-विहुन=पानी से रहित। सर=तालाव। केओ=कोई। ५—रोय=रो कर। ६—अफल=व्यर्थ। ७—जावे=जबतक। तावे=तवतक। संग साथ=संगी-साथी, मित्र-कुटुम्ब। ६—धनिकक=धनियों का। सवतहँ=सर्वत्र। १०—वापुर=वेचारा। ११—सील=मर्यादा। १२—यदि जग में जीवित रहो, तभी नवो निधियाँ प्राप्त हों।

Poetry is at bottom a criticism of life. The greatness of a poet lies in his powerful and beautiful application of ideas to life.

—Mathew Arnold.

[१६६]

सखि हे हमर दुखक नहि ओर।
ई भर बादर माह भादर।
सून मंदिर मोर ॥ २ ॥

झंपि घन गरजंति संतत
भुवन भरि बरसंतिया।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हतिया ॥ ४ ॥

कुलिस कत सत पात मुदित
मयूर नाचत मातिया।
मत्त दादुर डाक डाहुक
फाटि जायत छातिया। ६ ॥

तिमिर दिग भरि घोरि यामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन रातिया ॥ ८ ॥

२—(इस पद्य का यह चरण अत्यन्त प्रसिद्ध है। स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है)। भर = भरा हुआ। बादर = मेघ। ३—संतत = सदा। ४—पाहुन = प्रवासी। खर कर = तेज बाण। हतिया = मारना है। ५—कत सत = कई सौ। पात = गिरता है। मातिया = मत्त होकर। ६—डाक = पुकारता है। डाहुक = एक बरसाती पक्षी। ७—दिग = दिशा। अथिर = चंचल। ८—कइसे = किस प्रकार। गमाओब = बिताऊँगी।

[२८०]

मोर वन वन सोर सुनइत
            वढ़त मनमथ पीर।
प्रथम ह्वार असाढ़ आओल
            अवहु गगन गँभीर ॥ २ ॥
दिवस रयना अरे सखी
            कइसे मोहन विनु जाए ॥३॥
आवए साओन वरिख भाओन
            घन सोहाओन वारि।
पंचसर-सर छुटत रे कइसे
            जीअए विरहिन नारि ॥५॥
आवए भादो वेगर माधो
            काँसों कहि एहि दूख।
निडर डर डर डाक डाहुक
            छुटत मदन वनूक ॥७॥
अछूह आसीन गगन-भासि न
            घनन घनघन रोल।
सिंह भूपति भनइ ऐसन
            चतुर मास कि वोल ॥८॥

२—भाओन = जो मनको भावे। ५—पंचसर = कामदेव, ६—वेगर = विना। काँसों = किससे। ७ डर डर डाक डाहुक = डाहुक (पक्षी विशेष) डर-डर शब्द से पुकार रहा है—मानों कामदेव की वंदूक छूट रही हो। ८—अछह = (अछ = अस्ति) आया। भाखि = मालम पड़ता है।

[८०१]

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर बन
कोकिल पचम गावे रे।
मलयानिल हिमसिखर सिधारल
पिया निज देश ने आवे रे ॥२॥

चानन चान तन अधिक उतापए
उपवन अलि उतरोले रे।
समय वसत कत रहु दुर देस
जानल विधि प्रतिकूले रे ॥४॥

अनमिख नयन नाह मुख निरखइत
तिरपित न भेल नयाने रे।
ई सुख समय सहए एत संकट
अबला कठिन पराने रे ॥६॥

दिन दिन खिन तनु हिम कमलिनि जनु
न जानि कि जिव परजत रे।
विद्यापति कह धिक धिक जीवन
माधव निकरुन कंत रे ॥८॥

१—फुटल = प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिमसिखर सिधारल = मलय-पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण-पवन बहने लगा। ३—चानन = चन्दन। चान = चन्द्रमा। उतापए = उत्तप्त कर देता है, जलाता है। अलि उतरोले रे = भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनमिख = बिना पलक गिरे हुए। ७—हिम = बर्फ। परजत = पर्यन्त। ८—निकरुन = करुणा रहित, कठोर।

[२०२]

सजनी कानुक कहवि बुझाई।
रोपि पेमक बिज अंकुर मूड़लि।
बाँधब कौन उपाई ॥ २ ॥
तेल - बिन्दु जैसे पानि पसारिए
तेसन मोर अनुराग।
सिकता जल जैसे छनहि सूखए
तैसन मोर सुहाग ॥ ४ ॥
कुल - कामिनि छलौं कुलटा भए गेलौं
तिनकर वचन लोभाई।
अपने कर हम मूँड़ मुड़ाएल
कानु से प्रेम बढ़ाई ॥ ६ ॥
चोर - रमनि जनि मन मन रोअई
अम्बर बदन छिपाई।
दीपक लोभ सलभ जनि धाएल
से फल भुजइत चाई ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति इह कलजुग रित
चिन्ता करह न कोई
अपन करम - दोप आपहि भुंजइ
जे जन पर - वस होई ॥१०॥

१—कानुक = कृष्ण को। २—मूड़लि = तोड़ दिया। पसारिए = फैलता है। ४—सिकता = बालू। तैसन = वैसा। सुहाग = सौभाग्य। ५—छलौं = थी। कुलटा = व्यभिचारिणी। तिनकर = उनके। ६—मूँड़

[२०३]

के पतिआ लए जाएत रे
मोरा पियतम पास।
हिए नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ॥२॥

एकसरि भवन पिया बिनु रे
मोरा रहलो न जाय।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआय ॥ ४ ॥

मोर मन हरि हरि लय गेल रे
अपनो मन गेल।
गोकुल तजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ॥६॥

विद्यापति कवि गाओत रे
धनि धरु पिय आस।
आओत तोर मन भावन रे
एहि कातिक मास ॥८॥

मुड़ाएल (मैथिली मुहावरा) = बदनाम हुई। ७—चोर-रमनि = चोर की स्त्री। अम्बर = वस्त्र। (चोरनारि जिमि प्रगट न रोई—तुलसी) ८—सलभ = पतंग। जनि = ऐसा। भुगतन चाई = भोगना ही चाहिये। १०—जइ = भोगता है।

१—के = कौन। २—भेल = हुआ, आया। ३—एकसरि = अकेली। ४—अनकर = दूसरे का। पतिआय = विश्वास करता है। ५—हरि लय गेल = हरकर ले गये। अपनो = स्वयं भी। ८—आओत = आवेगा।

[२०४]

सजनी, के कह आओब मधाई ।
बिरह - पयोधि पार किए पाओब
मझु मन नहि पतिआई ॥२॥

एखन - तखन करि दिवस गमाओल
दिवस - दिवस करि मासा ।
मास - मास करि बरस गमाओल
छोड़लूँ जीवन - आसा ॥४॥

बरस - बरस करि समय गमाओल
खोयलूँ कानुक आसे ।
हिमकर - किरण नलिनि जदि जारब
कि करब माधव मासे ॥६॥

अंकुर तपन - ताप जदि जारब
कि करब वारिद सेहे ।
इह नव जौवन विरह गमाओब
कि करब से पिया गेहे ॥८॥

भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
अब नहि होइ निरासे ।
से ब्रजनन्दन हृदय अनन्दन
झटित मिलब तुअ पासे ॥१०॥

१—आओब = आवेंगे । २—पयोधि = समुद्र । ३—एखन-तखन = यह क्षण, वह क्षण । खोयलूँ = भुला दिया । कानुक = कृष्ण का । ६—हिमकर = चन्द्रमा । नलिनि = कमलिनी । जारब = जलायेगा ।

[२०५]

अकुर तपन ताप यदि जारब
कि करब वारिद मेह
ई नव जौबन विरह गमाओब
कि करब से पिया गेह ॥२॥

हरि हरि के इह दैव - दुरासा।
सिन्धु निकट जदि कंठ सुखाएब
के दुर करब पियासा ॥४॥

चंदन - तरु जब सौरभ छोड़ब
ससधर बरिखब आगि।
चिन्तामनि जब निज गुन छोड़ब
की मोर करम अभागि ॥६॥

साओन माह घन - बिन्दु न बरिखब
सुरतरु बाँझ कि छाँदे।
गिरिधर सेबि ठाम नहि पाएब
बिद्यापति रह धाँदे ॥८॥

कि = क्या। माधब मास = वैशाख (वसंत)। ७— तपन - ताप =
की ज्वाला। ९— होइ = होओ। झटित = शीघ्र।

३—के = कौन। ४—दुर करब = दूर करेगा। ५—सौरभ = सुग
ससधर = चन्द्रमा। बरिखब = वर्षा करेगा। ६—चिन्तामनि = वह
जिससे जो कुछ माँगे, दे दे। ७—घन बिन्दु = मेघ की बूँद। सुरत
कल्पवृक्ष। बाँझ = बन्ध्या। कि छाँदे = किस प्रकार। ८—सेबि =
कर। ठाम = जगह। धाँदे = सन्देह।

[२०६]

चानन भेल विषम सर रे
भूषन भेल भारी।
सपनहुँ हरि नहि आएल रे
गोकुल गिरिधारी ॥२॥

एकसरि ठाढ़ि कदम-तर रे
पथ हेरथि मुरारि।
हरि बिनु हृदय दगध भेल रे
झामर भेल सारी ॥४॥
जाह जाह तोंहे ऊधो हे
तोंहे मधुपुर जाहे।
चन्द्रबदनि नहि जीवति रे
वध लागत काहे ॥६॥

भनइ विद्यापति तन मन रे
सुनु गुनमति नारी।
आज आओत हरि गोकुल रे
पथ चलु झट झारी ॥८॥

१—चानन = चन्दन। विषम = कठोर। सर = वाण। भारी = भार-स्वरूप। ३—एकसरि = अकेले। पथ हेरथि = राह देख रही है। ४—दगध = दग्ध, जला हुआ। झामर = मलिन। ५—जाह = जाओ। मधुपुर = मथुरा। ६—जीवति = जीयेगी। वध = हत्या। काहे = किसे। ८—झट-झारी = झटक कर, शीघ्र-शीघ्र।

[२०७]

निपत अपत तरु पाओल रे
पुन नव नव पात।
विरहिन-नयन विहल विहि रे
अविरल बरिसात ॥ २ ॥
सखि अतर विरहानल रे
नित बादल जाय।
बिनु हरि लख उपचारहु रे
हिय दुख न मिटाय ॥४॥
पिय पिय रटए पपिहरा रे
हिय दुख उपजाव।
कुदिना हित जन अनहित रे
थिक जगत सोभाव ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति गाओल रे
दुख मेटत तोर।
हरखित चित तोहि भेटत रे
पिय नन्दकिशोर ॥ ८ ॥

१—विपत्ति रूपी पत्रहीन वृक्ष ये पुन (वर्षा आने पर) नव
पत्ते प्राप्त किये। २—विहल = विधान किया, बनाया, पैठा दि
बहि = ब्रह्मा। अविरल = लगातार, निरन्तर। ३—अतर = भ
हृदय में। विरहानल = विरह-रूपी अग्नि। ४—लख = लाख। उ
उपाय। ६—कुदिना - कुदिन आनेपर। अनहित = शत्रु। सोभा
स्वभाव। थिक = है। ७—मेटत = मिटेगा।

[२०८]

मोर पिया सखि गेल दूर देस।
जौबन दए गेल साल सनेस ॥१॥

मास असाढ़ उनत नव मेघ।
पिया बिसलेस रहओं निरथेघ॥
कौन पुरुष सखि कौन से देस।
करब मोयँ तहाँ जोगिनी भेस ॥२॥

साओन मास बरसि घन बारि।
पंथ न सूझे निसि अंधियारि॥
चौदिसि देखिए बिजुरी रेह।
से सखि कामिनि जीवन सन्देह ॥३॥

भादव मास बरसि घन घोर।
सभदिसि कुहुकय दादुल मोर॥
चेहुँकि चेहुँकि पिया कोर समाय।
गुनमति सूतलि अंक लगाय ॥४॥

आसिन मास आस धर चीत।
नाह निकारुन न भेलाह हीत॥
सर-वर खेलए चकवा हास।
विरहिन बैरि भेल आसिन मास ॥५।

१—साल = काँटा। सनेस = भेंट। २—उनत = उन्नत, चढ़ता हुआ। विसलेस = विश्लेष, वियोग। रहओं = रहती हूँ। निरथेघ = निरवलम्ब। से = वह। ४—दादुल = मेढ़क। कोर = गोद। सुतलि = सोई। अंक = हृदय। ५—निकारुन = निष्करुण। भेलाह = हुआ। ६—दिगन्तर = दूर देश। बास = रहना। सुखराति = दीपावली की

कातिक कंत दिगन्तर बास।
पिय-पथ हेरि-हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहुँ कौं भेल।
हमें दुखसाल सोआमि दय गेल॥६॥

अगहन मास जीव के अंत।
आवहु न आयल निरदय कंत।
एकसरि हम धनि सूतओं जागि।
नाइक आओत खाएत मोहि आगि॥७॥

पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिया परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरओं चौदिस झँखओं रोय।
नाह बिछोह काहु जन होय॥८॥

माघ-मास धनि पड़य तुसार।
झिलमिल केचुओं बनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पियतम कोर।
विधि बस दैब बाम भेल मोर॥९॥

रात। सोआमि = स्वामी। ७—सूतओ जागि = जागकर सोती हूँ। जब मुझे आग खा जायगी—जब मैं विरह-ज्वाला में मर जाऊँगी, तब प्रीतम व्यर्थ आयेंगे। ८—दीघरि = दीर्घ, बड़ी। झँखओं = झँखती हूँ। ९—तुसार = बर्फ। झिलमिल = बारीक चोली में उभड़े एहु कुच हैं जिनके ऊपर हार है। बाम भेल = विमुख हुआ।

फागुन मास घनि जीव उचाट।
विरह-विखिन भेल हेरओं वाट॥
आयल मत्त पिक पंचम गाव।
से सुनि कामिनि जीवहु सताव॥१०॥

चैत चतुरपन पिय परवास।
माली जाने कुसुम विकास॥
भमि-भमि भमरा करु मधुपान।
नागर भइ पहु भेल असयान॥११॥

वैसाख तवे खर मरन समान।
कामिनि कंत हनय पँचवान॥
नहि जुड़ि छाहरि न वरसि वारि।
हम जे अभागिन पापिनि नारि॥१२॥

जेठ मास ऊजर नव रंग।
कंत चहए खलु कामिनि-संग॥
रूपनरायन पूरथु आस।
भनइ विद्यापति वारह मास॥१३॥

१०—घनि जीव उचाट = वाला का जी उचट गया। विखिन = विक्षीण, अत्यन्त कृश। पिक = कोयल। से = वह। सताव = सताता है। ११—परवास = प्रवास = विदेश में। कुसुम विकास = फूल का खिलना। भमि = भ्रमण कर। भमरा = भौंरा। नागर = चतुर। पहु = प्रीतम। १२—तवे = तव जाता है, गरम हो उठता है। खर = तीक्ष्ण। जुड़ि = ठंडा। छाहरि = छाया। वरिस = वरसता है। वारि = पानी। १३—ऊजर नवरंग = नये रंग उजड़ गये। खलु = निश्चय। पुरथु = पूरा करें।

[२०६]

माधव देखलि वियोगिनि बामे।
अधर न हास बिलास सखी संग।
अहोनिस जप तुअ नामे ॥२॥

आनन सरद सुधाकर सम तसु
बोलइ मधुर धुनि बानी।
कोमल अरुन कमल कुम्हिलायल
देखि मन अइलहुँ जानी ॥४॥

हृदयक हार भार भेल सुबदनि
नयन न होय निरोधे।
सखि सब आय खेलाओल रँग करि
तसु मन कछुओ न बोधे ॥६॥

रगडल चानन मृगमद कुंकुम
सभ तेजलि तुअ लागी।
जनि जलहीन मीन जक फिरइछ
अहोनिस रहइछ जागी ॥ ८ ॥

दूति उपदेस सुनि गुनि सुमिरल
तइखन चलला धाई।
मोदवतीपति राघवसिंह गति
कवि विद्यापति गाई ॥१०॥

३—तसु = उसका। ४—कुम्हिलायल = मुरझा गया। अइलहुँ = मैं आई। ६—निरोधे = बंद। ७—रगडल = घिसा। चानन = चन्दन। मृगमद = कस्तूरी। कुंकुम = केशर। ८—जक = समान। फिरइछ =

[२१०]

लोचन नीर तटनि निरमाने।
करए कलामुखि तथिहि सनाने ॥ २ ॥

सरस मृनाल करइ जपमाली।
अहोनिस जप हरिनाम तोहारी ॥ ४ ॥

वृन्दाबन कान्हु धनि तप करई।
हृदय-वेदि मदनानल बरई ॥ ६ ॥

जिव कर समिध समर कर आगी।
करति होम बध होएबह भागी ॥ ८ ॥

चिकुर बरहि रे समरि कर लेअई।
फल उपहार पयोधर देअई ॥१०॥

भनइ विद्यापति सुनह मुरारी।
तुअ पथ हेरइत अछि वर नारी ॥१२॥

फिरती है। ६— तइखन = उसी क्षण।

१, २—आँखों के आँसुओं से नदी का निर्माण कर वह चन्द्रवदनी उसीमें स्नान करती है। ३—मृनाल = मृणाल = कमल-नाल। करइ = बनाती है। जपमाली = जपमाला, सुमरिणी। ६—हृदय-रूपी वेदी पर काम की अग्नि धधक रही है। ७, ८—अपने प्राणों को समिध (अग्निहोत्र की लकड़ी) बनाकर और स्मरण को अरणी (आगी = जिससे आग निकले, अरणी) करके वह होम कर रही है, तुम इसकी हत्या के भागी बनोगे। ६—चिकुर = केश। बरहि = बर्हि, कुश। समरि = सँभलकर। १०—पयोधर = कुच। अछि = है।

— :-०::—

[२११]

अकामिक मन्दिर भेलि बहार।
चहुँदिस सुनतक भमर झकार॥ २ ॥

मुरुछि खसल महिं न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर॥ ४ ॥

केओ सखि बेनि धुन केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओं सँभार॥ ६ ॥

केओ बोल मत्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद डाकिनि बोलि॥ ८ ॥

अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन भुजँग डसु बालहि तोरि॥ १० ॥

भनइ बिद्यापति एहो रस भान।
एहि बिष गारुड़ि एक पप कान॥ १२ ॥

१— अकामिक = अकस्मात्। भेलि बहार = बाहर हुई। २— भमर = भौंरा। ३—खसल = गिर पड़ी। थीर = स्थिरता। ४—चेतए = सँभालती है। चिकुर = केश। चीर = साड़ी। ५—केओ = कोई। बेनि धुन = वेणी गूँथती है, वेणी सँभालती है। धुरि झार = धूल झाड़ती है। ६—अरगजओं = कस्तूरी आदि के लेप से। सँभार = सँभालती है। ७— कान तर = कान के निकट। जोलि = जोर से। ८—खेद = खदेड़ती है। ९—कि रभसि बोरि = क्या रभस कर बोल रहे हो! १०—तुम्हारी प्रेमिका को ((बालहि) कामदेव-रूपी सर्प ने काट लिया है। ११—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गारुड़ि (विष उतारनेवाला) हैं।

[२१२]

माधव, कठिन हृदय परवासी।
तुअ पेअसि मोयँ देखल वियोगिनि
अबहुँ पलटि घर जासी ॥२॥

हिमकर हेरि अवनत कर आनन
करु करुना पथ हेरी।
नयन काजर लए लिखए विधुन्तुद
भय रह ताहेरि सेरी॥ ४ ॥

दखिन पवन वह से कइसे जुवति सह
कर कवलित तनु अंगे।
गेल परान आस दए राखए
दस नख लिखिए भुजंगे ॥ ६ ॥

मीनकेतन भए सिव सिव सिव कय
धरनि लोटावए देहा।
करे रे कमल लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा ॥७॥

परभृत के डर पायस लए कर
वायस निकट पुकारे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
करथु विरह उपचारे॥ १० ॥

१—परवासी = प्रवासी, विदेश में रहनेवाला। २—पेअसि = प्रेयसि, प्रेमिका। जासी = जाओ। ३-हिमकर = चन्द्रमा। अवनत = नीचे। विधुन्तुद = राहु। ताहेरि सेरी = उसी की शरण में।

[२१३]

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि
मूदि रहए दू नयान।
कोकिल कलरव मधुकर धुनि सुनि
कर देइ झाँपइ कान॥२॥

माधव सुन सुन बचन हमारा
तुअ गुनसुन्दरि अति भेल दूबरि
गुनि गुनि प्रेम तोहारा॥४॥

धरनी धरि धनि कत बेरि बइसइ
पुन तहि उठइ न पारा।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि हेरि
नयन गरए जलधारा॥६॥

तोहर बिरह दिन छन छन तनु छिन
चौदिस चाँद समान।
भनइ विद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देइ रमान॥८॥

५—कवलित = ग्रस्त, खा जाना। ६—गेल = गया हुआ। भुजगे = सर्प (सर्प वायु को खा जायगा, यह स्मरण कर) ७—मीनकेतन = कामदेव। ८—करे रे कमल लए—हाथ रूपी कमल लेकर। सिरिफल = नारियल। ९—परभृत = कोयल। पायस = खीर। वायस = कौआ। १०—करयु = करें। उपचारे = उपाय।

१—कुसुमित कानन = खिला हुआ वन। २—मधुकर = भौंरा। ५—पृथ्वी पकड़कर वह बाला कई बार बैठ जाती है और पुन (चेष्टा करने

[२६४]

सरदक ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिन के लोचन - लीला।
केसपास लए चमरि के सोंपलक
पाए मनोभव पीला॥ २॥

माधव, जानल न जीवति राही।
जतवा जकर लेले छलि सुन्दरि
से सब सोंपलक ताही॥ ४॥

दसन-दसा दालिम के सोंपलक
बन्धु अधर रुचि देली।
देह-दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर सनि धनि भेली॥ ६॥

भौंहक - भंग अनंग - चाप दिहु
कोकिल के दिहु बानी।
केवल देह नेह अछ लओले
एतवा अएलहुँ जानी॥ ८॥

भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
चित झँखह जनु आने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने॥ १०॥

पर) उठ नहीं सकती। ७—दीन=गरीब, असहाय। चौदिसि=चतुर्दशी।

१—ससधर=चन्द्रमा। मुखरुचि=मुख की शोभा। सौंपलक=समर्पण किया। २—चमरि=वह गाय जिसकी दुम का चँवर होता है।

[२१५]

आएल उनमद समय बसंत।
दारुन मदन निदारुन कत॥टेक॥

ऋतुराज आज बिराज हे सखि
नागरि जन वन्दिते।
नव रंग नव दल देखि उपवन
सहज सोभित कुसुमिते।

आरे कुसुमित कानन कोकिल साद।
मुनिहुक मानस उपजु बिखाद॥१॥

अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु - सचिते॥
समय कंत उदंत नहि किछु
हमहि विधि - वस - वंचिते॥
वंचित नागर सेह सभार।
एहि रितुपति सौं न करए बिहार॥२॥

मनोभव = कामदेव। पीला = पीड़ा। ४—जतबा = जितना। बकर = जिसका। लेले = लिये हुई थी। ५—दालिम = दाड़िम अनार। बन्धु = बन्धुली फूल। सौदामिनि = बिजली। सनि = समान। ७—अनग-चाप दिहु = कामदेव के धनुष को दिया। ८—अछ = है। एतबा = इतना। ९—बँखह = बँखना।

१—उनमद = उनमत्त, पागल। दारुन = कठिन। निदारुन = करुणा-हीन। नागरी जन वन्दिते = नागरी स्त्रियों द्वारा पुजित। नव = नवीन। दल = पत्ता। कुसुमित = खिले हुए। कानन = वन।

अति हार भार मनोज मारए
चन्द रवि सन भानए।
पुरुष पाप संताप जत हो
मन मनोभव जानए॥

जारए मनसिज मार सर साधि।
चानन देह चौगुन हो धाधि॥३॥

सब धाधि आधि वेआधि जाइति
करिए धैरज कामिनी।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनी॥

जामिनि सुफल जाइत अवसान।
धैरज धरु विद्यापति भान॥४॥

साद = ध्वनि। विषाद = विषाद, दुःख। २—मधुकर = भौंरा। रव = आवाज। उदंत = वार्त्ता। सेह = वही। ऋतुपति सौं = वसंत में। ३—मनोज = कामदेव। चन्द रवि सन भानए = चन्द्रमा और सूर्य के समान मालूम होता है। जत = जितना। मनसिज = कामदेव। मारि = मारता है। चानन = चन्दन। धाधि = ज्वाला। ४—आधि वेआधि = शोक और पीड़ा। जाइति = जायगी। सुपहु = सुप्रभु, प्यारे प्रीतम। आओत = आवेगा। जामिनि = रात। अवसान = अन्त। भान = कहते हैं।

"स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विनानुग्रहम्।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे॥

[२१६]

माधव, कत परबोधब राधा।
हा हरि हा हरि कहतहि बेरि बेरि
अब जिउ करब समाधा ॥२॥
धरनि धरिये धनि जतनहि बइसइ
पुनहि उठए नहि पारा।
सहजहि बिरहिन जग महँ ताविनि
बौरि मदन सर धारा ॥४॥
अरुन-नयन नोर तीतल कलेबर
बिलुलित दीघल केसा।
मन्दिर बाहिर करइत ससय
सहचरि गनतहि सेपा ॥६॥
आनि नलिनि केओ रमनि सुताओलि
केओ देइ मुख पर नीरे।
निसबद पेखि केओ साँस निहारए
केओ देइ मन्द समीरे ॥८॥
कि कहब खेद भेद जनि अन्तर
घन घन उतपत साँस।
भनइ विद्यापति सेहो कलावति
जीव बँधल आस पास ॥१०॥

२—समाधा — समाप्त। ३—बइसइ = बैठती है। ४—नोर = आँसू। तीतल = भीगा हुआ। ६—सेपा = अन्त, मृत्यु। ७—सुताओलि = सुलाई। ६—उतपत = उत्तप, गर्म। १९—आस-पास = आशा के बन्धन में

[२१७]

अनुखन माधव माधव सुमरइत
सुन्दरि भेलि मधाई।
ओ निज भाव सुभावहि विसरल
अपने गुन लुबुधाई ॥२॥

माधव, अपरुब तोहर सिनेह।
अपने विरह अपन तनु जरजर
जिवइत भेलि सन्देह ॥४॥

भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि
छल-छल लोचन पानि।
अनुखन राधा राधा रटइत
आधा आधा वानि ॥६॥

राधा सयँ जब पुनतहि माधव
माधव सयँ जब राधा।
दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत
बाढत विरहक बाधा ॥८॥

दुहुदिस दारु-दहन जैसे दगधई
आकुल कीट परान।
ऐसन वल्लभ हेरि सुधामुखि
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

इस पद्य में प्रेम की पराकाष्ठा हो गई है। राधा विरहवश, प्रेम में तल्लीन हो, अपने ही को कृष्ण समझ लेती है और 'राधा-राधा' चिल्लाने लगती है। पुनः जब होश में आती है, तब कृष्ण के लिये

कृष्ण का विरह

[२१८]

रामा हे, से किए बिसरल जाई।
कर धरि माथुर अनुमति मँगइत
तवहि परल मुरुछाई ॥२॥

किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे
जे किछु कहल बर रामा।
कठिन कलेवर तेंई चलि आओल
चित्त रहलि सोइ ठामा ॥४॥

से बिनु राति दिवस नहि भावए
ताहि रहल मन लागी।
आन रमनि सयँ राज सम्पद मोयँ
आछिए अइसे बिरागी ॥६॥

दुइ एक दिवस निचय हम आओब
तुहु परबोधबि राई।
विद्यापति कह चित्त रहल नहि
प्रेम मिलापव जाई ॥८॥

व्याकुल हो उठती है। यों दोनों अवस्थाओं में मर्म-व्यथा सहती है।

१—रामा = सुन्दरी (सखि)। से = वह। किए = क्यों। बिसरल = भूलना। ३—सरे = स्वर में। लहु-लहु आखरे = मधुर शब्दों में। जे कुछ = जो कुछ। ४—तेंई = उसीसे। ५—से = वह (राधा)। ६—आन = अन्य। आछिए = हैं। ७—निचय = निश्चय ८—तुहु = वहाँ।

[२१६]

तिल एक सयन ओत जिउन सहए
न रहए दुसे तनु भीन।
माँझे पुलक गिरि अन्तर मानिए
अइसन रह निसि-दीन ।।२।।

सजनी कोन परि जीवए कान।
राहि रहल दुर हम मथुरापुर
एतहु सहए परान ।।४।।

अइसन नगर अइसन नव नागरि
अइसन सम्पद मोर।
राधा विनु सब वाधा मानिए
नयनन तेजिए नोर ।।६।।

सोइ जमुना जल सोइ रमनीगन
सुनइत चमकित चीत।
कह कविसेखर अनुभवि जनलौं
वड़क वड़ई पिरीत ।।८।।

१—तिल एक = एक क्षण के लिये भी। ओत = ओट। भीन = भिन्न। माँझे = मध्य में। २—मिलने के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किंचित् नाम-मात्र का व्याघात हो जाता था, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड़ के समान मालूम पड़ता था, इस प्रकार हम दिन-रात मिले हुए थे। ३—कोन परि = किस प्रकार। ५—अइसन = ऐसा। ६—नोर = आँसू। ९—अनुभवि = अनुभव करके। जनलौं = जान गया।

भावोल्लास

[२२०]

सरस वसंत समय भल पाओलि
दछिन पवन वहु धीरे।
सपनहुँ रूप वचन एक भाखिए
मुख सों दुरि करु चीरे ॥२॥

तोहर वदन सम चान होअथि नहि
जाइओ जतन विहि देला।
कए बेरि काटि वनाओल नव कय
तइओ तुलित नहि भेला ॥३॥

लोचन-तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए लुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ॥६॥
भनहि विद्यापति सुनु वर जौवति
ई सम लछमी समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥८॥

१—पाओलि = पाया। २—स्वप्न में एक आदमी ने आकर कहा—अरी, मुख से अंचल हटाओ। ३—वदन = मुख। चान = चन्द्रमा। जइओ = यद्यपि। विहि = विधाता। ४—कए = कितने। कय = काया, शरीर। तइओ = तो भी। तुलित = तुल्य, समान। ५—तूल = तुल्य। भए सक = हो सकता। लुकाएल = छिप गया। जलभए = जल में। पंकज = कमल। ई सम = यह सब।

[२२१]

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार॥ २॥

कर कौसल कर कँपइत रे
हरवा उर टार।
कर-पंकज उर थपइत रे
मुख-चन्द्र निहार॥ ४॥

केहनि अभागलि बैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देखि पाओल रे
गुनमय गोविन्द॥ ६॥

विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धरु धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतबो सिचु नीर॥ ८॥

१—सुतलि छलहुँ = सोई थी। गरवा = गले में। २—जखनि = जिस समय। भिनुसरवा = भोर, उषाकाल। आएल = आया। ३—चतुराई करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटाया। ४—कर-पंकज = कमल रूपी हाथ। थपइत = स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुँह देखने लगे। ५—केहनि = कैसी। अभागलि = अभागिनी। ६—भल कए = अच्छी तरह। ८—फर = फलता है। कतबो सिचु नीर = कितना भी पानी पटाओ।

[२२२]

मोरा रे अँगनमा चनन केरि गछिआ
ताहि चढ़ि कुरुरय काग रे।
सोने चोच बाँधि देब तोयँ वायस
जओं पिया आओत आज रे ॥२॥

गावह सखि सब झुमर लोरी
मयन - अराधन जाउँ रे।
चओदिस चम्पा मओली फूलली
चान इजोरिया राति रे।
कइसे कए मोयँ मयन अराधव
होइति बड़ी रति साति रे ॥४॥

बिद्यापति कबि गाबए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राओ भोगीसर सब गुन आगर
पदमा देइ रमान रे ॥७॥

१—अँगनमा = आँगन में। चनन केरि = चन्दन का। गछिया = वृक्ष। कुरुरए = बोल रहा है। २—सोने = स्वर्ण से। तोयँ = तुझे। वायस = काग। ३—गावह = गाओ। मयन - अराधन = कामदेव की आराधना करने। ४—मओली = मल्लिका। चान = चन्द्रमा। इजोरिया = चाँदनी। कइसे कए = किस प्रकार। होइत = होयगी। रति-साति = रति-जनित पीड़ा। ६—पहु = प्रीतम। अछ = है। ७—रमान = पति।

—०—

[२२३]

अंगने आओब जब रसिया।
पलटि चलब हम इषत हँसिया ॥२॥
रस-नागरि रमनी।
कत कत जुगति मनहि अनुमानी ॥४॥
आवेसे आँचर पिया धरबे।
जाएब हम न जतन बहु करबे।
कँचुआ धरब जब हठिया।
करे कर बाँधब कुटिल आध दिठिया ॥८॥
रभस माँगब पिआ जबही।
मुख मोड़ि बिहँसि बोलब नहि नहि ॥१०॥
सहजहि सुपुरुख भमरा।
मुख कमलक मधु पीअब हमरा ॥१२॥
तखन हरब मोर गेआने।
विद्यापति कह धनि तुअ धेआने ॥१४॥

१—अंगने = आँगन में। आओब = आयेंगे। २—इषत = थोड़ा-थोड़ा। ३—रस-नागरि = रस में चतुरा, सुरसिका। ४—कत = कितनी। जुगति = युक्ति। ५—आवेसे = आवेश में; उत्तेजित होकर। वे बहुत यत्न करेंगे, किन्तु मैं न जाऊँगी। ७—कँचुआ = कंचुकी, चोली। हठिया = हठकर। ८—(अपने) हाथ से (उनके) हाथ को बाँध दूँगी और तिरछी एवं आधी चितवन से देखूँगी। ९—रभस = रति-क्रीड़ा। बिहँसि = हँसकर। ११—भमरा = भौंरा। पीअब = पीयेगा। १३—तखन = उस समय। (काम क्रीड़ा के समय) मेरा ज्ञान हर लेंगे।

[२२४]

पिया जब आओब ई मझु गेहे।
मंगल जतहु करब निज देहे ॥२॥

कनअ कुम्भ करि कुच जुग राखि।
दरपन धरब काजर देइ आँखि ॥४॥

वेदि बनाओब हम अपन अंकमे।
झाड़ करब ताहे चिकुर विछीने ॥६॥

कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब।
आम पल्लब ताहे किंकन सुझम्प ॥८॥

दिसि दिसि आनब कामिनि ठाट।
चौदिस पसारब चाँदक हाट ॥१०॥

विद्यापति कहे पूरब आस।
दुइ एक पलक मिलब तुअ पास ॥१२॥

१—आओब = आवेंगे। ई = यह। मझु = मेरे। गेहे = घर में। जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर में करूँगी। ३—कनअ-कुम्भ = सोने के घड़े। कुच जुग = दोनों कुच। ४—आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण-रूप में धरूँगी = मेरी आँखों में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५—वेदी = चौका। अंक में = गोदी में। ६—केश को विच्छिन्न कर (खोलकर) उसमें झाड़ करूँगी। ७—कदलि = केला। गरुअ = विशाल। सुझम्प = आन्दोलित, शब्दित। ९—आनब = लाऊँगी। ठाट = समूह। हाट = बाजार (स्त्रियों के मुख-चन्द्रमा ही चन्द्रमा-से दीख पड़ेंगे।)

[२२५]

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल।
विरह जनित दुख सब दुर गेल ॥२॥
कर धरि बइसाओल विचित्र आसन।
रमन-रतन स्याम रमनी रतन ॥४॥
बहु बिधि बिलसए बहु बिधि रंग।
कमल मधुप जनि पाओल संग ॥६॥
नयन नयन दुहु बयन बयान।
दुहु गुन दुहु गुन दुहुजन गान ॥८॥
भनइ विद्यापति नागरि भोर।
त्रिभुवनविजयी नागर चोर ॥१०॥

[२२६]

चिर दिन से बिहि भेल अनुकूल रे।
दुहु मुख हेरइत दुहु से आकुल रे ॥२॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धरु रे।
दुहु अमरामृत दुहु मुख मरु रे ॥४॥
दुहु तनु काँपइ मदन उछल रे।
किन किन किन खरि किंकिनि रुचल रे ॥६॥
जाइतेहि रिमत नव मदन मिलल रे।
दुहु पुलकावलि ते लहु लहु रे ॥८॥
रस-मातल दुहु बसन खसल रे।
विद्यापति रस-सिन्धु उछलल रे ॥१०॥

=बिठलाया। १—भोर=बेसुध।

[२२७]

सुनु रसिया,
अब न बजाऊ विपिन बँसिया ॥२॥

बार बार चरनारविंद गहि
सदा रहब बनि दसिया।
कि छलहुँ कि होएब के जाने
वृथा होएत कुल हँसिया ॥३॥

अनुभव ऐसन मदन-भुजंगम
हृदय मोर गेल डसिया।
नंद-नन्दन तुम सरन न त्यागब
बलु जग होए दुरजसिआ ॥६॥

विद्यापति कह सुनु वनितामनि
तोर मुख जीतल ससिआ।
धन्य धन्य तोर भाग गोआरिनि
हरि भजु हृदय हुलसिआ ॥८॥

८—स्मित=हँसते हुए। पुलकावलि = रोमांच। १०—मातल=मत्त बना। खसल = गिर पड़ा।

१—रसिआ = रसिक। २—बँसिया = वंशी। ३—दसिआ = दासी। ४—कि = क्या। छलहुँ = थी। होएब = होऊँगी, बनूँगी। से = यह बात। के = कौन। कुल हँसिया = कुल की निन्दा। २—ऐसन = इस प्रकार। मदन-भुजंगम = काम-रूपी सर्प। गेल डसिया = डँस गया, काट गया। ६—बलु = भले ही, बरंच। दुरजसिया = अपयश, कलंक। ७—वनितामनि = स्त्रियों में रत्न समान। जीतल = जीत लिया। ससिआ = चन्द्रमा।

[२२८]

सखि, कि पुछसि अनुभव मोय।
से हो पिरित अनुराग बखानिए
तिल तिल नूतन होय ॥२॥

जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति पथ परस न भेल ॥४॥

कत मधु जामिनि रभस गमाओल
न बूझल कइसन केल।
लाख लाख जुग हिय हिय राखल
तइओ हिय जुड़ल न गेल ॥६॥

कत बिदगध जन रस अनुमोदइ
अनुभव काहु न पेख।
विद्यापति कह प्रान जुड़ाएत
लाखे न मिलल एक। ८॥

१—कि पुछसि = क्या पूछती हो ? मोय = मुझसे। २—सेहो = वही। तिल तिल = क्षण-क्षण। निहारल = देखा। स्रवनहि = कानों से। परस = स्पर्श। ५—मधु जामिनि = वसन्त की रात। रभस = कामक्रीड़ा। गमाओल = बिता दी। केल = केलि। तइओ = तो भी। जुड़ल न गेल = न जुड़ाया, ठंढा न हुआ। ७—बिदगध = विदग्ध, रसिक। रस अनुमोदइ = रस का उपभोग करते हैं। पेख = देखना। ८—लाख में एक न मिला।

प्रार्थना और नचारी

[२२६]

विदिता देवी बिदिता हो
अविरल - केस सोहन्ती।
एकानेक सहस को धारिनि
जरि रंगा पुरनन्ती ॥ २॥
कजल रूप तुअ काली कहिए
उजल रूप तुअ बानी।
रविमंडल परचंडा कहिए
गंगा कहिए पानी ॥ ४ ॥
ब्रह्मा - घर ब्रह्मानी कहिए
हर - घर कहिए गौरी।
नारायन - घर कमला कहिए
के जान उतपत तोरी ॥ ७ ॥
विद्यापति कविवर एहो गाओल
जाचक जन के गति।
हासिनि देइ पति गरुड़नरायन
देवसिंह नरपति ॥ ८॥

[२३०]

कनक - भूधर - शिखर वासिनि
चन्द्रिका चय चारु हासिनि
दशन कोटि विकास, वंकिम-
तुलित चन्द्रकले।
क्रुद्ध - सुररिपु वलनिपातिनि
महिष-शुम्भ - निशुम्भ घातिनि
भीत - भक्तभयापनोदन—
पाटल प्रबले ॥ २ ॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणि
दुर्ग मारि विमर्द कारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे।

गगन मंडल गर्भगाहिनि
समर - भूमिषु सिंहवाहिनि
परसु - पाश - कृपाण-सायक—
शंख-चक्र-धरे॥ ४॥

अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित वर्द्धित-
पारणा रभसे

संसारबन्ध - निदानमोचिनि
चन्द्र - भानु - कृशानु - लोचनि
योगिनी गण गीत शोभित-
नृत्यभूमि रसे॥ ७॥

जगति पालन - जनम - मारण
रूप कार्य सहस्र कारण
हरि विरंचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे।

सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति- कृतस्तुति
तोषिते सिवसिंह भूपति
कामना फलदे॥८॥

[२३१]

जय जय संकर जय त्रिपुरारि।
जय अध पुरुष जयति अध नारि ॥२॥

आध धवल तनु आधा गोरा।
आध सहज कुच आध कटोरा ॥४॥

आध हड़माल आध गजमोती।
आध चानन सोहे आध विभूती ॥६॥

आध चेतन मति आधा भोरा।
आध पटोर आध मुँज डोरा ॥८॥

आध जोग आध भोग विलासा।
आध पिधान आध नग वासा ॥१०॥

आध चान आध सिंदुर सोभा।
आध विरूप आध जग लोभा ॥१२॥

भने कविरतन विधाता जाने।
दुइ कए बाँटल एक पराने ॥१४॥

[२३२]

भल हर भल हरि भल तुअ कला।
खन पित बसन खनहिं बघछला ॥२॥

खन पंचानन खन भुजचारि।
खन संकर खन देव मुरारि ॥४॥

खन गोकुल भए चराइअ गाय।
खन भिखि माँगिए डमरु बजाय ॥६॥

खन गोविंद भए लिअ महादान।
खनहि भसम भरु काँख वोकान ॥८॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणि
दुर्ग मारि विमर्द हारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे।

गगन मंडल गर्भगाहिनि
समर - भूमिपु सिंहवाहिनि
परसु - पाश - कृपाण-सायक—
शंख-चक्र-धरे ॥ ४ ॥

अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित बर्द्धित-
पारणा रभसे

संसारबन्ध - निदानमोचिनि
चन्द्र - भानु - कृशानु - लोचनि
योगिनी गण गीत शोभित-
नृत्यभूमि रसे। ७ ॥

जगति पालन - जनम - मारण
रूप कार्य सहस्र कारण
हरि विरंचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे।

सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति- कृतस्तुति
तोषिने सिवसिंह भूपति
कामना फलदे ॥८॥

विन संक रहइ भीख माँगिए पए
गुन गौरव दुर जाय ॥२॥
निरधन जन बोलि सब उपहासए
नहि आदर अनुकम्पा ।
तोंहिं सिव आक धतुर फुल्ल पाओल ।
हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥
खटँग काटि हर हर जे वनाविअ
त्रिसुल तोड़िय करु फार ।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ
पाटए सुरसरि धार ॥६॥
भन विद्यापति सुनहु महेसर
इ लागि कएलि तुअ सेवा ।
एतए जे वर से वर होअल
ओतए जाएव जनि देवा ॥८॥

[२३८]

हम नहि आजु रहव यहि आँगन
जौं बुढ़ होएत जमाई, गे माई ।
एक त बइरि भेल बीध विधाता
दोसर धिया केर बाप ।
तेसरे बइरि भेल नारद बाभन ।
जे बूढ़ आनल जमाई, गे माई ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोरब
दोसरे तोरब रुंडमाल
बरद हाँकि बरिआत बैलाएब
धिआलए जाएव पराई, गे माई ॥

एक सरीर लेल दुइ वास।
खन बैकुंठ खनहि कैलास ॥१०॥
भनइ विद्यापति बिपरित बानि।
ओ नारायण ओ सूलपानि ॥१२॥

[२३३]

आगे माई एहन उमत बर लैल हिमगिरि
देखि देखि लगइछ रंग।
एहन उमत बर घोडबो न चढ़इक
जो घोड़ रँग रँग जंग ॥२॥
बाघक छाल सौं बसहा पलानल
साँपक भीरल तंग।
डिमिक डिमिक जे डमरु बाजइन
खटर-खटर करु अंग ॥४॥
भकर भकर जे भाँग भकोसथि
छटर पटर करु गाल।
चानन सौं अनुराग न थिकइन
भसम चढ़ावथि भाल ॥६॥
भूत पिसाच अनेक दल साजल
सिर सौं बहि गेल गंग।
भनइ विद्यापति सुनु ए मनाइनि
थिकाह दिगम्बर अंग ॥८॥

[२३४]

बेरि बेरि अरे सिव मौं तोय बोलौं
फिरसि करिअ मन माय।

एकसर जोहए जाएब कौन गती ।
ठेसि खसब मोरि होत दुरगती ।।६।।
नंदनबन विच मिलल महेस ।
गौरी हरखित भेल छुटल कलेस ।।८।।
भनइ विद्यापति सुनु हे सती ।
इहो जोगिया थिक त्रिभुवन पती ।।१०।।

[२३८]

जोगिया एक हम देखलौं गे माई ।
अनहद रूप कहलो नहि जाई ।।२।।
पंच बदन तिन नयन बिसाला ।
बसन बिहुन ओढ़न बघछाला ।।४।।
सिर वहे गंग तिलक सोहे चंदा ।
देखि सरूप मेटल दुखदंदा ।।६।।
जाहि जोगिया लै रहलि भवानी ।
मन आनलि बर कोन गुन जानी ।।८।।
कुल नहि सिल नहि तात महतारी ।
बएस हिनक थिक लछु जुग चारी ।।१०।।
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ।
एहो जोगिया थिका त्रिभुवन दानि ।।१२।।

[२३९]

सिव हो, उतरब पार कओन विधि ।
लोढ़ब कुसुम तोरब बेलपात
पुजब सदासिव गौरिक सात ।।
बसहा चढ़ल सिव फिरहु मसान ।
भँगिया जरठ दरदो नहि जाना ।।

धोती लोटा पतरा पोथी
सेहो सभ लेथन्हि छिनाई।
जौं किछु बजता नारद बाभन
दाढी धए देब घिसिआई, गे माई॥
भनइ बिद्यापति सुनु हे मनाइन
दृढ करु अपन गेआन।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी बिआहू
गौरी हर एक समान, गे माई॥

[२३६]

नाहि करब बर हर निरमोहिया।
बित्ता भरि तन बसन न तिन्हका
बघछल कौंख तर रहिया॥२॥
बन बन फिरथि मसान जगावथि
घर आँगन ओ बनौलनि कहिआ।
सासु ससुर नहि ननद जेठौनी
जाए बैसति धिया ककरा ठहिया॥४॥
बूढ़ बड़द ढकपाल गोल एक
सम्पति भाँगक झोरिया।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइन
सिव सन दानी जगत के कहिया॥६॥

[२३७]

कतए गेला मोर बुढ़वा जती।
पीसल भाँग रहल सेइ गती॥ २॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती।
आज लगाइ देन कौन उदगती॥४॥

जब जम किंकर कोपि पठाएत
तखन के होत धरहरिया ।।६।।
भन विद्यापति सुकवि पुनीत मति
संकर विपरीत वानी।
असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करु दिअ सुल पानी ।। ५ ।।

[२४२]

एत जप-तप हम किअ लागि कैलहु
कथिला कएलि नित दान।
हमरि धिया के एहो वर होयता
अब नहि रहत परान ।। २ ।।
हर के माय बाप नहि थिकइन
नहि छइन सोदर भाय।
मोर धिया जौं सासुर जैती
वइसति ककर लग जाय ।। ४ ।।
घास काटि लौती वसहो चरौती
कुटती भाँग धथूर।
एको पल गौरी वैसहु न पौती
रहती ठाढ़ि हजूर ।। ६ ।।
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दृढ़ करु अपन गेआन।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ।। ८ ।।

जप तप नहि कैलहुँ नित दान।
बित गेल तिन पन करइत आन ॥
भन विद्यापति सुनु हे महेस।
निरधन जानिके हरहु कलेस ॥

[२४०]

लखन देखल हर हो गुननिधी।
पुरल सकल मनोरथ सब विधि ॥२॥
वसहा चढ़ल हर हो बुढ़ जती।
काने कुंडल मोभे गले गजमोती ॥४॥
बइसल महादेव चौका चढ़ी।
जटा छिरिआओल माभाल भरी ॥६
विधिकरु विधिकरु विधिकरु कहू।
विधि न करइ स हर हो हठ धहू। ८॥
विधिए करइत हर हो धुमि खसु।
मँसरि खसल फनि सिरि गौरी हँसु ॥१०॥
केओ नहि किछु कहइन्हि दिनकहूँ।
पुरबिल लिखल छला मोर पहूँ ॥१२॥
कवि विद्यापति गाओल।
गौरी उचित वर पाओल ॥१४॥

[२४१]

हर जनि बिसरब मो ममिता,
हम नर अधम परम पतिता।
तुअ सन अधमउधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता ॥२॥
जम के द्वार जवाब कओन देब
जखन बुझव, निजगुन कर बतिया।

अमिय चुबिअ भुमि खसत बघम्बर जागत हे ॥
होएत बघम्बर बाघ बसहा धरि खाएत हे ॥
सिरसँ ससरत साँप पुहुमि लोटाएत हे ॥
कार्त्तिक पोसल मजूर सेहो धरि खाएत हे ॥
जटा सँ छिलकत गंग भूमिपर पाटत हे ॥
होएत सहस्र मुखि धार समेटलो न जाएत हे ॥
मुंडमाल टुटि खसत, मसानी जागत हे ॥
तोहें गौरी जएब्रह् पराए नाच के देखत हे ॥
भनहि विद्यापति गाओल गावि सुनाओल हे ॥
राखल गौरी केर मान चारु बचाओल हे ॥

[२४६]

आगे माइ, जोगिया मोर जगत सुखदायक
दुख ककरो नहि देल ।
दुख ककरो नहि देल महादेव
दुख ककरो नहि देल ।
यहि जोगिया के भाँग भुलैलक
धतुर खोआइ धन लेल ॥
आगे माइ, कातिक गनपति दुइ जन बालक
जग भरि के नहि जान ।
तिनका अभरन किछुओ न थिकइन
रति यक सोन नहि कान ॥
आगे माइ, सोना रूपा अनका सुत अभरन
आपन रुद्रक माल ।
अपना सुत ला किछुओ ना जुरइनि
अनका ला जंजाल ।
आगे माइ, छनमे हेरथि कोटि धन बकसथि
ताहि देवा नहि थोर ।

[२४३]

कखन हरब दुख मोर
हे भोलानाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाएल
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ।
यहि भव-सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु कर आए, हे भोलानाथ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ।

[२४४]

यहि विधि बयाहन आयो
एहन बाउर जोगी।
टपर-टपर कए बसहा आएल खटर खटर रुँडमाल॥
भकर भकर सिव भांग भकोसथि डमरू लेल कर लाय॥
ऐपन मेटल पुरइर फोरल बर किमि चौमुख दीप॥
धिया लै मनाइनि मंडप बइसलि गाबिए जनु सखि गीत॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस॥

[२४५]

आजु नाथ एक ब्रत महा सुख लागत हे
तोहें सिव धरु नट बेष कि डमरु बजाबहु हे॥
तोहें गौरी कहैछह नाचय हम कोना नाचब हे॥
चारि सोच मोहि होइ कोन विधि बाँचब हे॥

नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरषि देलन्हि रुँडमाल, गे माई।
एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सोवरनक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माई।
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनमां महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माई।

[२४६]

जानकी वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि, नहि जननि जनक नहि जाही ॥२॥
वसु नइहरा ससुरा के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेलि वही गाम ॥४॥
सासुक कोर मे सुतल जमाय।
समधि विलह तौं विलहल जाय ॥ ६॥
जाहि ओदर सँ वाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेल ॥८॥
भन विद्यापति सुकवि भान।
कवि के कवि कहुँ कवि पहचान ॥ १० ॥

भन विद्यापति सुनु हे मनाइनि
थिका दिगम्बर भोर ॥

[२४७]

जोगिया भँगवा खाइत भेला रँगिया
भोला बौड़हवा।
सबके ओढ़ावे भोला साल दुसलवा
आप ओढ़य मृगछलवा।
सबके खिलावे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धतुरबा॥
कोई चढ़ावे भोला अच्छत चानन
कोई चढ़ावे बेलपात॥
जोगिन भूतिन सिव के सँपतिया
भैरो बजावे मिरदंगिया।
भन विद्यापति जै जै संकर
पारबती गौरि सँगिया॥

[२४८]

जौं हम जनितहुँ भोला भेला ठगना
होइतहुँ राम गुलाम, गे माई।
भाइ बिभीखन बड़ तप कैलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माई।
पूरब पच्छिम एको नहि गेला
अचल भेला यहि ठाम, गे माई।
बीस भुजा दस माथ चढ़ाओल
भाँग दिहल भरि गाल, गे माई।

नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरषि देलन्हि रुँडमाल, गे माई।
एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सोवरनक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माई।
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनमों महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माई।

[२४६]

जानकी वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि, नहि जननि जनक नहि जाही ॥२॥
वसु नइहरा ससुरा के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेलि वही गाम ॥४॥
सासुक कोर मे सुतल जमाय।
समधि विलह तौं विलहल जाय ॥ ६॥
जाहि ओदर सँ वाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेल ॥८॥
भन विद्यापति सुकवि भान।
कवि के कवि कहँ कवि पहचान ॥ १० ॥

गंगा-स्तुति

[२५०]

बड सुख सार पाओल तुअ तीरे।
छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥ २॥
करजोरि बिनमओ बिमल तरंगे।
पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥ ४॥
एक अपराध छेमब मोर जानी।
परसल माय पाए तुअ पानी॥ ६॥
कि करब जत-तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने॥ ८॥
भनहि विद्यापति समदओं तोहि।
अन्त काल जनु बिसरह मोही॥ १०॥

[२५१]

ब्रह्मकमंडलु बास सुवासिनि
सागर नागर गृहवाले।
पातक महिष विदारण कारण
धृत करवाल बीचि-माले॥
जय जगे जय गंगे।
शरणागत भय भंगे॥
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित
कुसुम विचित्रित तीरे।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे॥
हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके।

प्रविलसदमरपुरी - पद दान-
विधान विनाशित शोके ॥
सहज दयालुतया पातकि जन
नरकविनाशन निपुणे ।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
विद्यापति कवि भणित गुणे ॥

कृष्ण-कीर्त्तन

[२५२]

माधव, कत तोर करब बड़ाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई ॥
जौं श्रीखंड सौरभ अति दुरलभ
तौं पुनि काठ कठोरे ।
जौं जगदीस निसाकर तौं पुनि
एकहि पच्छ इजोरे ॥
मनि समान औरो नहि दोसर
तनिकर पाथर नामे ।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह
की कहु ठामहि ठामे ॥
तोहर सरिस एक तोहँ माधव
मन होइछ अनुमाने ।
सज्जन जन सौं नेह कठिन थिक ।
कवि विद्यापति भाने ॥

[२५३]

माधव, बहुत मिनति कर तोय ।
दए तुलसी तिल देह समर्पिनु

दया जनि छाड़बि मोय।
गनइत दोसर गुन लेस न पाओबि
जब तुहुँ करबि बिचार।
तुहु जगत जगनाथ कहाओसि
जग बाहिर नइ छार॥
किए मानुस पसु पखि भए जनमिए
अथवा कीट पतंग।
करम बिपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसंग॥
भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइत इह भव-सिंधु।
तुअ पद-पल्लव करि अवलम्बन
तिल एक देह दिनबंधु॥

[२५४]

तातल सैकत वारि-विन्दु सम
सुत-मित-रमनि समाज।
तोहे विसारि मन ताहे समरपिनु
अब मझु हब कोन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहुँ जगतारन दीन दयामय
अतय तोहर बिसवासा।
आध जनम हम नींद गमायनु
जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि-रभस रँग मातनु
तोहे भजब कोन बेला॥

कत चतुरानन मरि मरि जाओत
न तुअ आदि अवसाना।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत
सागर लहरि समाना॥
भनइ विद्यापति सेष समन भय
तुअ विनु गति नहि आरा।
आदि अनादिक नाथ कहाओसि अब
तारन भार तोहारा॥

[२५५]

जतने जतेक धन पापे बटोरल
मिलि मिलि परिजन खाय।
मरनक वेरि हरि कोइ न पूछए
करम संग चलि जाय॥
ए हरि, वन्दौं तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि
पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु
जुवती मति मयँ मेलि।
अमृत तजि हलाहल किए पीअल
सम्पद आपदहि भेलि॥
भनइ विद्यापति नेह मने गनि
कहल कि बाढ़ब काज।
साँझक वेरि सेवकाई मँगइत
हेरइत तुअ पद लाज॥

—::o::—

विविध

[२५६]

व्यथा

माधव, कि कहव तोहर गेआन।
सुनहु कइलि जव रोप कयल तव
कर मूनल दुहु कान ॥२॥
आयल गमनक वेरि न नीन टरु
तइ किछु पुछिओ न भेला।
एहन करमहीनि हम सनि के घनि
कर से परसमनि गेला ॥४॥
जओं हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच - कंचन - गिरि - साँधि।
कौसल करतल वाहु-लता लए
दृढ़ करि रखितहुँ वाँधि ॥६॥
इ सुमिरिए जव जाओं मरिए तव
वूझि पड़ हृदय पपाने।
हिमगिरि - कुमरी चरन हृदय धरि
कवि विद्यापति भाने ॥८॥

[२५७]

प्रेम

फूल एक फुलवारि लाओल मुरारि।
जतने पटाओल सुवचन-वारि ॥२॥
चौदिस वान्हल सीलक आरि।
जिवे अवलम्वन करु अवधारि ॥४॥
ततहु फुलल फुल अभिनव पेम।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम।

अति अपरुब पुल परिनत भेल।
दुइ त्रिब अछल एक भए गेल ॥८॥
पिसुन-कीट नहि लागल ताहि।
साहस फल देल विहि निरवाहि ॥१०॥
विद्यापति कइ सुन्दर सेहु।
करिए जतन फलमत होए नेहु ॥१२॥

(२५८)

शिवसिंह का युद्ध

दूर दुग्गम दमसि भजेओ
गाढ़ गढ़ गूढ़िय गंजेओ
पातसाह ससीम सीमा
समर दरसओ रे ॥१॥
ढोल तरल निसान सद्दहि
भेरि कोहल संख नद्दहि
तीनि भुवन निकेत
केतकि सान भरिओ रे ॥२॥
कोह नीर पयान चलिओ
वायु मध्ये राय गरुओ
तरनि तेअ तुलाधरा
परताप गहिओ रे ॥३॥
मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ
धरनि पूरिय गगन झम्पिअ,
हाति तुरए पदाति पयभर
कमन सहिओ रे ॥४॥

तरल तर तरवारि रंगे
विज्जुदाम छटा तरंगे
घोर घन संघात बारिस-
काज दरसेओ रे ॥५॥

तुरए कोटिअ चाप चूरिअ
चारि दिसि सौं विदिस पूरिअ
विषम सार असाढ़ धारा
धरनि भरिओ रे ॥६॥

अन्ध कूअ कबन्ध लाइअ
फेरबी फफ्फरिस गाइअ
रुहिर मत्त परेत भूत
बैताल विछ्छलिओ रे ॥७॥

पार भइ परिपंथि गंजिअ
भूमि मंडल मुंड मंडिअ
चारु चन्द्र कलेव कीर्त्ति
सुकेत की तुलिओ रे ॥८॥

राम रूप स्वधर्म्म सिक्खिअ
दान दप्प दधीचि रक्खिअ
सुकवि नव जयदेव
भनिओ रे ॥९॥

देवसिंह नरेन्द नन्दन
शत्रु नरवइ कुल निकन्दन
सिंह सम सिवसिंह राया
सकल गुनक निधान गनिओ रे ॥१०॥

[२५६]

दृष्टकूट

हरि सम आनन हरि सम लोचन
हरि तहँ हरि वर आगी।
हरिहि चाहि हरि हरि न सोहावए
हरि हरि कए उठि जागी॥
माधव हरि रहु जलधर छाई
हरि नयनी धनि हरि-घरिनी जनि
हरि हेरइत दिन जाई॥
हरि भेल भार हार भेल हरि सम
हरिक वचन न सोहावे।
हरिहि पइसि जे हरि जे नुकाएल
हरि चढ़ि मोर बुझावे॥
हरिहि वचन पुनु हरि सयँ दरसन
सुकवि विद्यापति भाने।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा देवि रमाने॥

[२६०]

माधव, आब बुझल तुअ साजे।
पंच दून दह गुन सए गुन
से देलह कोन काजे॥
चालिस चारि काटि चौठा
से हम सेपिया मोरा।
से निरखत मुख पेखत चौदिस
करत जनम के ओरा॥

साठिहु मह दह बिन्दु विवरजित
के से सहत उपहासे।
हम अबला अब पहुक दोसरे
दुइ बिन्दु काय गरासे॥
नव बुंदा दए नवए बाम कए
से उर हमर पराने।
कपटी बालमु हेरि न हेरए
कारन के नहि जाने॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
ताहि करथि के बाधा।
अपन जीव दए परक बुझाइअ
नाल कमल दुइ आधा॥

[२६१]

'कुसुमित कानन' कुंजे वसी।
नयनक काजर घोरि मसी॥
नखसौं लिखल नलिनि दल पात।
लीखि पठाओल आखर सात॥
पहिलहि लिखलनि पहिल वसंत।
दोसरें लिखलनि तेसरक अंत।
लिखि नहि सकली अनुज वसंत।
पहिलहि पद अछि जीवक अंत॥
भनहि विद्यापति आखर लेख।
बुध-जन हो से कहए बिसेख॥

[२६२]

द्विज आहर आहर सुत नंदन
सुत आहर सुत रामा।

बनज बंधु सुत सुत दए सुन्दरि
चललि संकेतक ठामा ॥
माधव, बूझल कथा विसेखी।
तुअ गुन लुबुधलि प्रेम पिआसलि
साधस आइलि उपेखी ॥
हरि अरि अरि पति ता सुत वाहन
जुवति नाम तसु होई।
गोपति पति अरि सह मिलु वाहन
विरमति कबहुँ न होई ॥
नागर नाम जोग धनि आश्रय
हरि अरि अरि पति जाने।
नौमि दसाइ एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ॥

बाल विवाह

[२६३]

पिया मोर बालक हम तरुनी।
कौन तप चुकलौंह भेलौंह जननी ॥
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर ॥
पिया के देखैत मोर दगध सरीर ॥
पिया लेली गोद कै चललि बजार।
हटिया के लोग पूछे के लागु तोहार ॥
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाइ ॥
पुरुब लिखल छल बालमु हमार ॥
बाटरे बटोहिया कि तुहु मोरा भाइ।
हमरो समाद नैहर लेने जाउ।

कहिहुन घावा के किनए धेनु गाइ ।
दुधवा पिआइकें पोसता जमाइ ॥
नहि मोर टका अछि नहि धेनु गाइ ।
कौन विधि पोसव वालक जमाइ ॥
भनइ विद्यापति सुनु व्रजनारि ॥
धीरज धरह त मिलत मुरारि ।

परकीया (स्वयंदूतिका)

[२६४]

अपर पयोधि मगन भेल सूर ।
नखि-कुञ्ज-संकुल वाट विदूर ॥
नर परिहरि नाविक घर गेल ।
पथिक गमन पथ संसय भेल ॥
अनतए पथिक करिअ परवास ।
हमे धनि एकलि कंत नहि पास ॥
एक चिंता अओक मनमथ सोस ।
दसमि दसा मोहि कओनक दोस ॥
रयनि न जाग सखी जन मोर ।
अनुखन सगर नगर भम चोर ॥
तोहे तरुनत हम विरहिन नारि ।
उचितहु वचन उपज कुलगारि ॥
वामा वचन वाम पथ धाव ॥
अपन मनोरथ जुगुति वुझाव ॥
भनइ विद्यापति नारि सुजानि ।
भल कए रखलक दुहु अनुमानि ॥

[२६५]

हम जुवती पति गेल्गाह विदेस ।
लग नहि वसए पड़ोसियाक लेस ॥

सासु दोसरि किछुओ नहि जान ।
आँखि रतौंधी सुनए नहि कान ॥

जागह पथिक जाह जनु भोर ।
राति अँधार गाम बड़ चोर ॥

सपनहु भाँरि न दअ कोतवार ।
काहु क केओ नहि करए विचार ॥

अधिप न कर अपराधहु साति ।
पुरुष महते सब हमर सजाति ॥

विद्यापति कवि यह रस गाव ।
उकुतिहु अबला भाव जनाव ॥

[२६६]

(विद्यापति की मृत्यु)

दुल्लहि तोहरि कतए छथि माय ।
कहुन ओ आवथु एखन नहाय ॥

वृथा बुझथु संसार विलास ।
पल पल नाना तरहक त्रास ॥

माय बाप जौं सद्गति पाव ।
सतति कौं अनुपम सुख आव ॥

विद्यापतिक आयु अवसान ।
कातिक धवल त्रयोदसि जान ॥

॥ इति ॥